अंक 13, 2024

मत्स्य लोक

भाकृअनुप
ICAR

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

भाकृअनुप-राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो

परिकल्पना

❖ बौद्धिक संपदा संरक्षण, सतत उपयोग और भावी पीढ़ी के लिए मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का आकलन और संरक्षण

मिशन

❖ साझेदारी और अत्याधुनिक तकनीकों की परिचालन रणनीतियों का उपयोग करके मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का संग्रह, सूचीकरण और प्रलेखन

अधिदेश

❖ मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का अन्वेषण, लक्षण वर्णन और सूचीकरण

❖ प्राथमिकता वाली प्रजातियों के संरक्षण और उपयोग के लिए मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का अनुरक्षण और परिरक्षण

❖ जोखिम मूल्यांकन और मत्स्य स्वास्थ्य सहित स्वदेशी और विदेशज जननद्रव्य का मूल्यांकन

मत्स्य लोक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो की वार्षिक हिन्दी पत्रिका अंक, 13, 2024

प्रकाशक
डॉ. उत्तम कुमार सरकार
निदेशक, भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो

संपादकीय मंडल
डॉ. उत्तम कुमार सरकार
डॉ. ललित कुमार त्यागी
डॉ. ताराचन्द कुमावत
श्री सुभाष चन्द्र
डॉ. अखिलेश कुमार मिश्र
श्री अभिषेक कुमार सिंह, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

मुद्रकः एपीपी प्रेस, लखनऊ

प्रकाशन एवं समन्वयन
डॉ. पुण्यव्रत दास पुस्तकालय
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो
कैनाल रिंग रोड, डाकघर–दिलकुशा, लखनऊ–226002, उत्तर प्रदेश, भारत
ईमेलः director.nbfgr@icar.gov.in
वेबसाइटः https://www.nbfgr.res.in/

ISSN: 1656-2454-5457

© भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो
उद्धरणः भाकृअनुप–रा.म.आनु.सं. ब्यूरो, 2024. मत्स्य लोक, अंकः 13,
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ, पृष्ठ 88

अस्वीकरणः मत्स्य लोक पत्रिका में प्रकाशित आलेखों एवं रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। प्रकाशक या संपादकीय मंडल का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

मुख पृष्ठ चित्रः भाकृअनुप–रा.म.आनु.संसा. ब्यूरो की कुछ गतिविधियों का चित्रण

पार्श्व पृष्ठ चित्रः भाकृअनुप–रा.म.आनु.सं. ब्यूरो, लखनऊ का विहंगम दृश्य (फोटो सौजन्यः रा.म.आनु.सं. ब्यूरो, लखनऊ)

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो की वार्षिक हिन्दी पत्रिका मत्स्य लोक के आगामी अंक हेतु लेख एवं रचनाएं आमंत्रित है।

निदेशक का संदेश

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के तत्वावधान में कार्य करने वाला एक अग्रणी संस्थान है। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो में हम निरंतर प्रयासरत हैं कि मत्स्य और जलीय संसाधनों के संरक्षण, संवर्धन और सतत प्रबंधन में नवीनतम अनुसंधान, तकनीक, और ज्ञान का विस्तार हो। इस दिशा में अनेक चुनौतियाँ हैं, जैसे कि जलवायु परिवर्तन के प्रभाव, प्रजातियों का अतिदोहन, जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में प्रदूषण, आक्रामक विदेशज प्रजातियों का प्रसार एवं रोग, और प्राकृतिक आवासों का ह्रास, जो जैवविविधता के संरक्षण एवं इसके सतत उपयोग के प्रयासों में अवरोध उत्पन्न कर रहे हैं। इन चुनौतियों का सामना करते हुए, संस्थान द्वारा वैज्ञानिक अनुसंधान और नीति निर्माण में योगदान देने का प्रयास किया जा रहा है, ताकि देश की जलीय जैवविविधता का सतत और समावेशी विकास संभव हो सके।

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा प्रकाशित हो रही वार्षिक पत्रिका 'मत्स्य लोक 2024' का यह 13वां अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष हो रहा है। इस विशेषांक का उद्देश्य 'विकसित भारत 2047' के संदर्भ में एक दीर्घकालिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करना है, जिसमें भारतीय जलीय जैवविविधता और मत्स्य प्रबंधन के सभी प्रमुख पहलुओं पर गहन चिंतन किया गया है। इस अंक में सम्मिलित विषयों का चयन न केवल वर्तमान चुनौतियों और अनुसंधान क्षेत्रों पर आधारित है, बल्कि इनमें भविष्य की आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए मार्गदर्शन का भी समावेश है। पत्रिका में न केवल मात्स्यिकी तकनीकों के विकास और उनके प्रासंगिक अनुप्रयोगों पर विस्तृत जानकारी दी गई है, बल्कि सामाजिक–आर्थिक मुद्दों का भी विश्लेषण किया गया है जो मत्स्य जैवविविधता के संरक्षण और सतत उपयोग के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। यह अंक भविष्य में मात्स्यिकी क्षेत्र में नवीन संभावनाओं को प्रदर्शित करता है, और इसके लेख अनुसंधान समुदाय, नीति–निर्माताओं, तथा समाज के सभी वर्गों के लिए प्रासंगिक हैं। इसके अतिरिक्त, यह अंक उन नीतिगत और व्यावहारिक सुझावों पर भी प्रकाश डालता है जो अपार संभावनाओं से भरे भारतीय जलीय जैवविविधता और मत्स्य संसाधनों के सतत प्रबंधन में सहायता प्रदान करेंगे।

मुझे विश्वास है कि 'मत्स्य लोक 2024' का यह विशेषांक हमारे पाठकों के लिए अत्यंत ज्ञानवर्धक और प्रेरणादायी सिद्ध होगा। हमारी यह आकांक्षा है कि यह अंक भारतीय मत्स्य और जलीय संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन में एक सशक्त दिशा प्रदान करेगा और भविष्य की नीतियों को सशक्त बनाएगा। पत्रिका में संस्थान की गतिविधियों से संबन्धित वैज्ञानिक एवं लोकप्रिय लेख सम्मिलित किए गए हैं, जो कि संस्थान के द्वारा राजभाषा के संवर्द्धन के प्रति सदैव ऊर्जावान एवं निरंतर प्रयासरत रहने की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। इसके साथ ही, मैं पत्रिका के प्रकाशन हेतु संपादकीय मंडल एवं राजभाषा अनुभाग को उनके बहुमूल्य योगदान हेतु धन्यवाद व्यक्त करता हूं।

सभी पाठकों को 'मत्स्य लोक 2024' की ओर से मेरी शुभकामनाएँ और धन्यवाद!

यू. के. सरकार

डॉ. उत्तम कुमार सरकार
निदेशक

संपादकीयः विकसित भारत की परिकल्पना

"मत्स्य लोक 2024" के इस विशेषांक में हम आपको भारतीय जलीय जैवविविधता, मत्स्य अनुसंधान, और सतत मात्स्यिकी विकास से जुड़े विभिन्न पहलुओं से परिचित करवाने का प्रयास कर रहे हैं। यह अंक भारतीय जलीय संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन की दिशा में उठाए जा रहे कदमों का दस्तावेज़ है, जो हमारे पारिस्थितिक तंत्र की सुरक्षा और आर्थिक विकास दोनों के लिए अत्यधिक प्रासंगिक है। भारत ने हाल के वर्षों में मछली उत्पादन में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल की हैं। वित्तीय वर्ष 2022–23 में, देश ने लगभग 17.5 मिलियन मीट्रिक टन मछली उत्पादन के साथ विश्व स्तर पर तीसरे सबसे बड़े मछली उत्पादक देश की पहचान बनाई है, जो कि दुनिया के मछली उत्पादन में लगभग 8% का योगदान प्रदान करता है। जलीय कृषि में, भारत दूसरे स्थान पर है, जो इस क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान और प्रबंधन नीतियों की प्रगति का परिचायक है।

इस विशेषांक में, 'विकसित भारत 2047' की परिकल्पना के तहत सतत मत्स्य आनुवंशिक संसाधन प्रबंधन की संकल्पना पर विशेष ध्यान दिया गया है। इसमें सुबर्णरेखा और तीस्ता जैसी नदियों में पाई जाने वाली मछलियों की अद्वितीय जैवविविधता और उनके पर्यावास पर मानवजनित गतिविधियों के प्रभाव का आकलन किया गया है। सजावटी मछलियों की विविधता और भारत में उनकी वैश्विक मांग का आकलन करते हुए, यह अंक उनके संरक्षण और आर्थिक महत्व को भी रेखांकित करता है। इसके अतिरिक्त, भारतीय जल निकायों में गंभीर रूप से संकटग्रस्त स्थानिक प्रजातियों, विशेष रूप से कैटफिश जैसी मछलियों की सुरक्षा के प्रयासों पर चर्चा की गई है। मूंगा चट्टानों के संरक्षण, जोकि समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र का महत्वपूर्ण भाग हैं, पर केंद्रित लेख वर्तमान जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में इनके महत्व को दर्शाते हैं। साथ ही, उष्ण लहरों का जलीय जैवविविधता पर प्रभाव और भारत की इसमें योगदान की दिशा पर गहन विश्लेषण भी इस अंक में शामिल किया गया है। आधुनिक तकनीकों के प्रयोग जैसे कि आणविक मार्करों के उपयोग, आनुवंशिक सुधार, और स्थानिक मछलियों के कृत्रिम प्रजनन प्रयासों पर शोध इस क्षेत्र की क्षमताओं को नई ऊंचाई तक पहुंचा रहे हैं। इसके अतिरिक्त, महिला सशक्तिकरण और छोटे मछुआरों के सामाजिक–आर्थिक योगदान पर भी यह अंक विशेष ध्यान देता है। राष्ट्रीय मात्स्यिकी नीति के तहत "नीली क्रांति" की दिशा में भारत के प्रयासों को बल देने वाले विषय भी इस विशेषांक में शामिल हैं।

हमारा विश्वास है कि यह अंक शोधकर्ताओं, नीति निर्माताओं, और आम जनता को भारतीय जलीय संसाधनों की महत्ता और इनके सतत प्रबंधन के लिए आवश्यक उपायों को समझने में मदद करेगा। आपके सुझाव और समर्थन से हम इस प्रयास को और समृद्ध करेंगे।

धन्यवाद!

आपके सहयोग और ज्ञानवर्धन की आशा के साथ,

संपादक मंडल, मत्स्य लोक

डॉ. उत्तम कुमार सरकार | डॉ. ललित कुमार त्यागी | डॉ. ताराचन्द कुमावत
श्री. सुभाष चन्द्र | डॉ. अखिलेश कुमार मिश्र | श्री. अभिषेक कुमार सिंह

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	लेख	पृष्ठ सं.
1.	सतत मत्स्य आनुवंशिक संसाधन प्रबंधनः संस्थागत प्रयास एवं विकसित भारत की परिकल्पना उत्तम कुमार सरकार, ए. कादिरवेलपांडियन एवं ताराचन्द कुमावत	1
2.	मत्स्य जैवविविधता संरक्षण के लिए सामाजिक–आर्थिक मुद्दे क्यों महत्वपूर्ण हैं? ललित कुमार त्यागी, अमित सिंह बिष्ट, संजय कुमार सिंह एवं राजीव कुमार सिंह	6
3.	सुवर्णरेखा नदी की मत्स्य जैव एवं आवास विविधता की स्थिति पर सरंक्षण और प्रबंधन के दृष्टिकोण से एक परिप्रेक्ष्य अजेय कुमार पाठक, जसप्रीत सिंह, राघवेन्द्र सिंह, महेंद्र सिंह, प्रशांत दीपक, रवि कुमार, विकास कुमार, शुभम कनौजिया, शिखा एवं उत्तम कुमार सरकार	9
4.	लैंडस्केप जीनोमिक्सः प्रमुख अवधारणाएँ, आणविक मार्कर, चुनौतियाँ, और भविष्य के अनुसंधान की दिशा दिव्या मेरिन जोस, दिव्या पी. आर, सुभाष चन्द्र एवं उत्तम कुमार सरकार	13
5.	सह्याद्री पर्वतमाला की सजावटी मछलियों में समृद्ध विविधता और अनोखी स्थानिकता साईकृष्णन के.आर., अभिलाष सी.पी., सरथ वर्गीज, वेदिका मसराम, चरन रवि, एवं वी.एस. बशीर	18
6.	मछलियों की त्वचा श्लेष्मा का पारिस्थितिक कार्य प्रवीण मौर्य एवं कविता कुमारी	22
7.	मत्स्य एवं मत्स्य पालन पर उष्ण लहर का प्रभाव कांताराजन. जी, शुभम कनौजिया, रजनी चंद्रन, ताराचन्द कुमावत, संतोष कुमार, अजेय कुमार पाठक, ललित कुमार त्यागी एवं उत्तम कुमार सरकार	28
8.	मछली की शारीरिक कठोर संरचनाओं का मत्स्य संरक्षण एवं सतत प्रबंधन में अनुप्रयोग फराह बानो, वीरेंद्र कुमार, उत्तम कुमार सरकार एवं राजीव कुमार सिंह	32
9.	क्रिस्पर–कैस 9 जीनोम एडिटिंग तकनीकीः चुनौतियाँ एवं संभावनाएं अखिलेश कुमार मिश्र, मुरली एस., महेंदर सिंह, एल. मोग चौधरी, बासदेव कुशवाहा एवं रविन्द्र कुमार	35
10.	झारखण्ड राज्य में छोटे स्वदेशी कैटफिश मछलियों का प्रजनन और बीज संवर्धन रजनी गुप्ता एवं एच.एन. द्विवेदी	39
11.	भारत में मूंगा चट्टानेंः जैव विविधता, खतरे और संरक्षण प्रयास टीना जयकुमार टी.के एवं उत्तम कुमार सरकार	42

12. मात्स्यिकी एवं मत्स्य पालन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण ज्ञान–विज्ञान 47
शरद कुमार सिंह

13. गंभीर रूप से लुप्तप्राय स्थानिक कैटफिश *हेमिबाग्रस पंक्टेटस* का गहन अन्वेषणः संरक्षण स्थिरता रणनीतियाँ 54
वेदिका मसराम, साईकृष्णन के.आर., सरथ वर्गीज, अभिलाष सी.पी., चरन रवि एवं वी.एस. बशीर

14. मत्स्य पालन और जलीय कृषि में आणविक मार्करों का अनुप्रयोग 57
रश्मि वर्मा, अखिलेश कुमार मिश्र, बासदेव कुशवाहा, मुरली एस. एवं रविन्द्र कुमार

15. मत्स्य एवं जलीय कृषि का योगदान और सतत भविष्य के लिए एक दृष्टिकोण 61
वीरेंद्र कुमार, सत्यवीर, राजीव कुमार सिंह एवं उत्तम कुमार सरकार

16. तीस्ता नदी में आई बाढ़ का मछलियों पर प्रभाव 67
अमित सिंह बिष्ट, रजनी चंद्रन, कांताराजन जी., ललित कुमार त्यागी एवं उत्तम कुमार सरकार

17. मखाना की खेतीः किसानों की आजीविका उत्थान के लिए अत्यंत लाभकारी जलीय उत्पाद 72
डॉ. कुलदीप कुमार

18. भारत में तुलसी का महत्व एवं खेती 77
अभिषेक कुमार सिंह, ब्रह्म प्रकाश, ओम प्रकाश एवं राकेश कुमार सिंह

19. राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं कोष 82
रजनी चन्द्रन, उत्तम कुमार सरकार, राजीव कुमार सिंह एवं अमित सिंह बिष्ट

20. गंगा एक्वेरियम 85
मोनिका गुप्ता, राघवेंद्र सिंह, राजीव कुमार सिंह, देवनारायण एवं उत्तम कुमार सरकार

संस्थान द्वारा प्रकाशित महत्वपूर्ण हिंदी प्रकाशन 87

सतत मत्स्य आनुवंशिक संसाधन प्रबंधनः संस्थागत प्रयास एवं विकसित भारत की परिकल्पना

उत्तम कुमार सरकार, ए. कादिरवेलपांडियन एवं ताराचन्द कुमावत
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा प्रस्तावित प्रौद्योगिकीय हस्तक्षेपों पर विशेष जोर देते हुए मत्स्य जर्मप्लाज्म संसाधनों पर अनुसंधान की वर्तमान स्थिति और देश के मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों और संरक्षण के क्षेत्र में विकसित भारत 2047 के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एक रुरपेखा पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किए गए हैं।

मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण में भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो के प्रयासों की स्थिति

1. मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का दस्तावेज़ीकरण और अन्वेषण

वैश्विक मात्स्यिकी और जलकृषि उत्पादन 214 मिलियन टन के रिकॉर्ड उच्च स्तर पर है, जिसमें प्राथमिक क्षेत्र में लगभग 58.5 मिलियन लोग कार्यरत हैं। वर्तमान में, 256 कुलों से संबंधित 3235 देशी मछली प्रजातियां और भारतीय जल से 57 गण हैं जो वैश्विक मछली विविधता में लगभग 9% का योगदान है। आईयूसीएन वर्गीकरण के अनुसार, कुल 16 प्रजातियां गंभीर रूप से संकटापन्न, 75 संकटापन्न, 104 संवेदनशील, 2204 अल्प चिंताजनक और 327 डेटा कमी वाली प्रजातियां प्रलेखित की गई। फिनफिश संसाधनों के अलावा, क्रस्टेशियंस की लगभग 2934 प्रजातियां, मोलस्क की 5070 प्रजातियां और इचिनोडर्म की 765 प्रजातियां भी देश के जलीय आनुवंशिक संसाधनों में योगदान दे रही हैं।

संस्थान ने भारत की मछली विविधता पर एक डेटाबेस विकसित किया है जिसमें पूर्वोत्तर और पश्चिमी घाटों की 2953 फिनफिश प्रजातियों और आठ राज्यों तथा तीन पारिस्थितिक तंत्रों (पश्चिमी घाट, मन्नार की खाड़ी और वेम्बनाड झील) के लिए मछली विविधता चेकलिस्ट के बारे में जानकारी है। मत्स्य विविधता के प्रलेखन के लिए नदी प्रणालियों और देश के अन्य तटीय और द्वीपीय जल निकायों में अन्वेषणात्मक सर्वेक्षण किए जा रहे हैं। मछली आनुवंशिक संसाधनों के सूचीकरण को बढ़ाने के लिए, एक राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं कोष, जिसे राष्ट्रीय जैव विविधता प्राधिकरण द्वारा भारत के जैव विविधता अधिनियम, 2002 के तहत मछली संसाधनों के हस्तांतरण के लिए नोडल रिपोजिटरी एजेंसी के रूप में मान्यता प्राप्त और नामित किया गया है। इस सुविधा में फिनफिश प्रजातियों के लगभग 1200 वाउचर नमूने, 250 मोलस्क प्रजातियां, 19000 मछली ऊतक अभिग्रहण और 83 मछली सेल लाइन, 31 मछली प्रजातियों का क्रायोप्रिजर्व्ड मिल्ट और एक्स–रे रेडियोग्राफी सुविधा अभिगम हैं। मछली विविधता के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए, देश के देशी मछली जर्मप्लाज्म संसाधनों के साथ एक अत्याधुनिक गंगा एक्वेरियम की स्थापना की गई है। संस्थान के पास 11 सहयोगी भागीदारों के साथ पूर्वोत्तर क्षेत्र में सक्रिय अनुसंधान कार्यक्रम हैं, और मेघालय में गुफाओं सहित क्षेत्र की नदियों और जल निकायों में व्यवस्थित अन्वेषण किए जा रहे हैं। संस्थान प्राथमिकता वाले क्षेत्रों के तटीय जल निकायों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव पर काम करता है ताकि उचित न्यूनीकरण उपायों का सुझाव देने के लिए भेद्यता संकेतकों को समझा जा सके।

2. जर्मप्लाज्म संसाधनों का संरक्षण

आनुवंशिक विविधता को बनाए रखने, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और स्थायी जलीय कृषि और मत्स्य पालन का समर्थन करने के लिए संरक्षण महत्वपूर्ण है। सरकारी अधिकारियों द्वारा योजना बनाने और कार्यान्वित करने के लिए महत्वपूर्ण दृष्टिकोण हैं, जिनमें जीन बैंकिंग, चयनात्मक प्रजनन, और *स्व स्थाने* तथा *बहि स्थाने* संरक्षण रणनीतियों में शामिल हैं। मछली आनुवंशिकी, जीनोमिक्स, प्रजनन, संरक्षण जीव विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी के पहलुओं के साथ–साथ आनुवंशिक सुधार और टिकाऊ जलीय कृषि प्रथाओं के लिए नवीन प्रौद्योगिकियों के विकास के विकास के विकास के साथ–साथ भारत में जलीय कृषि, मत्स्य पालन और संबद्ध क्षेत्रों के विकास का समर्थन करने में अनुसंधान संगठनों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

प्राकृतिक वातावरण में स्टॉक बढ़ाने के लिए बड़े पैमाने पर कैप्टिव प्रजनन–सहायता प्राप्त रैंचिंग कार्यक्रम आयोजित किए गए थे। आईएमसी के वन्य भंडार से उत्पादित लगभग 850 लाख उन्नत फिंगरलिंग्स, कानपुर नगर, कानपुर देहात, इटावा, फर्रूखाबाद, प्रतापगढ़ और कन्नौज में गंगा नदी में खेती की गई। इसी तरह, *होराबग्रस नाइग्रिकोलारिस* (लुप्तप्राय), *एच. ब्राचिसोमा* (कमजोर), और *लेबियो दुसुमिएरी* के बच्चों को केरल की चालक्कुडी नदी में छोड़ा गया। आणविक उपकरण संरक्षण योजना और प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संरक्षण में सहायता के लिए प्रजातियों और जनसंख्या स्तरों पर आणविक मार्कर विकसित किए गए। महत्वपूर्ण मछली और शेलफिश प्रजातियों के उत्पन्न डीएनए बारकोड विकसित किए गए, और डीएनए बारकोडिंग के आधार पर कानूनी विवादों को हल किया गया, अर्थात, पोम्फ्रेट (*पंपस चिनेंसिस*), लुप्तप्राय और वन्यजीव–संरक्षित व्हेल शार्क (*राइनकोडोन टाइपस*), और समुद्री गाय (*डुगोंग डुगोंग*) की फोरेंसिक पहचान।

विभिन्न प्रजातियों में विकसित नवीन माइक्रोसेटेलाइट मार्कर आनुवंशिक भिन्नता अध्ययनों और प्राकृतिक आबादी के लक्षण वर्णन के लिए उपयोगी हैं जैसे कि *चन्ना मारुलियस, सिलोनिया सिलोंडिया, क्लारियस मागुर, टोर टोर, रैचीसेंट्रॉन कैनाडम, स्कोम्बेरोमोरस कॉमर्सन, पैरापेनियोप्सिस स्टाइलिफेरा,* आदि। 78 लुप्तप्राय और स्थानिक मीठे पानी की मछली प्रजातियों की साइटोजेनेटिक प्रोफाइलिंग उत्पन्न की गई। प्रत्येक राज्य में हितधारकों की भागीदारी के माध्यम से संरक्षण अनुसंधान और प्रसार के लिए प्रजातियों को प्राथमिकता देने के लिए, 'भारत की राज्य मछली' की अवधारणा पेश की गई। यह अवधारणा जलीय जैव विविधता संरक्षण के संदर्भ में कई आवश्यक उद्देश्यों को पूरा करती है और अमूल्य आनुवंशिक संसाधनों की सुरक्षा के लिए एक सामूहिक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करती है। कुल 22 राज्यों और 1 केंद्र शासित प्रदेश ने राज्य मछली प्रजाति घोषित की है, और उनके संरक्षण के लिए एक कार्य योजना लागू की जा रही है।

जीनोम परियोजनाओं और आणविक प्रौद्योगिकियों में हालिया प्रगति ने बड़ी मात्रा में जानकारी उत्पन्न की है जिसे आनुवंशिक वृद्धि, संसाधन संरक्षण और आनुवंशिक विविधता में कमी के लिए लागू किया जा सकता है। संरक्षण रणनीतियों और जनसंख्या प्रबंधन प्रथाओं की जांच करते समय आनुवंशिक विविधता और आनुवंशिक संरचना का मूल्यांकन आवश्यक है।

एनबीएफजीआर संरक्षण प्रजनन कार्यक्रमों, जर्मप्लाज्म के क्रायोप्रिजर्वेशन, आनुवंशिक लक्षण वर्णन, हैचरी प्रबंधन प्रथाओं, जागरूकता निर्माण और नीति समर्थन के संयोजन के माध्यम से मछली आबादी में आनुवंशिक हानि को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ये प्रयास भारत और उसके बाहर मछली आबादी की दीर्घकालिक स्थिरता और लचीलापन सुनिश्चित करने में मदद करते हैं। भारतीय मत्स्य संसाधनों के व्यापक जीनोमिक अध्ययन करने के लिए बुनियादी ढांचे और क्षमता को विकसित किया जाना चाहिए। इसलिए, आनुवंशिक संसाधनों के *स्व स्थाने* तथा *बहि स्थाने* संरक्षण के अलावा, जीनोमिक संसाधनों का विकास और उनका संरक्षण समग्र रूप से कठिनाइयों का समाधान करने के लिए आवश्यक हो जाता है।

3. विदेशज और स्वास्थ्य प्रबंधन

ट्रांसबाउंडरी जलीय जन्तु रोगों के उद्भव और प्रसार को संस्कृति प्रणालियों की गहनता और जीवित जलीय जानवरों और उनके उत्पादों के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए जिम्मेदार ठहराया गया है। जीवित मछली का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार नए भौगोलिक स्थानों पर विदेशी मछली रोगजनकों के प्रसार से जुड़ा हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप ज्ञात मेजबानों में या यहां तक कि उस क्षेत्र के मूल निवासी एक नए अतिसंवेदनशील मेजबान में भी भारी रुग्णता और मृत्यु दर हुई है। संसाधन सीमाएं (वित्तीय और मानव संसाधन), नीति और नियामक अंतराल (मौजूदा कानून और प्रवर्तन मुद्दे) और जटिल सामाजिक–आर्थिक गतिशीलता (सामुदायिक जागरूकता और आर्थिक निर्भरता) ने भारत में विदेशी मछली प्रजातियों के प्रबंधन में आने वाली चुनौतियों का उदाहरण दिया, जिससे इन प्रजातियों की शुरूआत और प्रसार में मदद मिली।

विदेशी मछली प्रजातियों अर्थात मछली प्रजातियों, मत्स्य स्वदेशी मछली जैव विविधता पर *ओरियोक्रोमिस निलोटिकस, क्लारियस गैरीपिनस, पंगासियानोडोन सुची* और *पियारेक्टस ब्रैचिपोमस* का मूल्यांकन किया गया। पारिस्थितिक तंत्र और देशी जलीय आनुवंशिक संसाधनों पर विदेशी मछलियों की व्यापकता और प्रभावों का मूल्यांकन मेटाडेटा विश्लेषण के माध्यम से किया गया, और पहचाने गए कुछ महत्वपूर्ण चालक संसाधनों, भविष्यवाणी, निवास स्थान परिवर्तन, रोग संचरण और आनुवंशिक घुसपैठ के लिए प्रतिस्पर्धा थे।

पहले चरण के सफल समापन के बाद, जलीय जन्तु रोगों पर राष्ट्रीय निगरानी कार्यक्रम–चरण II चलाया जा

रहा है, जिसमें 31 सहयोगी केंद्रों की भागीदारी के माध्यम से 19 राज्यों को शामिल किया गया है; 62 केंद्रों के माध्यम से अखिल भारतीय कवरेज जिसमें राज्य मत्स्य विभाग रिपोर्टिंग प्रक्रिया में सुधार करने के लिए शामिल हैं। इसके अलावा, समुद्री उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण देश भर में झींगा रोग निगरानी में शामिल है। मछली सेल लाइनों को पारंपरिक रूप से पूरे जानवरों पर जैविक अनुसंधान के लिए सबसे अच्छे विकल्पों में से एक के रूप में मान्यता दी गई है और मछली रोग निदान और वायरस अलगाव, साइटोजेनेटिक और जीनोटॉक्सिसिटी स्क्रीनिंग अध्ययन, विष विज्ञान और जीन अभिव्यक्ति अध्ययन, बायोबैंकिंग और क्रायोप्रिजर्वेशन अध्ययन, सेलुलर कृषि आदि से जुड़े अनुसंधान में व्यापक रूप से नियोजित हैं। फिश सेल लाइन्स (एनआरएफसी) की दुनिया की सबसे बड़ी राष्ट्रीय रिपोजिटरी ब्यूरो द्वारा स्थापित की गई थी और इसमें भारत सरकार की वित्तीय सहायता के साथ लगभग 83 फिश सेल लाइनें हैं।

ब्यूरो ने अन्य संस्थानों/एजेंसियों के सहयोग से मछली आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण और सतत उपयोग के लिए कई नीति दस्तावेज तैयार करने में योगदान दिया, जैसे, जर्मप्लाज्म एक्सचेंज के लिए दिशानिर्देश; जलीय एक्सोटिक्स और संगरोध पर राष्ट्रीय रणनीतिक योजना; राष्ट्रीय एक्सोटिक्स और संगरोध दिशानिर्देश; मीठे पानी की सजावटी मछलियों के लिए हरित प्रमाणन के लिए दिशानिर्देश और भारत में मछली और शंख बीज प्रमाणन के लिए मॉडल दिशानिर्देश।

प्रभावों को कम करने की रणनीतियों में बंदरगाहों, जलीय कृषि और संरक्षण स्थलों पर परिचय और स्थापना के उच्चतम जोखिम वाले स्थलों पर निगरानी गतिविधियों को प्राथमिकता देना, परिचय, स्थापना, प्रसार और प्रभाव की क्षमता के आधार पर प्रजातियों की प्राथमिकता, और व्यापक प्रभावों और डेटा प्रवाह में सुधार की समझ को सुविधाजनक बनाना शामिल है।

संस्थान द्वारा विकसित विशेष प्रौद्योगिकियाँ

मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों का सूचीकरण और प्रलेखन

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा अन्य साझेदार संगठनों के सहयोग से पिछले 10 वर्षों के दौरान 60 से अधिक मछली प्रजातियों, 8 झींगा प्रजातियों और 2 अद्वितीय मछली परजीवियों की खोज देश के मूल्यवान मछली आनुवंशिक संसाधनों के दस्तावेज़ीकरण के संदर्भ में एक मूल्यवान योगदान है। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा सटीक पहचान में सहायता के लिए 600 से अधिक मछली और शंखमीन प्रजातियों के लिए माइटोकॉन्ड्रियल और केन्द्रीय मार्करों का उपयोग करके डीएनए बारकोड विकसित किए गए।

विकसित जीनोमिक संसाधन

क्लेरियस मागुर, लेबियो रोहिता और *तेनुओलोसा इलिशा* और दो मछली रोगजनकों (तिलापिया लेक वायरस एवं *एफ़ानोमाइसेस इनवेडान्स*) के लिए पूरे जीनोम को समझा गया। भारतीय जल में वितरण की प्राकृतिक सीमा में आणविक मार्करों का उपयोग करके सोलह फिन और शेलफिश प्रजातियों का उनकी जनसंख्या आनुवंशिक संरचना के लिए अध्ययन किया गया। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा लगभग 50 प्राथमिकता वाली मछली प्रजातियों के लिए माइक्रोसैटेलाइट मार्कर विकसित किए गए। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा हितधारकों के लाभ के लिए चार ऑनलाइन डेटाबेस अर्थात् फिश कैरीओम, फिश बारकोड सूचना प्रणाली, फिश माइक्रोसैटेलाइट और फिश माइटोजीनोम विकसित किया गया।

देशी मछलियों के लिए कैप्टिव प्रजनन प्रोटोकॉल

संरक्षण और आजीविका विकास उद्देश्यों के लिए प्राथमिकता वाली और लुप्तप्राय मछलियों के कैप्टिव प्रजनन प्रोटोकॉल को मानकीकृत किया गया था। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा *सिरहिनस रेबा, चीताला चीताला, चन्ना पंक्टाटा, वालगो अट्टू, क्लारियास डुसुमिएरी, होराबाग्रस ब्राचिसोमा* और *लेबियो डुसुमिएरी* और विशेष रूप से लुप्तप्राय *कैटफ़िश, हेमीबाग्रस पंक्टैटस* और *होराबागरस निग्रीकोलारिस* जैसी मीठे पानी की मछलियों के लिए कैप्टिव प्रजनन हासिल किया गया। इसके अलावा, 15 सजावटी मछलियों और 2 समुद्री सजावटी झींगा, *थोर हैनानेंसिस* और *एंकिलोकारिस ब्रेविकारपालिस* के लिए कैप्टिव प्रजनन प्रोटोकॉल भी भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा विकसित किए गए।

लाइव जीन बैंकों की स्थापना

स्थानीय समुदाय के आजीविका विकास के लिए समुद्री सजावटी झींगा सहित स्वदेशी मछलियों के संरक्षण और संवर्धन के लिए भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा 8 सजीव जीन बैंक (लखनऊ, कोच्चि, लक्षद्वीप, ऐरोली, गौहाटी, तेलंगाना, इंफाल, तमिलनाडु)

की स्थापना की गई। इसके अलावा, भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा समुद्री सजावटी मछलियों के लिए अगत्ती, लक्षद्वीप में और समुद्री सजावटी क्लाऊन मछलियों के लिए तटीय महाराष्ट्र और पिचावरम, तमिलनाडु में स्थानीय समुदायों के आजीविका विकास के लिए सामुदायिक जलीय कृषि केंद्र स्थापित किए गए।

शुक्राणु क्रायोप्रिज़र्वेशन प्रोटोकॉल का विकास

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा 35 मछली प्रजातियों के लिए शुक्राणु क्रायोप्रिजर्वेशन प्रोटोकॉल विकसित किए गए और भारतीय मेजर कार्प्स के फ़ील्ड स्तर के सत्यापन के साथ 24 प्रजातियों के लिए बीज उत्पादित किए गए। भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा 12 प्रशिक्षण/क्षेत्र प्रदर्शनों में 370 हैचरी पेशेवरों को प्रशिक्षित किया गया जिससे 11 राज्यों की 38 हैचरियों में क्रायोप्रिजर्व्ड शुक्राणुओं से 126 लाख स्पॉन का उत्पादन किया गया। ब्यूरो ने व्यावसायिक पैमाने पर त्वरित फ्रीजिंग और क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए मान्य नए कैनिस्टर भी विकसित किए।

रोग निगरानी और मछली स्वास्थ्य प्रबंधन

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो द्वारा विकसित एक विशेष मोबाइल एप्लिकेशन में मत्स्य पालकों/किसानों द्वारा मत्स्य बीमारियों की समय पर रिपोर्टिंग के लिए "रिपोर्टफिशडिजीज" और विदेशी मछलियों की उपस्थिति का दस्तावेजीकरण करने के लिए "विदेशी मछली" शामिल है। ब्यूरो ने मीठे पानी की मछलियों में ऊमाइसीटीज़ रोगों के उपचार के लिए "ऊनील" नाम से एक फॉर्मूलेशन विकसित किया, जिसे मत्स्य पालकों/किसानों द्वारा सराहा गया।

अगले पांच वर्षों के लिए केंद्र–बिंदु

- भोजन और सजावटी मूल्य की पांच नई उम्मीदवार मछली/शेलफिश प्रजातियों, उन्नत उपभेदों और नई जलीय कृषि प्रणालियों के प्रजनन और बीज उत्पादन प्रौद्योगिकियों का विकास
- मछलियों में उच्च जोखिम और उभरती बीमारियों के प्रबंधन के लिए छह डायग्नोस्टिक किट/टीके/मछली स्वास्थ्य उत्पादों का विकास
- सात नई प्रजातियों का वर्णन
- दो प्राथमिकता वाली मछली प्रजातियों के लिए डब्ल्यूजीएस/आण्विक मार्कर का विकास

संस्थान में भविष्य के अनुसंधान परिप्रेक्ष्य आनुवंशिक संसाधनों के बढ़ते महत्व और उनके सतत उपयोग की अनिवार्यता द्वारा निर्देशित होते हैं। भारत के जलीय आनुवंशिक संसाधन उल्लेखनीय रूप से विविध और व्यापक हैं, उनके दस्तावेज़ीकरण और संरक्षण अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण प्रयासों और संसाधनों की आवश्यकता है। इसलिए, संस्थान संरक्षण चुनौतियों का प्रभावी ढंग से समाधान करने के लिए शोध योग्य क्षेत्रों और प्रजातियों को प्राथमिकता देने पर जोर देता है। संस्थान के अनुसंधान परिणामों के इच्छित लाभार्थियों में नीति निर्माता, संरक्षण प्राधिकरण, संसाधन–विशिष्ट अनुसंधान संस्थान, संगठन और शैक्षणिक संस्थान शामिल हैं जो आनुवंशिक संसाधन जानकारी उपयोग करने में शामिल हैं। उन्नत प्रौद्योगिकियों को निम्नलिखित अनुसंधान क्षेत्रों में नियोजित किया जाएगा।

विकसित भारत 2047 के लिए केंद्र–बिंदु

- मत्स्य आनुवंशिक संसाधनों की जांच, लक्षण वर्णन और सूचीकरण

तालिका 1. 2047 के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए नवीन/अत्याधुनिक प्रौद्योगिकियाँ

विशेषताएँ	प्रौद्योगिकियाँ	2047 का लक्ष्य
नई उम्मीदवार मछली/शेलफिश प्रजातियों के प्रजनन और बीज उत्पादन प्रौद्योगिकियों का विकास	उन्नत जलीय कृषि प्रणाली	10
मछलियों में उच्च जोखिम और उभरती बीमारियों के प्रबंधन के लिए डायग्नोस्टिक किट/टीके/मछली स्वास्थ्य उत्पादों का विकास	वैक्सीन/नैदानिक उपकरण	10
नई प्रजातियों का वर्णन	एकीकृत दृष्टिकोण	50
डब्ल्यूजीएस/आण्विक मार्कर विकास का विकास	उन्नत अनुक्रमण तकनीक	10
संरक्षण/कृषि योग्य प्रजातियों के लिए सीआरआईएसपीआर/कैस आधारित विशेषता सुधार	जीनोम संपादन	5
पारिस्थितिक तंत्र के लिए जलवायु लचीलापन मॉडल	उन्नत संगणना मॉडलिंग	10
कृषि योग्य प्रजातियों के लिए एआई–आधारित रोग भविष्यवाणी मॉडल	उन्नत संगणना मॉडलिंग	10
सामाजिक आउटरीच के लिए सामुदायिक जलकृषि केंद्र	उन्नत विस्तार विधियाँ	20

- आनुवंशिक संसाधन डेटाबेस की स्थापना और प्रगति
- प्राकृतिक आवासों और आनुवंशिक भंडारों में संरक्षण
- अंतर–विशिष्ट आनुवंशिक परिवर्तनशीलता का दस्तावेजीकरण करने हेतु जनसंख्या विशेषताओं की जांच
- प्राथमिकता वाली मछली प्रजातियों के जीनोमिक संसाधनों का सृजन
- आजीविका और प्रजातियों की असुरक्षा के विशेष संदर्भ में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का आकलन
- रोग निगरानी और एएमआर
- मानव संसाधन विकास
- प्रौद्योगिकी प्रसार
- पर्यावरण स्वास्थ्य मूल्यांकन और प्रजाति मॉडलिंग
- अत्याधुनिक क्षेत्रों पर अनुसंधान कार्यक्रम

वर्ष 2047 के लिए प्रस्तावित नवीन/अत्याधुनिक प्रौद्योगिकियों और लक्ष्यों का विवरण तालिका 1 में दिया गया है।

मत्स्य जैवविविधता संरक्षण के लिए सामाजिक-आर्थिक मुद्दे क्यों महत्वपूर्ण हैं?

ललित कुमार त्यागी, अमित सिंह बिष्ट, संजय कुमार सिंह एवं राजीव कुमार सिंह

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

मत्स्य जैवविविधता संरक्षण क्यों आवश्यक है?

मछली दुनिया भर में मनुष्यों के लिए प्रोटीन के प्रमुख स्रोतों में से एक है। भारत भाग्यशाली है कि यहाँ समुद्री, खारे पानी और मीठे पानी के पारिस्थितिकी तंत्रों की मछलियों की 3200 से अधिक प्रजातियाँ हैं। जो कि 57 गणों के 256 कुलों के अंतर्गत 1044 वंशों की है। हालाँकि, पिछले कुछ वर्षों में, बढ़ते मानवीय प्रभावों के कारण इस विशाल और विविध मछली जैव विविधता में गिरावट आई है।

मीठे पानी की मछलियों के आवास स्थल आम तौर पर महासागरों की तुलना में अधिक सीमित और कम प्रतिकूल होते हैं, और इनका अधिक आसानी से दोहन किया जाता है। इसलिए, एक के बाद एक क्षेत्रों में पकड़ में वृद्धि, मछली प्रजातियों की आबादी में कमी, और मत्स्य पालन के पतन के परिचित पैटर्न के बाद, दूसरे जल क्षेत्रों में दोहन की ओर रुख किया जाता है। वर्ष 2050 तक दुनिया की आबादी तेजी से बढ़ने और जीवन की गुणवत्ता के लिए बढ़ती उम्मीदों के कारण, मछली उत्पादों की मानवीय मांग भी तेजी से बढ़ेगी।

अपने वाणिज्यिक मूल्य के अलावा, आर्थिक और गैर–आर्थिक रूप से मूल्यवान मत्स्य प्रजातियाँ और उनकी आबादी जटिल अंतःक्रियाओं वाले पारिस्थितिकी तंत्र के रखरखाव और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं (Ecosystem services) की एक श्रृंखला के प्रावधान में, सक्रिय भूमिका निभाती है। इसलिए, अत्यधिक मछली पकड़ने के अप्रत्यक्ष प्रभाव, जलीय पारिस्थितिकी तंत्र संरचना और कार्य पर अधिक महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकते हैं। इस प्रकार, मछली जैव विविधता में गिरावट के बड़े प्रभाव हम वर्तमान में जितना जानते हैं, उससे कहीं अधिक गंभीर हैं और अभी तक उनकी कल्पना, अनुमान और सम्पूर्ण मूल्यांकन नहीं किया जा सका है।

किसी भी समस्या के लिए व्यावहारिक समाधान तैयार करने और उसे लागू करने के लिए, हमें समस्या की जड़ तक पहुँचने की आवश्यकता है। मछली की जैव विविधता के नुकसान की समस्या कोई अपवाद नहीं है। मनुष्य भोजन, ऊर्जा, निर्माण, दवा और बहुत कुछ पदार्थों व सेवाओं के लिए जैविक संसाधनों पर निर्भर करता है। हजारों वर्षों से जैव विविधता और मनुष्यों के बीच घनिष्ठ और परस्पर सहायक संबंध रहे हैं। जिन जैविक संसाधनों पर लोग निर्भर हैं, उनका नवीकरणीय होने का महत्वपूर्ण चरित्र है, जब उनका अच्छी तरह से प्रबंधन किया जाता है; लेकिन जिन जैविक संसाधनों का दुरुपयोग किया जाता है, वे विलुप्त भी हो सकते हैं। जिस तरह से समाज ने अपने संसाधनों का प्रबंधन किया है, वह निर्धारित करता है कि कितनी विविधता बची रहती है और जिस तरह से समाज जैविक विविधता का प्रबंधन करता है, वह महत्वपूर्ण संसाधनों और पारिस्थितिक सेवाओं की उत्पादकता निर्धारित करता है।

मानव सभ्यता के सदियों के प्रयासों के परिणामस्वरूप, तकनीकी नवाचारों में अभूतपूर्ण प्रगति हुई है परंतु इस प्रगति ने कई स्थलीय और जलीय पारिस्थितिकी प्रणालियों को बदल दिया है, जिससे जैविक विविधता पर गहरा प्रभाव पड़ा है। ऐतिहासिक साक्ष्यों से पता चलता है कि कृषि, मछली पकड़ने और पशुपालन से जुड़ी पारंपरिक गतिविधियों में कभी स्थिरता/टिकाऊपन (Sustainability) की गुणवत्ता होती थी। हालाँकि, हाल ही में तकनीकी प्रगति, जनसांख्यिकीय प्रोफाइल में बदलाव और जीवन की 'बेहतर' गुणवत्ता की तलाश के साथ, जैविक संसाधन और एक अभूतपूर्व दर पर अत्यधिक शोषण के लिए आसान लक्ष्य बन गए। मछली जैव विविधता सहित जैव विविधता के नुकसान के अंतर्निहित कारणों में प्रमुख हैः– प्रकृति के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन, मानव आबादी और प्राकृतिक संसाधनों की खपत में वृद्धि; वैश्विक व्यापार का प्रभाव; आर्थिक प्रणालियाँ जो पर्यावरण और उसके संसाधनों को महत्व देने में विफल रहती हैं; और जैविक संसाधनों के उपयोग और संरक्षण दोनों से लाभ के स्वामित्व, प्रबंधन और प्रवाह में असमानता, इत्यादि।

मानव प्रभाव के लंबे इतिहास के बावजूद, मानवीय गतिविधियाँ आज अतीत की तुलना में कहीं अधिक प्रजातियों

को विलुप्त होने के जोखिम में डाल रही हैं, जो वर्तमान जनसंख्या के आकार, पर्यावरणीय वहन क्षमता, जनसंख्या घनत्व, आबादी की आनुवंशिक संरचना और उपयुक्त आवास स्थल और स्थानीय आबादी के आकार, संख्या और दूरी को प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय परिवर्तनों के परिणामस्वरूप है। अगर हम मछली की जैव विविधता के लिए खतरों पर विशेष रूप से नज़र डालें, तो हम आसानी से मानव प्रेरित प्रभावों की एक सूची देख सकते हैं, जिसमें अत्यधिक मछली पकड़ना, आवास विनाश से लेकर दूर के वातावरण में विदेशी प्रजातियों का प्रवेश और जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव, शामिल है।

इसके अलावा, जैसे–जैसे प्राकृतिक मछली भंडार में कमी आई है, ऐतिहासिक प्रवृत्ति जलीय कृषि के लिए अधिक प्रयास करने की है। यह प्राकृतिक विविधतापूर्ण विविध पारिस्थितिकी प्रणालियों के बड़े हिस्से को, उच्च स्तर के तकनीकी इनपुट द्वारा समर्थित कम प्रजाति विविधता वाली प्रजातियों–गरीब प्रणालियों से बदल देता है। यह कीटनाशकों और अन्य जहरीले पदार्थों के व्यापक उपयोग को भी बढ़ावा देता है जिसके परिणामस्वरूप मछली जैव विविधता पर अधिक व्यापक नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

हमें समाधान कहां से मिलेगा?

मछली जैवविविधता सहित, जैवविविधता के संरक्षण और सतत प्रबंधन का लक्ष्य, प्रकृति में विविधता को संरक्षित करने और मानव सतत जीवन को आगे बढ़ाने के बीच, अधिकतम संतुलन बनाना है। इस तरह के संतुलन को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित पहलुओं पर ध्यान देने और काम करने की आवश्यकता है:

1. **मछली जैव विविधता, इसके उपयोग और प्राकृतिक तथा प्रबंधित पारिस्थितिकी तंत्र में परिवर्तनों की निगरानी**
   - मछली प्रजातियों/आबादी/स्टॉक में कमी की अल्पकालिक और दीर्घकालिक निगरानी
   - क्षीण जलीय पारिस्थितिकी तंत्र की निगरानी और पुनर्वास
   - विदेशी प्रजातियों के प्रवेश की निगरानी और स्थानिक प्रजातियों पर उनके प्रभाव का अध्ययन
   - मत्स्य विविधता की सूची बनाना और डेटा बेस बनाना
2. **जैविक और सामाजिक–आर्थिक प्रक्रियाओं के बीच संबंधों को समझकर, मछली जैव विविधता पर मानवीय प्रभावों को समझना:**
   - जिस तरह से आस्था, संस्कृतियाँ, परंपराएँ मछली जैव विविधता के प्रति मानवीय व्यवहार को प्रभावित करती हैं, उनका समुचित अभिलेखन और विवेचन
   - मछली जैव विविधता पर विभिन्न समुदायों की निर्भरता का अभिलेखन
   - दोहन किए जा रहे मत्स्य संसाधनों के साथ–साथ, इन संसाधनों के उपयोग और आर्थिक मूल्यों की पूरी श्रृंखला का बेहतर ज्ञान
   - स्वदेशी और स्थानीय समुदायों का ज्ञान, नवाचार और पद्धतियों (Practices), का अभिलेखन और इन्हें आधुनिक प्रबंधन अभ्यास में एकीकृत करने के तरीके।
   - स्थानीय समुदायों, स्थानीय और राष्ट्रीय आर्थिक और हितधारकों की प्रगति में जंगली प्रजातियों का योगदान।
   - जलीय पारिस्थितिकी तंत्र और मत्स्य संसाधनों से संबंधित विकासात्मक और आर्थिक गतिविधियों के जैविक परिणाम।
   - मछली जैव विविधता संबंधी चिंताओं को मुख्यधारा की सार्वजनिक नीति और कानून–निर्माण में एकीकृत करना।
3. **जलीय पारिस्थितिकी तंत्र, प्रजातियों, आबादी और आनुवंशिक विविधता की रक्षा और पुनर्स्थापना।**
   - इन–सीटू संरक्षण – संरक्षित क्षेत्र, पशुपालन, आदि।
   - एक्स–सीटू संरक्षण – जीनबैंक

संरक्षण पहलों की योजना बनाना और उनका क्रियान्वयन:

मछली जैव विविधता के संरक्षण और सतत प्रबंधन के उद्देश्य से की जाने वाली कोई भी पहल, चाहे वह वैज्ञानिक और तकनीकी रूप से कितनी भी ठोस क्यों न हो, उसे स्थानीय स्तर पर ही क्रियान्वित किया जाना होता है। यहाँ भी कई कारक महत्वपूर्ण हैं और इसलिए, इन पर

सावधानीपूर्वक ध्यान देने की आवश्यकता है।

उनमें से कुछ हैं:

- दुर्लभ संसाधनों की दुनिया में, कुछ प्रजातियों/आबादी या अन्य सार्थक कारणों के संरक्षण की अवसर लागत (Opportunity cost)।
- स्थानीय और सामुदायिक स्तर पर सामाजिक हस्तक्षेप, जैव विविधता संरक्षण में सामाजिक भागीदारी और भागीदारी को मजबूत करने की रणनीतियाँ।
- भागीदारी को प्रभावी बनाने के लिए सामाजिक मूल्यांकन और भागीदारी जांच की पद्धतियाँ।
- समुदाय आधारित प्रबंधन और संस्थागत व्यवस्था के अन्य रूपों के साथ प्रयोग करना और जलीय संसाधनों के प्रबंधन के लिए आवश्यकता आधारित, उपयुक्त संस्थागत तंत्र के साथ आना।
- संस्थानों और प्रोत्साहनों को विकसित करने के लिए ऐसी नीतियाँ डिजाइन करना जो (ए) संसाधन उपयोगकर्ताओं को उनके व्यवहार की पूरी सामाजिक लागत का सामना कराएँ और (बी) संरक्षण में निवेश करने वालों को लाभों को उचित ठहराने में सक्षम बनाएँ।
- जलीय संसाधनों से संबंधित कानूनी ढांचे को संशोधित करना और इसे इस तरह से बनाना कि यह संरक्षण और सतत उपयोग गतिविधियों को लागू करने के लिए नियामक और प्रोत्साहन उपकरण प्रदान करें।
- संरक्षण से संबंधित मुद्दों के बारे में स्थानीय समुदायों, व्यापारियों, प्रशासकों और नीति निर्माताओं की जागरूकता बढ़ाना और उन्हें सतत प्रथाओं (Sustainable practices) का पालन करने के तरीकों के बारे में शिक्षित करना।
- संरक्षण उपायों के जैविक और पारिस्थितिक प्रभाव का अध्ययन करने के अलावा, स्थानीय समुदायों पर संरक्षण उपायों के सामाजिक–आर्थिक प्रभाव का, स्थानीय अर्थव्यवस्था के साथ–साथ राष्ट्रीय और आंतरिक अर्थव्यवस्था पर भी अध्ययन करना।
- आवश्यकताओं पर विचार करना, यदि कोई हो और स्थानीय समुदायों के लिए आजीविका के वैकल्पिक/सहायक साधनों पर विचार करना, जो संरक्षण उपायों के परिणामस्वरूप नुकसान की संभावना रखते हैं या इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए रणनीति बनाते हैं।

सुवर्णरेखा नदी की मत्स्य जैव एवं आवास विविधता की स्थिति पर सरंक्षण और प्रबंधन के दृष्टिकोण से एक परिप्रेक्ष्य

अजेय कुमार पाठक, जसप्रीत सिंह, राघवेन्द्र सिंह, महेंद्र सिंह, प्रशांत दीपक, रवि कुमार, विकास कुमार, शुभम कनौजिया, शिखा एवं उत्तम कुमार सरकार

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

नदीय पारिस्थितिक तंत्र मानवजनित प्रदूषण, अत्यधिक मत्स्य दोहन, घरेलू अपशिष्ट, जलवायु परिवर्तन की वजह से जलीय पर्यावरण के विनाश के अतिरिक्त कई आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण मत्स्य प्रजातियाँ लुप्तप्राय की स्थिति में हैं। इस सामयिक परिस्थिति में यह आवश्यक है कि नदी में उपस्थिति आवासों और उनमें उपलब्ध मत्स्य प्रजातियों का स्थानिक और लौकिक स्तर पर अन्वेषण सर्वेक्षण कार्य द्वारा डाटा संग्रहण और विश्लेषण के माध्यम से प्राप्त मत्स्य जैव विवधता और आवासीय वातावरण की जानकारी का दस्तावेज किया जाय और साथ ही तथा उनके मध्य प्रभावी संबंधों का आंकलन भी किया जाय जो कि जलीय जीवों के सरंक्षण और प्रबंधन के परिपेक्ष्य में एक ठोस कदम होगा। वर्तमान लेख, सुबर्णरेखा नदी में जैव विविधता और आवास के परिपेक्ष्य में किये गए प्रथम अन्वेषण सर्वेक्षण कार्य पर केन्द्रित है। अन्वेषण सर्वेक्षण के दौरान नदी में चयनित दस नमूने स्थलों से 75 मत्स्य प्रजातियों को दर्ज किया गया जिसमें 53.33% मुहाने क्षेत्र की और 46.67% मीठे पानी की हैं। दर्ज की गयी प्रजातियों में अधिकतम पर्सीफॉर्म्स (35%) और उसके बाद साईप्रीनिफॉर्म्स (21%), कलयूपीफॉर्म्स (11%) एवं सिलियुरिफॉर्म्स (11%) भागीदारी मिली। सिप्रिनेडीए परिवार में मत्स्य प्रजाति की समृद्धता अन्य परिवारों के तुलना में सबसे अधिक मिली। रांची शहर में, जल प्रदूषण की वजह से नदी के पानी मे अमोनिया ओर क्लोरीन की मात्रा अधिक और घुलित ऑक्सीजन की मात्रा सामान्य से कम प्राप्त हुई। अन्वेषण सर्वेक्षण कार्य के दौरान गौर किये गए कुछ कारणों जैसे कि प्रदूषण, अवैध खनन, अत्यधिक मत्स्य दोहन नदियों के प्राकृतिक आवासों के संरक्षण ओर जैव विविधता को समृद्ध बनाए रखने के परिपेक्ष्य में, यह लेख इन मानवजनित कारणों पर रोक लगाने पर सुझाव और वृहद् स्तर पर जन जागरूकता का सुझाव करती है।

विगत कुछ दशकों से नदी पारिस्थितिक तंत्र मानवजनित प्रदूषण, अत्यधिक दोहन और घरेलू अपशिष्ट की वजहों से खतरे में है और यह स्थिति जलीय पर्यावरण के विनाश के अतिरिक्त, कई मत्स्य प्रजातियों को लुप्तप्राय बना रही है। जलीय पर्यावरण में जैव विविधता का अध्ययन उस पारिस्थितिकी तंत्र की वर्तमान स्थिति और उसके भविष्य के बीच में एक अहम कड़ी है। वर्तमान समय में, बदलते जलवायु परिवर्तन और कुछ मानवीय कारणों से जलीय पर्यावरण पर होने वाले प्रभाव का आकलन करने के लिए भारत की नदियों की जलीय आवासीय स्थिति और उनकी जैविक विविधता का अध्ययन नितान्त आवयशक है। पारिस्थितिक आवासों के साथ–साथ जलीय जैविक विविधता की स्थिति जानने के लिए, भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ ने हाल ही में सुवर्णरेखा नदी का झारखण्ड और उड़ीसा राज्यों में मात्स्यिकी और आवास स्थितियों पर आकलन करने के लिए अन्वेषणात्मक सर्वेक्षण कार्य किया। इस कार्य का उद्देश्य मात्स्यिकी और आवास स्थितियों पर जानकारी का दस्तावेज और पूर्व में शोध कर्ताओं द्वारा इस नदी में मात्स्यिकी और आवास पर किये गए कार्यों का तुलनात्मक विश्लेषण और विवेचना पर सरंक्षण और प्रबंधन के परिपेक्ष्य में जानकारी देना है।

अध्ययन क्षेत्र का विवरण

बिहार राज्य से पृथक झारखंड राज्य नदियों, झरनों और समृद्ध जीव–जंतुओं के लिए जाना जाता है। सुवर्णरेखा जिसकी कुल लम्बाई 460 किलोमीटर एक वर्षा आधारित नदी है और इसे भारत की मुख्य चौदह नदियों में से सबसे छोटी नदी बेसिन के रूप में स्थान दिया गया हैं। "सुवर्णरेखा" दो शब्दों का मिश्रित शब्द है जिसमें 'सुवर्ण का अर्थ 'सोना' और "रेखा" का अर्थ लकीर जिसका शाब्दिक अर्थ है "सोने की लकीर"। परंपरागत रूप से यह माना जाता है कि सुवर्णरेखा नदी में सोने का खनन इसके उद्गम स्थल के निकट पिस्का नामक गाँव में किया जाता था, जिसकी वजह से इस नदी का नाम सुवण रिखा पड़ा। सुवर्णरेखा नदी का उद्गम रांची से लगभग 15–16 किलोमीटर दूर नगरी गाँव (23°18') में एक कुँए/कुंड ''रानी चुआं'' से हुआ है, और यह कुछ प्रमुख शहरों

जैसे रांची, सरायकेलाँ (चांडिल), जमशेदपुर, घाटशिला से होते हुए उड़ीसा में जलेश्वर, बालियापाल से गुजरती हुई 'चौमुखा' में बंगाल की खाड़ी में समाहित हो जाती हैं (चित्र 1 अ से द)।

अ ब

स द

चित्र 1. (अ) सुवर्णरेखा नदी का उद्गम ''रानी चुआं'', (ब) सुवर्णरेखा नदी मुहाना 'चौमुखा' (स) चांडिल बाँध में पिंजरा मछली पालन (द) बरणीपाल में सुवर्णरेखा नदी का दृश्य

राँची के पठारीय भाग में यह नदी 60 किमी तक अपना रास्ता तय करते हुए 74 मीटर ऊंची चट्टान से नीचे गिर कर एक सुंदर झरने 'हुंडरू झरना' बनाती है और उसके बाद यह पंच परगना मैदान से होते हुए बंगाल की खाड़ी में मिल जाती है (चित्र 2)।

सुवर्णरेखा नदी बेसिन 19,296 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ हैं, और यह भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 0.6% हिस्सा हैं। सुवर्णरेखा नदी बेसिन 21°33' से 23°32' उत्तरी अक्षांश और 85°09' से 87°27' पूर्वी देशांश तक फैला हुआ है और मुख्या रूप से यह प्रायद्वीपीय भारत के उत्तर–पूर्व में बहती है (चित्र 3)। सुवर्णरेखा नदी बेसिन उत्तर–पश्चिम में छोटा नागपुर पठार, दक्षिण–पश्चिम में ब्राह्मणी नदी बेसिन और दक्षिण में बुरहाबलंग नदी बेसिन और दक्षिण–पूर्व दिशा में बंगाल की खाड़ी से घिरी हुई है। सुवर्णरेखा नदी की कुल 395 किलोमीटर की दूरी तीन विभिन्न राज्यों झारखंड (269 किलोमीटर), पश्चिम बंगाल (64 किलोमीटर) और उड़ीसा (62 किलोमीटर) में आच्छादित है। सुवर्णरेखा नदी के कुल बेसिन क्षेत्र में से 68.4% झारखण्ड में, 16.1% उड़ीसा में और 15.5% पश्चिम बंगाल में आता हैं। सुवर्णरेखा बेसिन के दाहिने किनारे में चार प्रमुख सहायक नदियाँ, रारू, कांची, करकरी और खरकई हैं जो कुल बेसिन क्षेत्र का तीन–चौथाई हिस्सा आच्छादित करती है, जबकि बाएं किनारे में केवल एक बड़ी सहायक नदी डुलुङ्ग है, जो एक–चौथाई हिस्सा आच्छादित करती है। खरकई, सुवर्णरेखा की सबसे बड़ी सहायक नदी है और यह कुल वार्षिक प्रवाह में लगभग 45% योगदान देती है। सुवर्णरेखा नदी सिंचाई, औद्योगिक और पेय जल की पूर्ति के लिए एक महत्वपूर्ण नदी है। चित्र 4 तीन राज्यों की जलग्रहण मांगों और तथा जल निकासी क्षेत्र के परिपेक्ष्य में सुवर्णरेखा नदी बेसिन के क्षेत्रफल के राज्य वार वितरण पर प्रतिशत मान प्रदर्शित करता है।

चित्र 2. 'हुंडरू झरना' एवं रांची के पठारी भाग से गुजरती सुवर्णरेखा नदी का दृश्य

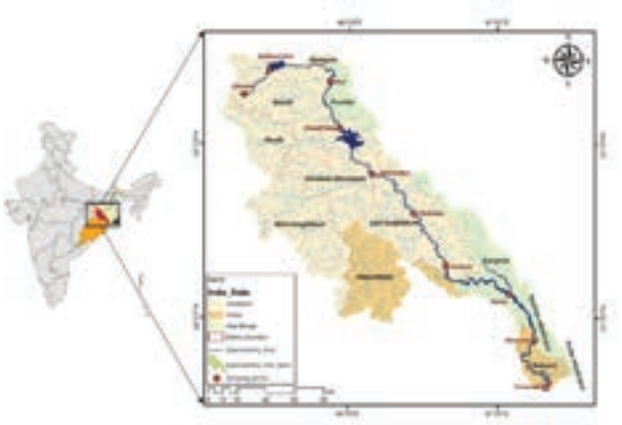

चित्र 3. सुवर्णरेखा नदी बेसिन ओर सर्वेक्षण स्थलों का एक प्रदर्शित मानचित्र

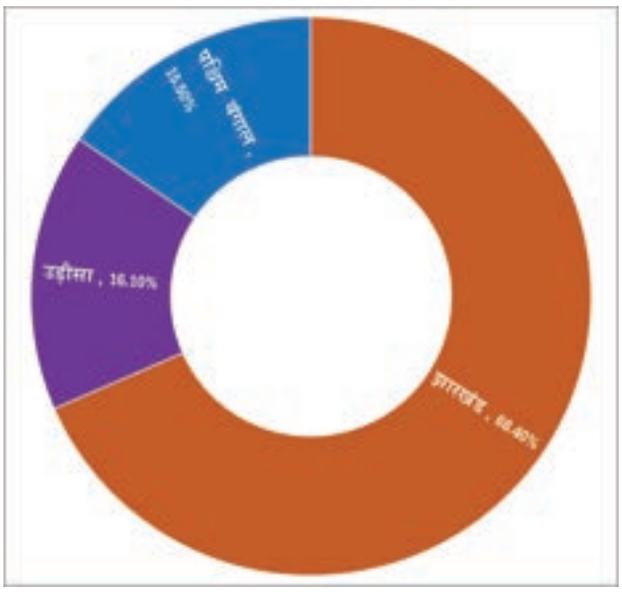

चित्र 4. विभिन राज्यों मे सुवर्णरेखा नदी बेसिन क्षेत्रफल के हिस्से पर दृश्य

सुवर्णरेखा नदी में शोध कर्ताओं द्वारा पूर्व में किए गए जैव विविधता पर अन्वेषण सर्वेक्षण कार्य का विवरण

सुवर्णरेखा नदी में मत्स्य जैव विविधता पर वर्ष 1972 में पहली बार शोध कार्य हुआ। तदुपरांत, वर्ष 1972–1991 के बीच में *ग्लाइप्टोथोरैक्स नेल्सोनी, जी. कोहेनी, गारा सत्येन्द्रनाथी, मिस्टस कैवसियस* जैसी प्रजातियों की खोज की गई (गौगुली, दत्ता और सेन, 1972; गांगुली और दत्ता, 1975)। कर्माकर एवं अन्य. (2008), घोष एवं अन्य. (2009), वर्मा और मुर्मू (2010) तथा बेरा (2022) ने सुवर्णरेखा नदी से क्रमशः कुल 66, 140, 40 और 50 मछली की प्रजातियों को दर्ज किया। घोष एवं अन्य. (2009) को सुवर्णरेखा में किए अन्वेषण कार्य में दर्ज 140 मछलियों में से 75.71% मुहाने क्षेत्र की, 24.29% मीठे पानी की मछलियाँ प्राप्त हुई, जिसमें परसीफॉर्म्स, क्लूपीफॉर्म्स, सिलीयूरिफॉर्म्स एवं पलयुरोनेकटीफॉर्म्स गणों का योगदान क्रमशः 45%, 12.86%, 10.71%, 10% एवं 4.29% था। इसी तरह, बेरा (2022), को कुल जैव विविधता में साईपरिनीफॉर्म्स गण (46.40%) की सबसे अधिक भागीदारी मिली, और उसके पश्चात अनाबंटीफॉर्म्स (20.29%), सीलूरीफॉर्म्स (16.47%) एवं परसीफॉर्म्स (5.49%) गणों की भागीदारी मिली।

वर्तमान वर्ष 2024 में सुवर्णरेखा नदी में भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो के शोध कर्ताओं द्वारा किये अन्वेषण सर्वेक्षण कार्य का परिणाम एवं परिचर्चा

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो के शोध कर्ताओं ने प्रारंभिक सर्वेक्षण के दौरान कुल दस नमूने स्थलों का चयन किया जो कि, ध्रुवा बाँध (23°17'43.9"N 85°15'30.5"E), गेतुल्सुद बाँध (23°26'18.2"N 85°30'55.0"E), किताासिलई (23°22'05.3"N 85°45'33.9"E), मूरी (23°21'41.2"N 85°52'26.3"E), करकिडीह (23°05'14.9"N 85°57'07.5"E), चांडिल बाँध (22°58'47.3"N 86°01'23.1"E), गलुदी बाँध (22°38'40.6"N 86°23'47.3"E), बरणीपाल (22°13'27.2"N 86°41'24.2"E), चौमुखा मुहाना (21°33'10.1"N 87°22'04.9"E), काली मंदिर एवं महादेव घाट रांची (23°21'06.3"N 85°22'09.6"E) हैं। इन स्थलों से मछली ओर जल के नमूने संग्रहीत किये गए (चित्र 3)। सर्वेक्षण के दौरान, पाए गए पानी के विभिन्न मापदंड पर आरेख चित्र 5 में प्रदर्शित हैं।

जल प्रदूषण की वजह से रांची शहर में नदी के पानी में अमोनिया ओर क्लोरीन की मात्रा अधिक और घुलित ऑक्सीजन की मात्रा सामान्य से कम प्राप्त हुई। इस प्रारम्भिक सर्वेक्षण में सुवर्णरेखा नदी के चयनित दस स्थलों

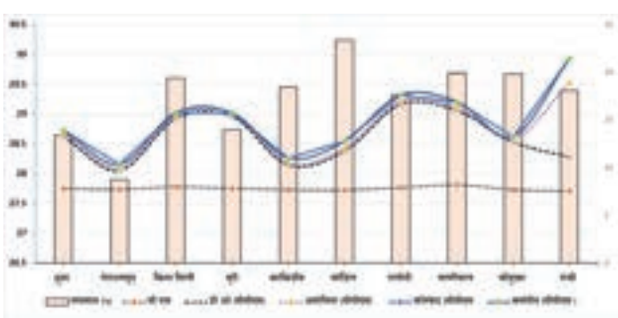

चित्र 5. चयनित स्थलों से संग्रहीत पानी के नमूनों का विश्लेषण उपरान्त विभिन्न मापदण्डों पर दृश्य

से 75 मछली की प्रजातयों को दर्ज किया गया, जिसमें क्रम एवं मछली की प्रजातियों की संख्या चित्र 6 (अ) में प्रदर्शित है। इस अन्वेषण सर्वेक्षण में 53.33% मुहाने क्षेत्र की और 46.67% मीठे पानी की मछली प्रजातियाँ प्राप्त हुई। मछली की जैव विविधता में पर्सीफॉर्म्स (35%) अधिकतम और तत्पश्चात साईप्रीनिफॉर्म्स (21%), कलयूपीफॉर्म्स (11%) एवं सिलियुरिफॉर्म्स (11%) गणों की मछली प्रजातियों मिली। अन्य गण एवं प्रजातियों की जानकारी चित्र 6(अ, ब) में प्रदर्शित है। सिप्रिनेडीए परिवार में सबसे अधिक मछली प्रजाति (8) तथा अन्य परिवार में 5 से कम प्रजातियाँ मिली। सर्वेक्षण के दौरान यह देखा गया कि ध्रुवा बाँध, गेतल्सुद बाँध और चांडिल बाँध में वृहद् स्तर पर पिंजड़े में मत्स्य पालन किया जाता है जो कि सुबर्णरेखा नदी पर स्थित हैं। इन बाँधों में मोनोसेक्स तिलापिया, पंगेसिअस, का वृहद् स्तर पर पालन किया जाता है। मुख्य कार्प्स प्रजातियों का पालन इन पिंजड़ों में निम्न स्तर पर होता है। इन बाँधों में पिंजड़े में मत्स्य पालन मछुवा समितियों द्वारा किया जाता है और यह समितियाँ प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना से लाभ अर्जित कर झारखण्ड राज्य सरकार के मत्स्य विभाग से प्रशिक्षण प्राप्त कर निर्गत सुझाओं एवं दिशा निर्देशों के तहत पिंजड़े में मत्स्य पालन का कार्य करती हैं।

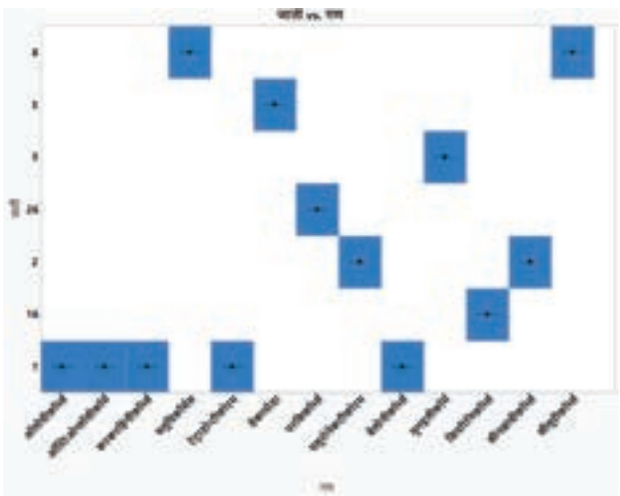

चित्र 6 (अ). विभिन्न मछली गणों में प्राप्त मछली प्रजातियों की संख्या पर दृश्य

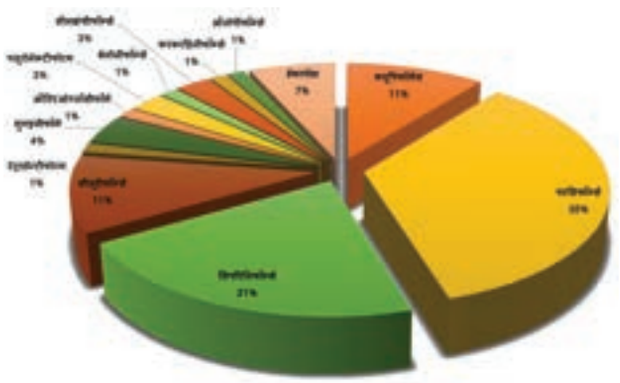

चित्र 6 (ब). विभिन्न गणों के तहत दर्ज की गई मछली की प्रजातियों पर प्रतिशत दृश्य

निष्कर्ष

वर्तमान अध्ययन से पता चला है कि सुबर्णरेखा नदी में मछलियों की विस्तृत विविधता है और यह नदी बहुत जैविक रूप से अत्यंत समृद्ध है। सजावटी मछलियों की तुलना में खाद्य मछलियाँ की विविधता अधिक मिली जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इस नदी में खाद्य मछलियों के जर्मप्लाज्म अधिक हैं। इस नदी में मत्स्य प्रजनन हेतु उपयुक्त पर्यावरण, पर्याप्त भोजन है, किन्तु मानवजनित जैविक और अकार्बनिक प्रदूषण, घरेलू अपशिष्ट, अवैध खनन और मछलियों के अत्यधिक दोहन इत्यादि से भविष्य में इस नदी की मत्स्य जैव विविधता खतरे में आ सकती है। नदियों के प्राकृतिक आवासों के सरक्षण ओर जैव विविधता को समृद्ध बनाए रखने के लिए प्रदूषण, अवैध खनन, मछलियों के अत्यधिक दोहन पर रोक लगाने के सुझाव के साथ बड़े पैमाने पर जन जागरूकता करने की भी आवश्यकता है। साथ विभिन्न बाँधों में पिंजड़ों में मुख्य कार्प्स प्रजातियों के पालन में वृद्धि करने हेतु समर्थन पर जोर देने की आवश्यकता है।

संदर्भ

Bera, S., 2022. Current status of fish diversity of Subarnarekha river in Paschim Medinipur district, West Bengal. International Journal of Fisheries and Aquatic Studies, 10(2): 116-121.

Ghosh, A., Bhaumik, U. and Satpathy, B.B., 2011. Fish diversity of Subarnarekha Estuary in relation to salinity. *Journal of Inland Fisheries Society of India*, *43*(1), pp.51-61.

Karmakar, A.K., Das, A. and Banerjee, P.K. 2008. Fish biodiversity of Subarnarekha River. Zoological Survey of India, OCC. Paper No. 283: 1-57, (Published by the Director, Zoological Survey of India, Kolkata)

Singh, A.K. and Giri, S., 2018. Subarnarekha river: the gold streak of India. *The Indian Rivers: Scientific and Socio-Economic Aspects*, pp.273-285.

लैंडस्केप जीनोमिक्सः प्रमुख अवधारणाएँ, आणविक मार्कर, चुनौतियाँ, और भविष्य के अनुसंधान की दिशा

दिव्या मेरिन जोस[1], दिव्या पी. आर[1], सुभाष चन्द्र[2] एवं उत्तम कुमार सरकार[2]

[1]प्रायद्वीपीय जलीय आनुवंशिक संसाधन केंद्र, भाकृअनुप–रा.म.आनु.सं. ब्यूरो, कोच्चि

[2]भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

लैंडस्केप जीनोमिक्स हाल ही में विकसित किया गया क्षेत्र है जो जीनोम में अनुकूली आनुवंशिक विविधताओं और प्राकृतिक पापुलेशन में पर्यावरणीय अंतरों के बीच संबंध को उजागर करने का प्रयास करता है। यह दृष्टिकोण पापुलेशन और व्यक्तिगत स्तरों पर जटिल अनुकूली विकास में शामिल जीनों की पहचान करने के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में उभरा है। लैंडस्केप जीनोमिक्स एक मजबूत शोध क्षेत्र है जो यह अध्ययन करने में मदद करता है कि प्रजातियाँ विभिन्न वातावरणों के लिए कैसे अनुकूलित होती हैं। Joost, et al. (2007) ने लैंडस्केप जीनोमिक्स को अध्ययन के एक नए क्षेत्र के रूप में पेश किया, जो यह समझने पर केंद्रित था कि प्रजातियों में आनुवंशिक परिवर्तन पर्यावरणीय अंतरों से कैसे जुड़े हैं। लैंडस्केप जेनेटिक्स के विपरीत, जो आमतौर पर आणविक मार्करों के सीमित सेट पर निर्भर करता है, लैंडस्केप जीनोमिक्स में व्यापक जीनोम कवरेज प्रदान करने के लिए बहुत अधिक संख्या में मार्करों की आवश्यकता होती है (Miao, 2017)। हालाँकि, लैंडस्केप जेनेटिक्स अक्सर पर्यावरणीय कारकों और पापुलेशन की स्थानिक आनुवंशिक संरचना के बीच संबंधों की जाँच करने के लिए मार्करों के एक छोटे चयन का उपयोग करने की ओर उन्मुख रहता है (Poelchau and Hamrick, 2012)।

लैंडस्केप जीनोमिक्स का क्षेत्र स्थानीय अनुकूलन संबंधी जीनोमिक तंत्र की हमारी समझ को बढ़ाता है और इसे प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय कारकों की पहचान करता है। इसके अतिरिक्त, लैंडस्केप जीनोमिक्स को पर्यावरणीय परिवर्तनों के लिए पापुलेशन के संभावित कुरूपता का मूल्यांकन करने के लिए लागू किया जा सकता है, जिसे जीनोमिक ऑफसेट के रूप में जाना जाता है। (Capblancq et al., 2020 ; Rellstab et al., 2021)। यह ज्ञान विशेष रूप से मानव–चालित पर्यावरणीय परिवर्तनों, जैसे कि जलवायु परिवर्तन या भूमि–उपयोग संशोधनों के संदर्भ में महत्वपूर्ण है, जो इसे प्राकृतिक संरक्षण और पारिस्थितिकी तंत्र प्रबंधन के लिए अत्यधिक प्रासंगिक बनाता है। (Layton et al (2021) लैंडस्केप जीनोमिक्स का उद्देश्य चयन के तहत उम्मीदवार जीन की पहचान करना है जो स्थानीय अनुकूलन के संभावित संकेतक के रूप में काम करते हैं। लैंडस्केप जीनोमिक्स प्रयोग को डिजाइन करने में पर्यावरणीय कारकों का बार–बार नमूना लेना शामिल है जो चयन को प्रेरित कर सकते हैं, चयन के तहत उम्मीदवार लोसाई का पता लगाने की क्षमता को बढ़ाते हैं (Storfer et al., 2018)।

लैंडस्केप जीनोमिक्स जलीय वातावरण में विस्तारित हो गया है, जिसे सीस्केप या रिवरस्केप जीनोमिक्स (Liggins et al., 2020; Grummer et al., 2019) के रूप में जाना जाता है, पिछले एक दशक में समुद्री अध्ययन तेजी से आम हो गए हैं। यह वृद्धि तीन सबसे अधिक शोध किए गए पारिस्थितिकी तंत्रों– वन (32.7%), समुद्री (13.3%), और कृषि (10.8%) के साथ संरेखित होती है– जो कुल अध्ययनों का 56.8% प्रतिनिधित्व करते हैं। एक विशिष्ट लैंडस्केप जीनोमिक्स अध्ययन कई प्रमुख तत्वों पर निर्भर करता हैः (i) एक अच्छी तरह से डिजाइन की गई नमूनाकरण रणनीति जो प्रासंगिक पर्यावरणीय अंतरों को प्रतिबिंबित करते हुए अंतर–विशिष्ट आनुवंशिक विविधता को पकड़ती है, (ii) भू–संदर्भित पर्यावरणीय डेटा जो पापुलेशन या व्यक्तियों पर कार्य करने वाले चयनात्मक दबावों का सटीक रूप से प्रतिनिधित्व करता है, (iii) उच्च गुणवत्ता वाले जीनोम–व्यापी डेटा, और (iv) जीनोमिक प्रतिक्रिया चर (Y) को पर्यावरणीय भविष्यवाणियों (X) के साथ जोड़ने के लिए उपयुक्त सांख्यिकीय विधियां, जबकि तटस्थ आनुवंशिक संरचना (Lotterhos and Whitlock, 2015) जैसे भ्रामक कारकों को नियंत्रित किया जाता है।

लैंडस्केप जीनोमिक्स में आणविक मार्कर

लैंडस्केप जीनोमिक शोध के लिए ऐसे आणविक मार्करों की आवश्यकता होती है जो जीनोम में अच्छी तरह से वितरित हों। इन अध्ययनों में दो मुख्य प्रकार के मार्करों का उपयोग किया जाता है। प्रवर्धित खंड लंबाई बहुरूपता (एएफएलपी), अंतर–सरल अनुक्रम पुनरावृत्ति (आईएसएसआर) और प्रारंभ कोडन–लक्षित बहुरूपता

(एससीओटीपी) जैसे टाइप–I मार्करों में डीएनए अनुक्रम जानकारी का अभाव होता है। दूसरी ओर, टाइप–II मार्कर, जैसे एकल–न्यूक्लियोटाइड बहुरूपता (एसएनपी), में डीएनए अनुक्रम जानकारी होती है। टाइप–I मार्करों को उत्पन्न करना कम खर्चीला है, लेकिन उनकी कुछ सीमाएँ हैं। जबकि उनका उपयोग आउटलायर लोकस डिटेक्शन और पर्यावरण एसोसिएशन विश्लेषण के माध्यम से अनुकूलन में शामिल लोसाई की पहचान करने के लिए किया जा सकता है, इन लोसाई के जीन कार्यों की पुष्टि करना मुश्किल है, जिससे गलत सकारात्मकता का जोखिम बढ़ जाता है। इसके विपरीत, टाइप–II मार्कर उच्च स्कैनिंग घनत्व प्रदान करते हैं, लेकिन उत्पन्न करने में अधिक महंगे होते हैं। हालांकि, उनका मुख्य लाभ डीएनए अनुक्रम जानकारी की उपस्थिति में निहित है, जो जीनोम पर मार्करों के एनोटेशन और मैपिंग की सुविधा प्रदान करता है (Teng and Xiao, 2009)।

आणविक मार्कर लैंडस्केप जीनोमिक्स में महत्वपूर्ण उपकरण हैं, जो शोधकर्ताओं को स्थानिक रूप से संरचित पापुलेशन में आनुवंशिक भिन्नता की पहचान करने और उसका विश्लेषण करने में सक्षम बनाते हैं। ये मार्कर इस बात की खोज करने की अनुमति देते हैं कि पर्यावरणीय कारक आनुवंशिक विविधता और अनुकूलन को कैसे प्रभावित करते हैं। लैंडस्केप जीनोमिक्स में आमतौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले आणविक मार्करों में शामिल हैं:

1. **एकल न्यूक्लियोटाइड बहुरूपता (एसएनपी):** एसएनपी सबसे अधिक इस्तेमाल किए जाने वाले मार्कर हैं क्योंकि जीनोम में उनकी प्रचुरता है और बारीक पैमाने पर आनुवंशिक भिन्नता का पता लगाने के लिए उच्च रिज़ॉल्यूशन है। वे पर्यावरणीय चर के साथ आनुवंशिक भिन्नता को जोड़कर स्थानीय अनुकूलन में विस्तृत जानकारी प्रदान कर सकते हैं।
2. **माइक्रोसैटेलाइट्स (एसएसआर):** माइक्रोसैटेलाइट्स, या सरल अनुक्रम दोहराव (एसएसआर), अत्यधिक बहुरूपी मार्कर हैं जिनका उपयोग जनसंख्या संरचना, जीन प्रवाह और आनुवंशिक विविधता का आकलन करने के लिए किया जाता है। हालाँकि उनकी उत्परिवर्तन दर एसएनपी से अधिक है, लेकिन वे ऐतिहासिक और जनसांख्यिकीय पैटर्न का अध्ययन करने के लिए प्रभावी हैं।
3. **प्रवर्धित खंड लंबाई बहुरूपता (एएफएलपी):** एएफएलपी पूर्व जीनोमिक जानकारी के बिना आनुवंशिक अंतर का पता लगाने के लिए उपयोगी हैं। वे भिन्नता के लिए एक व्यापक जीनोम–व्यापी स्कैन प्रदान करते हैं लेकिन एसएनपी के समान रिज़ॉल्यूशन का स्तर प्रदान नहीं कर सकते हैं।
4. **प्रतिबंध साइट–एसोसिएटेड डीएनए (आरएडी) अनुक्रमण:** आरएडी–सेक एक ऐसी तकनीक है जो जीनोम में हजारों मार्कर उत्पन्न करती है, जो इसे गैर–मॉडल प्रजातियों के अध्ययन के लिए आदर्श बनाती है। यह लैंडस्केप जीनोमिक्स अध्ययनों के लिए उच्च–थ्रूपुट डेटा प्रदान करता है, जिससे आनुवंशिक–पर्यावरणीय संघों का पता लगाना आसान हो जाता है।
5. **माइटोकॉन्ड्रियल डीएनए (एमटीडीएनए):** यद्यपि मातृ वंशानुक्रम और जनसंख्या–व्यापी अध्ययनों के लिए सीमित संकल्प के कारण लैंडस्केप जीनोमिक्स में इसका उपयोग कम किया जाता है, फिर भी एमटीडीएनए फाइलोज्योग्राफी और प्राचीन जीन प्रवाह पैटर्न का विश्लेषण करने के लिए जानकारीपूर्ण हो सकता है।

प्रमुख चुनौतियाँ

प्रौद्योगिकी और आणविक उपकरणों में प्रगति के बावजूद, लैंडस्केप जीनोमिक्स को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जो पर्यावरणीय कारकों और आनुवंशिक भिन्नता के बीच संबंधों को समझने की इसकी पूरी क्षमता में बाधा डालती हैं। प्रमुख चुनौतियों में शामिल हैं:

1. **पर्यावरणीय विविधता की जटिलता:** प्राकृतिक पर्यावरण बहुआयामी होते हैं, जिनमें कई परस्पर क्रियाशील अजैविक और जैविक कारक एक साथ पापुलेशन को प्रभावित करते हैं। इन विभिन्न पर्यावरणीय चरों के प्रभावों को अलग करना और उन्हें आनुवंशिक अनुकूलन से जोड़ना मुश्किल है, जिसके लिए अक्सर परिष्कृत सांख्यिकीय दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है।
2. **नमूनाकरण डिज़ाइन और स्थानिक पैमाना:** यह सुनिश्चित करने के लिए उचित नमूनाकरण महत्वपूर्ण है जिससे आनुवंशिक विविधता और पर्यावरणीय चर दोनों का पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व किया जाए। खराब नमूनाकरण डिज़ाइन या आनुवंशिक डेटा और पर्यावरणीय कारकों के बीच बेमेल स्थानिक पैमाने गलत निष्कर्षों को जन्म दे सकते हैं। सही भौगोलिक और लौकिक पैमाने को परिभाषित करना एक महत्वपूर्ण चुनौती बनी हुई है।

3. **जीन–पर्यावरण सहसंबंध (जीईसी):** स्थानिक स्व–सहसंबंध जैसे मुद्दों के कारण वास्तविक जीन–पर्यावरण सहसंबंधों का पता लगाना चुनौतीपूर्ण है, जहाँ आनुवंशिक समानताएँ समान वातावरण के अनुकूलन के बजाय साझा वंश से उत्पन्न होती हैं। यह स्थानीय अनुकूलन के लिए वास्तव में जिम्मेदार आनुवंशिक वेरिएंट की पहचान को अस्पष्ट कर सकता है।

4. **लैंडस्केप जीनोमिक्स में टाइप–II मार्कर और कार्यात्मक सत्यापन:** विश्लेषण के लिए टाइप–II मार्कर, जैसे कि सिंगल–न्यूक्लियोटाइड पॉलीमॉर्फिज्म (एसएनपी), जो डीएनए अनुक्रम जानकारी प्रदान करते हैं, का चयन किया जाना चाहिए। जीन फ़ंक्शन एनोटेशन इन मार्कर्स को मान्य करने के लिए एक अप्रत्यक्ष विधि के रूप में काम कर सकता है। अनुकूलन में शामिल कुछ लोसाई की भूमिका की पुष्टि करने के लिए, जीन स्थानांतरण या नॉकआउट तकनीकों को नियोजित किया जाना चाहिए। कई पहले के लैंडस्केप जीनोमिक्स अध्ययनों ने मुख्य रूप से गैर–मॉडल प्रजातियों की जांच की है, जिससे पहचाने गए अनुकूली लोसाई के लिए कार्यात्मक सत्यापन की कमी हुई है। नतीजतन, भविष्य के शोध में इन लोसाई के कार्य और अनुकूली महत्व को सत्यापित करने के लिए अधिक प्रयोगात्मक दृष्टिकोणों को शामिल करने की आवश्यकता होगी।

5. **जनसंख्या संरचना और जनसांख्यिकी इतिहास:** अनुकूलन के आनुवंशिक संकेतों को ऐतिहासिक जनसांख्यिकीय घटनाओं, जैसे कि अड़चनों, पलायन या विस्तार से भ्रमित किया जा सकता है। जनसांख्यिकीय इतिहास के कारण आनुवंशिक भिन्नता और पर्यावरणीय अनुकूलन द्वारा प्रेरित भिन्नता के बीच अंतर करना एक जटिल कार्य है, जिसके लिए उन्नत सांख्यिकीय मॉडल और जनसंख्या इतिहास की गहरी समझ की आवश्यकता होती है।

6. **गैर–मॉडल प्रजातियों के लिए सीमित जीनोमिक संसाधन:** कई लैंडस्केप जीनोमिक अध्ययन गैर–मॉडल जीवों पर ध्यान केंद्रित करते हैं जिनके लिए सीमित जीनोमिक संसाधन हैं, जैसे कि पूरी तरह से अनुक्रमित संदर्भ जीनोम। संसाधनों की यह कमी प्रासंगिक आनुवंशिक मार्कर्स की पहचान और उन्हें अनुकूलन में शामिल कार्यात्मक जीनों को मैप करने की क्षमता को सीमित कर सकती है।

7. **डेटा एकीकरण और व्याख्या:** आनुवंशिक, पर्यावरणीय और भौगोलिक डेटा सहित विविध डेटासेट को एक सुसंगत विश्लेषण में एकीकृत करना कम्प्यूटेशनल रूप से चुनौतीपूर्ण है। इसके अलावा, लैंडस्केप जीनोमिक्स अध्ययनों के परिणामों की व्याख्या करना, विशेष रूप से जब वे कई चर के साथ बड़े पैमाने पर डेटासेट शामिल करते हैं, तो मजबूत विश्लेषणात्मक रूपरेखा और अंतःविषय विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है।

8. **विकासवादी जटिलता:** अनुकूली लक्षण अक्सर पॉलीजेनिक होते हैं, जिसका अर्थ है कि वे कई जीनों से प्रभावित होते हैं, जिनमें से प्रत्येक एक छोटा प्रभाव देता है। इससे अनुकूलन में शामिल विशिष्ट जीन की पहचान करना मुश्किल हो जाता है। इसके अलावा, जीन–पर्यावरण इंटरैक्शन और एपिजेनेटिक कारक भी अनुकूलन में भूमिका निभा सकते हैं लेकिन वर्तमान अध्ययनों में अक्सर उन्हें अनदेखा कर दिया जाता है।

भावी अनुसंधान के लिए अनुशंसाएँ

लैंडस्केप जीनोमिक्स के क्षेत्र को आगे बढ़ाने और मौजूदा चुनौतियों पर काबू पाने के लिए, भविष्य के अनुसंधान के लिए कई सुझाव प्रस्तावित किए गए हैं:

1. **नमूनाकरण रणनीतियों और स्थानिक संकल्प में सुधार:** भविष्य के अध्ययनों के नमूनाकरण डिज़ाइनों को अनुकूलित करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि आनुवंशिक विविधता और पर्यावरणीय विषमता दोनों को पर्याप्त रूप से कैप्चर किया गया है। इसमें विभिन्न पर्यावरणीय ढालों में नमूना पापुलेशन की संख्या में वृद्धि करना और आनुवंशिक और पर्यावरणीय डेटा के स्थानिक पैमाने को अधिक सटीक रूप से संरेखित करना शामिल है। समय के साथ विकासवादी प्रतिक्रियाओं की निगरानी के लिए अस्थायी नमूनाकरण पर भी विचार किया जाना चाहिए।

2. **नए सांख्यिकीय उपकरणों का विकास:** नए सांख्यिकीय मॉडल जो आनुवंशिकी, पर्यावरण और जनसांख्यिकीय इतिहास के बीच जटिल संबंधों को ध्यान में रखते हैं, आवश्यक हैं। इसमें स्थानीय अनुकूलन के संकेतों और तटस्थ विकासवादी प्रक्रियाओं, जैसे जीन प्रवाह या ऐतिहासिक घटनाओं के कारण होने वाले संकेतों के बीच अंतर करने के तरीकों में सुधार करना शामिल है। अधिक परिष्कृत स्थानिक मॉडल

और मशीन लर्निंग दृष्टिकोण जीन–पर्यावरण संघों की पहचान को बढ़ा सकते हैं।

3. **पॉलीजेनिक अनुकूलन पर ध्यान दें:** चूंकि कई अनुकूली लक्षण पॉलीजेनिक हैं, इसलिए भविष्य के शोध को केवल एकल जीन या लोसाई पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय पॉलीजेनिक अनुकूलन की पहचान करने वाले तरीकों को प्राथमिकता देनी चाहिए। स्थानीय अनुकूलन में कई जीनों की भूमिका को बेहतर ढंग से समझने के लिए जीनोम–वाइड एसोसिएशन स्टडीज (जीडब्लूएएस) और जीनोमिक भविष्यवाणी मॉडल जैसे दृष्टिकोणों का विस्तार किया जा सकता है।

4. **जीनोमिक, एपिजेनोमिक और ट्रांसक्रिप्टोमिक डेटा का एकीकरण:** जीनोम से परे डेटा को शामिल करना, जैसे कि एपिजेनोमिक संशोधन और ट्रांसक्रिप्टोमिक अभिव्यक्ति, इस बारे में अधिक व्यापक समझ प्रदान कर सकता है कि जीव अपने पर्यावरण के अनुकूल कैसे होते हैं। ये एकीकृत दृष्टिकोण अनुकूलन को संचालित करने वाले नियामक तंत्र और जीन–पर्यावरण इंटरैक्शन की भूमिका पर प्रकाश डालेंगे।

5. **गैर–मॉडल प्रजातियों के लिए लैंडस्केप जीनोमिक्स का विस्तार:** गैर–मॉडल प्रजातियों, विशेष रूप से खतरे में पड़ी या पारिस्थितिक रूप से महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी प्रणालियों में अध्ययन करने की दिशा में अधिक प्रयास किए जाने चाहिए। उच्च–थ्रूपुट अनुक्रमण तकनीकों में प्रगति, जैसे कि आरएडी –सेक और संपूर्ण–जीनोम अनुक्रमण, इन प्रजातियों के लिए जीनोमिक संसाधन उत्पन्न करने के लिए नियोजित किया जा सकता है, जिससे लैंडस्केप जीनोमिक अध्ययनों का दायरा बढ़ सकता है।

6. **कार्यात्मक जीनोमिक्स और उम्मीदवार जीन दृष्टिकोणों को शामिल करना:** भविष्य के शोध में लैंडस्केप जीनोमिक्स को कार्यात्मक जीनोमिक्स के साथ जोड़ना चाहिए ताकि उम्मीदवार जीन की पहचान की जा सके जो सीधे अनुकूली लक्षणों को प्रभावित करते हैं। प्रायोगिक सत्यापन, जैसे जीन संपादन और कार्यात्मक परख, स्थानीय अनुकूलन में विशिष्ट जीन या मार्गों की भूमिका की पुष्टि कर सकते हैं।

7. **जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय बदलावों को संबोधित करना:** तेजी से बदलती जलवायु को देखते हुए, भविष्य के शोध में इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि पापुलेशन गतिशील वातावरण के अनुकूल कैसे बनती है। पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति लचीलेपन के जीनोमिक आधार को समझना संरक्षण और प्रबंधन रणनीतियों के लिए महत्वपूर्ण होगा, खासकर प्रजातियों की सीमा में बदलाव, आवास की हानि और परिवर्तित पारिस्थितिकी तंत्र के संदर्भ में।

8. **अंतःविषय सहयोग:** लैंडस्केप जीनोमिक्स स्वाभाविक रूप से अंतःविषय है, जिसमें पारिस्थितिकी, जीनोमिक्स, जैव सूचना विज्ञान और पर्यावरण विज्ञान शामिल हैं। भविष्य के शोध को विभिन्न डेटा प्रकारों और पद्धतियों को एकीकृत करने के लिए इन क्षेत्रों में सहयोग को बढ़ावा देना चाहिए। सहयोगात्मक प्रयास उपयोगकर्ता के अनुकूल सॉफ़्टवेयर और विश्लेषणात्मक पाइपलाइनों के विकास में भी सुधार करेंगे जो डेटा व्याख्या की सुविधा प्रदान करते हैं।

9. **नैतिक और संरक्षण संबंधी विचार:** लैंडस्केप जीनोमिक्स में अनुसंधान को संरक्षण अनुप्रयोगों की ओर ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। जैव विविधता, आनुवंशिक विविधता के संरक्षण और जीनोमिक हस्तक्षेपों के सामाजिक–पारिस्थितिक प्रभावों से संबंधित नैतिक विचारों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। नीति निर्माताओं और स्थानीय समुदायों के साथ जुड़ने से यह सुनिश्चित होगा कि जीनोमिक अंतर्दृष्टि को व्यावहारिक संरक्षण प्रयासों में तब्दील किया जाए।

वर्तमान लैंडस्केप जीनोमिक्स अनुसंधान मुख्यतः दो प्रमुख पहलुओं पर केंद्रित है: जीनोमिक विचलन पर स्थानिक पर्यावरणीय चर का प्रभाव और अनुकूली आनुवंशिक भिन्नता को आकार देने में पर्यावरणीय कारकों की भूमिका। लैंडस्केप जीनोमिक अध्ययनों में निम्नलिखित मुद्दों पर विचार किया जाना चाहिए:

(1) पिछले अध्ययनों ने कुछ जीनों की पहचान की है जो अनुकूली परिवर्तनों के साथ–साथ इन परिवर्तनों को चलाने वाले पर्यावरणीय कारकों से गुजरते हैं। हालांकि, ये विशिष्ट जीन या पर्यावरणीय चर इन कार्यों को क्यों करते हैं, इसके अंतर्निहित कारणों को अभी भी अच्छी तरह से समझा नहीं गया है।

(2) टाइप–II मार्कर इन विशिष्ट जीनों की पहचान करने में उपयोगी होते हैं, लेकिन उनके द्वारा प्रभावित

चयापचय मार्गों और इन जीनों द्वारा विनियमित अनुकूलन से जुड़े लक्षणों को समझना महत्वपूर्ण है।

(3) चरम वातावरण में रहने वाली प्रजातियां अक्सर अपने आनुवंशिक मेकअप या लक्षणों में अभिसरण अनुकूली परिवर्तन दिखाती हैं परिणामस्वरूप, इन विभिन्न अनुकूली परिवर्तनों को रेखांकित करने वाले सामान्य कारकों की जांच करना महत्वपूर्ण है।

(4) प्रजातियों के लिए वितरण की सीमा और जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने की उनकी क्षमता काफी हद तक उनकी लैंडस्केप अनुकूलनशीलता से प्रभावित होती है, जो आम तौर पर उनके जीनोम के भीतर अनुकूली परिवर्तन की क्षमता और जीन को फैलाने की उनकी क्षमता से निर्धारित होती है। इसलिए, प्रजातियों की अनुकूलनशीलता का मूल्यांकन करने के लिए एक लैंडस्केप अनुकूलन सूचकांक विकसित करना आवश्यक है।

संक्षेप में, लैंडस्केप जीनोमिक्स प्रजातियों के अनुकूली विकास का अध्ययन करने के लिए एक प्रभावी दृष्टिकोण है जो आनुवंशिक विविधता के विभिन्न स्तरों वाली पापुलेशन पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति अलग–अलग प्रतिक्रिया दे सकती है। इसलिए, जीनोमिक विविधता के महत्व को समझने व विभिन्न पापुलेशन के लिए लक्षित संरक्षण रणनीतियों को विकसित करने को भविष्य के संरक्षण प्रयासों में प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

संदर्भ

Joost, S., Bonin, A., Bruford, M. W., Després, L., Conord, C., Erhardt, G., et al. (2007). A spatial analysis method (SAM) to detect candidate loci for selection: towards a landscape genomics approach to adaptation. *Molecular Ecology* 16, 3955–3969. doi: 10.1111/j.1365-294X.2007.03442.x

Miao, C. Y., Li, Y., Yang, J., and Mao, R. L. (2017). Landscape genomics reveals that ecological character determines adaptation: a case study in smoke tree (Cotinus coggygria Scop.). *BMC Evolutionary Biology* 17:202. doi: 10.1186/s12862-017-1055-3

Poelchau, M. F., and Hamrick, J. L. (2012). Differential effects of landscape-level environmental features on genetic structure in three codistributed tree species in Central America. *Molecular Ecology* 21, 4970–4982. doi: 10.1111/j.1365-294X.2012.05755.x

Capblancq, T., Fitzpatrick, M. C., Bay, R. A., Exposito-Alonso, M., & Keller, S. R. (2020). Genomic prediction of (mal) adaptation across current and future climatic landscapes. *Annual Review of Ecology, Evolution, and Systematics*, 51(1), 245-269.

Rellstab, C., Dauphin, B., & Exposito-Alonso, M. (2021). Prospects and limitations of genomic offset in conservation management. *Evolutionary Applications*, 14(5), 1202-1212.

Layton, K. K. S., Snelgrove, P. V. R., Dempson, J. B., Kess, T., Lehnert, S. J., Bentzen, P., & Bradbury, I. R. (2021). Genomic evidence of past and future climate-linked loss in a migratory Arctic fish. *Nature Climate Change*, 11(2), 158-165.

Storfer, A., Patton, A., & Fraik, A. K. (2018). Navigating the interface between landscape genetics and landscape genomics. Frontiers in genetics, 9, 68.

Liggins, L., Treml, E. A., & Riginos, C. (2020). Seascape genomics: contextualising adaptive and neutral genomic variation in the ocean environment. Population genomics: *Marine organisms*, 171-218.

Grummer, J. A., Beheregaray, L. B., Bernatchez, L., Hand, B. K., Luikart, G., Narum, S. R., & Taylor, E. B. (2019). Aquatic landscape genomics and environmental effects on genetic variation. *Trends in ecology & evolution*, 34(7), 641-654.

Teng, X. K., and Xiao, H. S. (2009). Perspectives of DNA microarray and next-generation DNA sequencing technologies. *Science China Life Sciences* 52, 7–16. doi: 10.1007/s11427-009-0012-9

Lotterhos, K. E., & Whitlock, M. C. (2015). The relative power of genome scans to detect local adaptation depends on sampling design and statistical methods. *Molecular Ecology*, 24(5), 1031-1046.

सह्याद्री पर्वतमाला की सजावटी मछलियों में समृद्ध विविधता और अनोखी स्थानिकता

साईकृष्णन के.आर., अभिलाष सी.पी., सरथ वर्गीज, वेदिका मसराम, चरन रवि, एवं वी.एस. बशीर

पीएजीआर केंद्र, भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, कोच्चि

पश्चिमी घाट, अक्सर सह्याद्री पर्वत श्रृंखला के रूप में जाना जाता, दक्षिण–पश्चिमी भारत में एक ऐसा क्षेत्र है जो अपनी अविश्वसनीय जैव विविधता के लिए प्रसिद्ध है। यह क्षेत्र दुनिया भर के 34 जैव विविधता "हॉटस्पॉट" में से एक है, जिसकी विशेषता समृद्ध प्रजाति विविधता और स्थानिकता का उच्च स्तर हैं, जिसमें मीठे पानी की मछलियों की एक बड़ी विविधता शामिल है। लगभग 1,60,000 वर्ग किलोमीटर का एक अनूठा क्षेत्र गुजरात, महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु में फैला हुआ है। इसकी कई प्रजातियाँ पश्चिमी घाटों के लिए स्थानिक हैं, जो इसे एक महत्वपूर्ण संरक्षण क्षेत्र बनाती हैं। पश्चिमी घाट के इस क्षेत्र को इसके राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभयारण्यों और आरक्षित वनों के पारिस्थितिक महत्व के कारण 2012 में विश्व धरोहर स्थल नामित किया गया है। विश्व बैंक ने एशिया के मीठे पानी की जैव विविधता के तकनीकी पत्र में, पश्चिमी घाट को दस जैव विविधता हॉटस्पॉट में से एक नामित किया है। इस मान्यता के परिणामस्वरूप, इस क्षेत्र के भीतर समृद्ध जलीय जीवन को संरक्षित करने के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। पश्चिमी घाट मछलियों की कई प्रजातियों का घर है, जिसमें खाद्य मछलियाँ और सजावटी मछलियाँ शामिल हैं, जो इसे जैव विविधता संरक्षण और मत्स्य प्रबंधन के लिए एक महत्वपूर्ण क्षेत्र बनाती हैं।

पश्चिमी घाट में किए गए अध्ययनों से मीठे पानी की मछलियों के उल्लेखनीय विविधता का पता चला है। पश्चिमी घाट में मीठे पानी की मछलियों के व्यापक संकलन में लगभग 300 प्रजातियाँ सूचीबद्ध की गई हैं, अनुमान है कि उनमें से 60% इसी क्षेत्र में स्थानिक हैं, जिनमें से 155 सजावटी मछलियाँ थीं, जिनमें 117 उस क्षेत्र की स्थानिक मछलियाँ शामिल थीं (Gopalakrishnan and Ponniah (2000); Kumar and Devi, 2013)। पश्चिमी घाट 22 स्थानिक प्रजातियों का भी घर है, जिनमें से कई मोनोटाइपिक (एक ही प्रजाति वाले) हैं, साथ ही दो मोनोटाइपिक और स्थानिक परिवार (Britz et al. 2019; Raghavan et al. 2021, Dahanukar et al. 2011) भी हैं। Arunachalam (2000) के अनुसार, इस क्षेत्र के अद्वितीय

सूक्ष्म आवास और पारिस्थितिक स्थान इस क्षेत्र की जैव विविधता को और उजागर करते हैं। पश्चिमी घाट की सजावटी मछलियाँ अपने आकर्षक रंगों, अनोखे पैटर्न और दिलचस्प व्यवहार के कारण एक्वेरियम के शौकीनों के बीच लोकप्रिय हैं। यहाँ कुछ उल्लेखनीय प्रजातियाँ दी गई हैं:

बार्ब्स और उनके सहयोगी

साइप्रिनफॉर्म ऑर्डर की मछलियाँ दक्षिण एशिया में व्यापक और विविध हैं, उनके शरीर शल्क से ढके होते हैं, उनके मुंह के चारों ओर बारबेल होते हैं, और उनके जबड़ों में कोई दांत नहीं होते हैं। अक्सर चमकीले रंग की और सर्वाहारी, ये मछलियाँ लोकप्रिय एक्वेरियम मछलियाँ हैं। केरल की सबसे प्रतिष्ठित सजावटी मछली, मिस केरला, जिसे सह्याद्रिया डेनिसोनी के नाम से जाना जाता है, ने बढ़ती मांग के साथ अंतर्राष्ट्रीय बाजार में सनसनी मचा दी है। मिस केरला पेरियार उत्तर से चंद्रगिरी तक सभी पश्चिम की ओर बहने वाली नदियों में पाई जाती है, जिसमें अधिकांश सजावटी मछलियाँ वलपट्टनम और चंद्रगिरी में पाई जाती हैं। मछलियों का एक और समूह है जिसे चमकीले रंग की पूंछ और नर में विस्तारित पृष्ठीय पंख के कारण फिलामेंट बार्ब्स के रूप में जाना जाता है। डॉकिन्सा जीनस की ये मछलियाँ पश्चिमी घाट और श्रीलंका में पाई जाती हैं। सभी प्रजातियों के शरीर पर प्रमुख काले धब्बे होते हैं। सजावटी मछलियों की कई प्रजातियाँ हैं जो दिलचस्प हैं जैसे *डॉकिन्सिया एक्सक्लेमेटियो,डी. टैम्ब्रापार्नीई, डी. अरुलियस डी. रूब्रोटिंक्टस,* और *डी. एसिमिलिस. मेलन बार्ब्स, हलुदरिया फ़ेसिआटा* और *पेथिया जीनस* से संबंधित प्रजातियाँ एक्वारिस्ट के बीच लोकप्रिय छोटे बार्ब्स में से हैं। इस समूह के सबसे छोटे सदस्यों में से, होराडांडिया ब्रिटानी उन लोगों के बीच लोकप्रिय है जो पानी के नीचे बगीचे बनाए रखते हैं।

डैनियोनिन मछली बार्ब से बहुत मिलती–जुलती है और इसका शरीर सुव्यवस्थित होता है। यह सतह के पास तैरना पसंद करती है। *देवरियो मालाबारिकस,* मालाबार या विशाल डैनियो, प्लांटेड एक्वेरिया में लोकप्रियता हासिल करने वाली पहली मछलियों में से एक थी। *लौबुका फासियाटा,* धारीदार हैचेटफिश और *लौबुका डैडीबुर्जोरी,* नियॉन हैचेटफिश, दोनों बहुत कम आम हैं लेकिन फिर भी मांग में हैं। हिल ट्राउट या बैरल ट्राउट, पिछली प्रजातियों के बड़े बढ़ते रिश्तेदार हैं, जिनमें सेंट्रल केरल से बैरिलियस बेकरी, मालाबार क्षेत्र से *बी. मालाबारिकस,* कावेरी से *बी. बेंडेलिसिस* और *बी. गेटेंसिस* और चंद्रगिरी से *बी. कैनारेंसिस* एक्वैरिया में जगह पाते हैं। हाल ही में खोजी गई प्रजाति *बैरिलियस मालाब्रिकस,* शायद सबसे ज्यादा मांग में है। हाइपसेलोबार्बस वंश में कई बार्ब हैं जो काफी रंगीन हैं, जैसे *एच. जेरडोनी, एच थॉमसी, एच. लिथोपिडोस, एच. करमुका* और *एच. कुराली*। इन बार्ब्स के पंख खासकर किशोरों में एक अलग लाल या काले रंग के होते हैं।

पर्सिफॉर्म मछलियाँ

स्पाइक टेल्ड पैराडाइज फिश, *स्यूडोस्फ्रोमेनस डेई,* केरल की पहली मछलियों में से एक थी जो विदेशों में लोकप्रिय हुई, जिसे 1912 में "द एक्वेरियम" पत्रिका (वॉल्यूम 1 नंबर 6) के कवर पर दिखाया गया था। स्नेकहेड, जो हवा में सांस लेते हैं, बाजारों में भी लोकप्रिय एक्वेरियम मछली हैं। *चन्ना मारुलियस* और विशाल *सी. डिप्लोग्राम,* दोनों की लंबाई दो फीट से अधिक हो सकती है, शौकीनों के बीच काफी मांग है। यहां तक कि छोटी *चन्ना गचुआ* भी लोकप्रिय है, जो शायद ही कभी छह इंच से अधिक की ऊंचाई तक पहुंचती है।

प्रिस्टोलेपिस जीनस में 'लीफ फिश' की दो प्रजातियां शामिल हैं जो लोकप्रिय एक्वेरियम मछली भी हैं। *प्रिस्टोलेपिस रूब्रिपिनिस* के पंख रक्त लाल होते हैं, जबकि *पी. मार्जिनटा* का शरीर गहरा और पंख सफेद किनारों वाले होते हैं। लोकप्रिय एक्वेरियम मछली होने के अलावा, *एट्रोप्लस सुराटेन्सिस* भी एक स्वादिष्ट व्यंजन है, साथ ही इसकी चचेरी बहन *स्यूडेट्रोप्लस मैकुलेटस,* जिसे हाल ही में नारंगी रंग के एक्वेरियम स्ट्रेन के रूप में विपणन किया गया है।

निचले इलाकों में रहने वाले जीवों में लोचेस, कैटफिश और अन्य मछलियाँ

पश्चिमी घाट में, आप कई छोटे, रंगीन और कभी–कभी अजीब आकार के तल–निवासी पा सकते हैं जो तेज गति से बहते पानी में रहने के लिए अनुकूलित हैं। पश्चिमी घाट में पाए जाने वाले छोटे लोच, विशेष रूप से शिस्टुरा और मेसोनोमेचेइलस प्रजाति के लोच, बेहतरीन एक्वेरियम मछली बनाते हैं। केरल की पश्चिम की ओर बहने वाली नदियों में लोच की एक लोकप्रिय प्रजाति *मेसोनोमेचेइलस ट्राइंगुलरिस* है। इसके अलावा *एम. गुएंथेरी* और *एम. पेट्टबनारेस्कुई* भी देखे जाते हैं। शिस्टुरा जिसे आम तौर पर क्रिमसन लोच के रूप में जाना जाता है, सबसे लोकप्रिय प्रजाति है। 15 साल से भी पहले, इस छोटी मछली ने तब सनसनी मचा दी थी जब यह शौक में शामिल हुई थी, लेकिन तब से यह कभी–कभार ही उपलब्ध है।

कैटफिश की लोकप्रियता कभी भी उनके संबंधियों के स्तर तक नहीं पहुँची है। सबसे आम तौर पर होराबैग्रस की दो प्रजातियाँ पाई जाती हैं; मंजा कूरी, *एच. ब्रैकीसोमा* और छोटी *एच. निग्रीकोलारिस*। ग्लाइप्टोथोरैक्स और स्यूडोलागुविया छोटी हिलस्ट्रीम कैटफिश हैं जिन्हें कभी–कभी एक्वेरियम में रखा जाता है। हालाँकि, उनकी विशिष्ट प्रकृति के कारण उनकी लोकप्रियता सीमित है।

पश्चिमी घाट की नदियों में गर्रा प्रजाति के कई विशेष तल निवासी भी पाए जाते हैं, जिनमें से कुछ एक्वेरियम के लिए उपयुक्त हैं। चालक्कुडी और पेरियार नदियों में पाई जाने वाली *गर्रा सुरेन्द्रनाथानी* एकमात्र ऐसी प्रजाति है जिसने एक्वारिस्ट का ध्यान आकर्षित किया है। सिसिओप्टेरस ग्रिसियस सभी पश्चिम की ओर बहने वाली नदियों में पाया जा सकती है, और इसके शानदार पंख और रंग इसे एक बेहतरीन एक्वेरियम मछली बनाते हैं।

सह्याद्रिया पर्वत श्रृंखला की स्थानिक सजावटी मछलियाँ

सह्याद्रिया डेनिसोनी

पेथिया सेतनाई

होराडांडिया ब्रिटानी

हाइपसेलोबारबस जेरडोनी

देवारियो मालाबारिकस

प्रिस्टोलेपिस रूब्रिपिनिस

चन्ना डिप्लोग्राम

होराबाग्रस ब्राचिसोमा

होराबाग्रस निग्रीकोलारिस

मेसोनोमेचेइलस ट्राइंगुलरिस

गररा स्टेनोरहिन्कस

एप्लोचेइलस लाइनिएटस

कैरिनोटेटाओडोन टावैंकोरिकस

किलिफिश और बौना पफरफिश

एप्लोचेइलस लाइनिएटस मीठे पानी में यह सर्वव्यापी है, और यह अन्य देशों में भी एक लोकप्रिय सजावटी मछली है। मादाओं की तुलना में, नर काफी अधिक रंगीन होते हैं। बहुत छोटी और उससे भी अधिक भड़कीले रंग की, ए ब्लॉकी भी होती है जिसे कभी–कभी एक्वेरियम में रखा जाता है। बौना पफर पश्चिमी घाट में पाई जाने वाली एक अनोखी सजावटी मछली है। इसकी अधिकतम लंबाई दो इंच से भी कम होती है, यह एक छोटी मछली है जिसका व्यवहार बहुत विस्तृत होता है, जिसमें नर द्वारा बच्चे की देखभाल करना भी शामिल है। भारत में पश्चिमी घाट जैव विविधता का केंद्र है, जिसमें मीठे पानी की मछलियों की विविधता शामिल है। इस क्षेत्र की देशी सजावटी मछलियाँ न केवल एक्वेरियम में आकर्षक वस्तुएँ हैं, बल्कि इस अद्वितीय पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के लिए राजदूत के रूप में भी काम करती हैं। इन प्रजातियों को एक्स–सीटू और इन–सीटू रणनीतियों के माध्यम से संरक्षित करने के प्रयास उनकी आनुवंशिक विविधता की रक्षा करने और भविष्य की पीढ़ियों के लिए उनके अस्तित्व को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं। जिम्मेदार संग्रह और व्यापार प्रथाओं को बढ़ावा देने और संरक्षण पहलों को विकसित करके, पश्चिमी घाट अपने उल्लेखनीय जलीय जीवन के लिए एक अभयारण्य बने रह सकते हैं। पश्चिमी घाट में सजावटी मछलियों के संरक्षण का उद्देश्य केवल देशी प्रजातियों को संरक्षित करना ही नहीं अपितु उससे भी अधिक है।

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो ने क्षेत्रीय संस्थाओं के साथ सहयोग करके व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण और लुप्तप्राय मीठे पानी की प्रजातियों के संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। सजावटी मछली प्रजनन और पालन पर नेटवर्क परियोजना के तहत, भाकृअनुप–रा.म.आनु.सं. ब्यूरो ने पश्चिमी घाटों में स्थानिक पाँच देशी सजावटी मछलियों के लिए सरल गैर–आक्रामक कैप्टिव प्रजनन तकनीक और निरंतर बीज उत्पादन विकसित किया है। इन मछलियों में *पेथिया सेंटाई, पी निग्रिपिनिस, डॉकिन्सिया अरुलियस, डी रूब्रोटिंक्टस* और *डी टैम्ब्रापैरेनी* शामिल हैं। देशी सजावटी मछलियों को बढ़ावा देने और दीर्घकालिक टिकाऊ उत्पादन के लिए जंगली मछलियों पर निर्भरता कम करने के लिए, प्रजनन प्रोटोकॉल को मत्स्य पालन विभाग के साथ–साथ सजावटी उद्यमियों को हस्तांतरित कर दिया गया।

इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि पश्चिमी घाट जलीय जीवन की एक समृद्ध संपदा प्रदान करते हैं जिसने दशकों से एक्वारिस्टों को प्रसन्न किया है। पश्चिमी घाट से ज्ञात लगभग 300 मीठे पानी की मछली प्रजातियों में से 155 सजावटी मछली प्रजातियाँ हैं, जिनमें 117 इस क्षेत्र की स्थानिक प्रजातियाँ शामिल हैं। मूल्यवान खाद्य मछली होने के अलावा, इनमें से कई मछलियाँ छोटी संख्या में जीवित मछली व्यापार के लिए भी एकत्र की जाती हैं, हालाँकि, वन्य कार्प्स की स्थिरता के बारे में चिंताएँ जताई गई हैं। वास स्थल का नुकसान जलीय जीवन के लिए सबसे बड़ा खतरा बना हुआ है, और लोकप्रिय प्रजातियों के लिए कैप्टिव प्रजनन और पालन तकनीक विकसित करने के प्रयास जलीय संसाधनों को स्थायी रूप से संरक्षित और उपयोग करने का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं।

संदर्भः

Britz, Ralf, Anoop, V.K., Dahanukar, N. & Raghavan, R. 2019. The subterranean *Aenigmachannagollum*, a new genus and species of snakehead (Teleostei: Channidae) from Kerala, South India. *Zootaxa* **4603**(2): 377–388.

Dahanukar, N., M. Diwekar&M. Paingankar (2011). Rediscovery of the threatened Western Ghats endemic sisoridcatfish *Glyptothoraxpoonaensis* (Teleostei:Siluriformes: Sisoridae). *Journal of Threatened Taxa* **3**(7): 1885–1898.

Gopalakrishnan, A. and A.G. Ponniah, 2000. An overview of "endemic fish diversity of western Ghats". pp. 1-12. In Ponniah, A.G. and A. Gopalakrishnan (eds.). Endemic Fish Diversity of Western Ghats. NBFGR-NATP Publication. National Bureau of Fish Genetic Resources, Lucknow, U.P., India. 1,347 p.

Kumar, R. and Devi, K.R., 2013. Conservation of freshwater habitats and fishes in the W estern G hats of India. *International Zoo Yearbook*, **47**(1), pp.71-80.

Raghavan R, Britz R, Dahanukar N (2021) Poor groundwater governance threatens ancient subterranean fishes. *Trends in Ecology and Evolution* **36**: 875–878. https://doi.org/10.1016/j.tree.2021.06.007

मछलियों की त्वचा श्लेष्मा का पारिस्थितिक कार्य

प्रवीण मौर्य एवं कविता कुमारी

भाकृअनुप–केंद्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

भूमिका

'मत्स्य पारिस्थितिकी' का तात्पर्य मछलियों और उनके जलीय पर्यावरण के बीच अंतःक्रिया को माना जाता है। मुख्यतः पारिस्थितिकी विज्ञान द्वारा जल के जैविक और अजैविक कारकों की क्रिया, और उनके बीच के पारस्परिक सह–संबंध को समझा जाता है। विभिन्न पर्यावरणीय बाधाओं, अवधारणाओं, और चिंताओं का जलीय जीवों (विशेष रूप से मछलियों) पर 'क्या' और 'कितना' प्रभाव पड़ता है, वैज्ञानिक दृष्टि से इसका अध्ययन किया जाता हैं। पौराणिक काल से ही मछलियाँ और अन्य जलीय जीव मनुष्य के सामाजिक और सांस्कृतिक पहलू का एक महत्वपूर्ण अंग रहे है। क्षेत्र विशेष में रहने वाले आर्थिक रूप से पिछड़े या सम्पन्न समाज के लोग मछलियों का सेवन भोजन के रूप में करते है क्यूँकी मछलियाँ सस्ती और पौष्टिक तत्वों से भरी होती हैं। 'जल में जीवन है, जल से ही जीवन है' ये आदर्श वाक्य मछलियों और अन्य जीवों के साथ–साथ हानिकारक या लाभकारी सूक्ष्मजीवों के विकास का भी मुख्य आधार बनता है इसीलिए मछलियों को हानिकारक सूक्ष्मजीवों के वर्चस्व और हमलों से निजात पाने के लिए श्लेष्मा संबंधी उपकला (एपथीलीयम सहित अन्य जीवित कोशिकाएँ) की अवरोधक क्षमता को मजबूत रखना पड़ता हैं।

मछलियों में श्लेष्मा की महीन परत कई अंगों (आंत, त्वचा और गलफड़े) में पाई जाती है और सहज रक्षात्मक प्रणाली का मुख्य हिस्सा होती है जिसमें कई प्रतिरक्षा कारक और जैविक अणु (जैसे पूरक प्रोटीन, प्रोटीएज़, एस्टरेसिस, लाइसोजाइम, एंटीमाइक्रोबियल (सूक्ष्मजीवीरोधी) पेप्टाइड, आदि) सम्माहित होते हैं। मछलियों की त्वचा

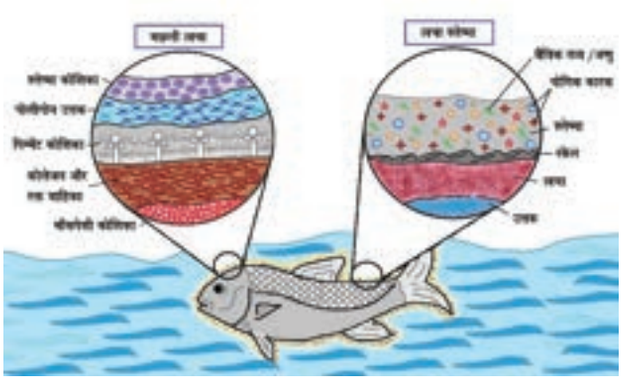

श्लेष्मा में मुख्य रूप से पानी (95%) और म्यूसिन (अति ग्लाइकोसिलेटेड प्रोटीन) सबसे अधिक मात्रा में होता है। मछलियों में श्लेष्मा कई पारिस्थितिक भूमिकाएँ निभाती है जैसे परासरणनियमन (ऑस्मोरग्यूलेशन), छलावरण (कैमोफ्लाज), संकेतक, स्नेहक, घर्षण से सुरक्षा, रोगाणु निवारण, पर्यावरणीय विषाक्तता से सुरक्षा, भोजन प्रग्रहण, सूक्ष्मजीव सहजीविता, और रासायनिक संपर्क क्षमता। पिछले कुछ दशकों से पूरे विश्व में श्लेष्मा पर हो रहे विभिन्न वैज्ञानिक अध्ययन पारिस्थितिक स्थिरता में मछलियों की जन्मजात प्रतिरक्षा प्रणाली के महत्व को दर्शाते है। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा का पारिस्थितिक कार्य उनके प्राकृतिक आवासों और समग्र स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण होता है। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा मुख्यतः आस–पास के जलीय वातावरण के लिए एक बहुक्रियाशील अवरोधक और सुरक्षा कवच के रूप में कार्य करती हैं। मछलियों में श्लेष्मा एक पतली भौतिक बाधा के रूप में बनती रहती है जो जलीय वातावरण में उपस्थित बाह्य रोगजनक कारकों (सूक्ष्मजीव, कवक, वगैरह) को आंतरिक परिवेश (त्वचा, चोट, या अन्य जगहों) में प्रवेश करने से रोकती हैं। मछलियों में प्रतिरक्षा प्रणाली के अंतर्गत प्रथम रक्षा पंक्ति के तौर पर श्लेष्मा का निर्माण उपकला को ढकने के लिए होता है ताकि बाहरी संक्रमण को शुरुआत में ही रोका जा सके। त्वचा श्लेष्मा में पाए जाने वाले प्राकृतिक और भौतिक जैव–रासायनिक जैविक कारक मछलियों की पारिस्थितिकी के लिए बहुत उपयोगी होते है और जलीय वातावरण में मुख्य रूप से जल, युग्मकों, गंधकों, हार्मोन, पोषक तत्वों, और गैसों के आदान–प्रदान में भी मदद करते है। त्वचा श्लेष्मा में जल के प्रवाह द्वारा कण, जीवाणु, कवक, विषाणु, परजीवी, या अन्य जैविक–अजैविक तत्व फंस जाते हैं और हट भी जाते हैं क्योंकि श्लेष्मा लगातार स्रावित और प्रतिस्थापित होती रहती है या कभी–कभी जल की तेज धार के कारण भी ऐसा मुमकिन होता है। त्वचा श्लेष्मा में व्याप्त प्रोटीन, पेप्टाइड, या ग्लाइको–पेप्टाइड जैसे सक्रिय जैविक अणुओं को जलीय वातावरण में उच्च तापमान और द्रवचालित (हाइड्रोलिक) दबाव जैसी गंभीर परिस्थितियों के रहते हुए भी अपनी गतिविधियों को बनाए रखना आवश्यक होता है। त्वचा श्लेष्मा की संरचना और विशेषताएँ इसके प्रतिरक्षा

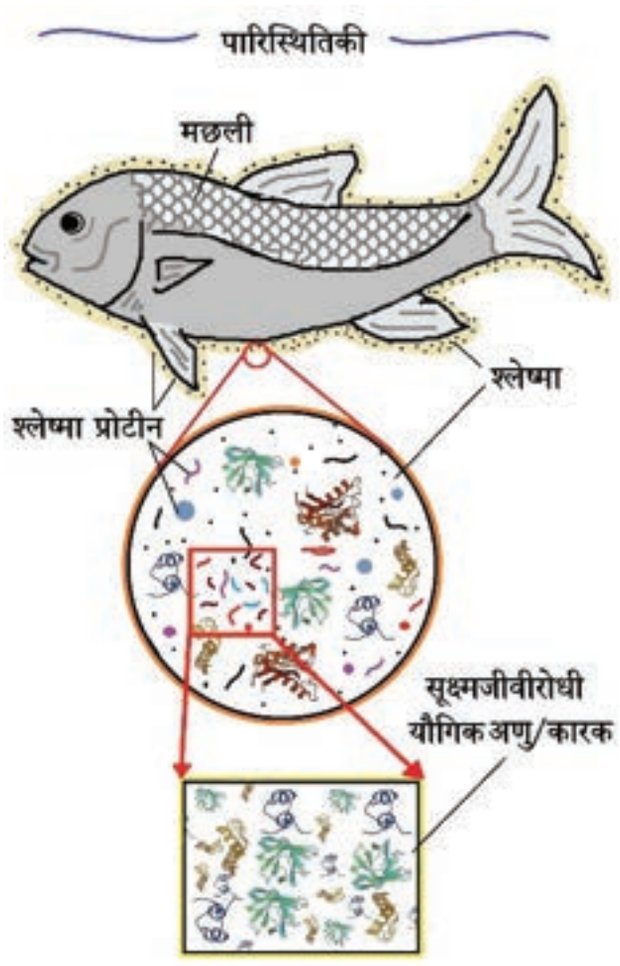

कार्यों के रखरखाव के लिए बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। ये अधिक चिपचिपी होती है जिसके लिए ग्लाइकोप्रोटीन, लिपिड, और पीएच महत्वपूर्ण रूप से निर्धारणकर्ता का कार्य करते हैं।

त्वचा श्लेष्मा स्राव में लिपिड और फैटी–एसिड के सहसंयोजन से तंतुओं (विभिन्न फ़ाइबर) के बीच जुड़ाव होता रहता है जिससे श्लेष्मा की श्यानक–लचक (विस्को–इलास्टिसिटी) बढ़ती रहती हैं। शरीर के अंदर या बाहर स्थित विषाक्त और अवांछित पदार्थ मछलियों में त्वचा श्लेष्मा स्राव को बहुत बढ़ा सकते है जिससे यह आवरण गहन और गाढ़ा होकर मोटा हो जाता है। विभिन्न मछली प्रजातियों की त्वचा श्लेष्मा के कई पारिस्थितिक कार्य देखने को मिलते है जिनकी वैज्ञानिक शोध कार्यों द्वारा पुष्टि भी की गई है जैसे सूक्ष्मजीवों पर नियंत्रण और उनका निवारण, जल व्यवस्था में परासरण विनियमन गतिविधि का संचालन, सूक्ष्मजीवी सहजीविता संबंध का निर्वहन, शरीर और वातावरण के बीच में आयन विनियमन का संचालन, छलावरण, स्नेहक, आदि। संक्रमण होने के पश्चात मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में एक या एक से अधिक उपर्युक्त रोगाणुरोधी घटकों की अभिव्यक्ति में वृद्धि देखी गई है। मछलियों के अलावा कई एककोशिकीय (जैसे जीवाणु, आदि) या बहुकोशिकीय (जैसे घोंघा, आदि) जीव भी अपनी त्वचा पर श्लेष्मा का रिसाव करते हैं जिसकी चिपचिपी विशेषता का प्रयोग सतहों से चिपके रहने के लिए किया जाता हैं। कई छोटी मछलियाँ जल में विद्यमान पोषक तत्वों को इकट्ठा करने के लिए भी अपनी त्वचा श्लेष्मा का प्रयोग करती देखी गई हैं। पारिस्थितिक दृष्टिकोण से मछलियों की त्वचा श्लेष्मा के प्रमुख कार्यों का विस्तृत विवरण इस प्रकार है:

(1) **परासरणनियमन और आयनिक संतुलनः** मछलियों की त्वचा श्लेष्मा के शोध कार्यों से प्राप्त तथ्य इस ओर इंगित करते है कि श्लेष्मा का मछलियों के जीवन से जुड़े कई महत्वपूर्ण कार्यों जैसे परासरणनियमन में अहम भूमिका होती है। अलवणीय (लवण रहित) और समुद्री (लवण सहित) दोनों ही प्रकार के जलीय वातावरणों में प्रवास करने वाली मछलियाँ जीवित रहने के लिए अपने शरीर में आयनिक संतुलन को बनाए रखती है। श्लेष्मा की महीन परत एक अर्ध–पारगम्य अवरोध के रूप में कार्य करती है जो मुख्यतः समुद्री प्रजातियों में होने वाले किसी भी प्रकार के आयनिक असंतुलन को रोकती है। अलवणीय जल में रहने वाली मछली प्रजातियाँ त्वचा श्लेष्मा के द्वारा आयन के प्रवाह को अपने शरीर में नियंत्रित या कम कर सकती है। आयनों और जल के अणुओं के आदान–प्रदान को विनियमित करके, श्लेष्मा मछलियों को जल में लगातार बदलते लवणता स्तरों से शरीर के होमोस्टैसिस को बनाए रखने में मदद करती है जो उन मछली प्रजातियों के लिए महत्वपूर्ण होती है जिनका निवास अधिकतर मुहाना होता हैं या उन मछलियों के लिए जो विभिन्न लवणता स्तरों युक्त जल के वातावरण के बीच विचरण या प्रवास करती रहती हैं।

(2) **छलावरणः** त्वचा श्लेष्मा मछलियों को सुरक्षा प्रदान करने के अन्य विकल्पों में भी सहायता उपलब्ध करवाती है जैसे छलावरण, जो सर्वप्रमुख रूप से सुरक्षा प्रबंधन में आता है। छलावरण मुख्यतः परभक्षियों से बचाव के लिए प्रयोग किया जाता है जिसके अंतर्गत कुछ मछलियाँ अपने आस–पास के परिवेश में इस प्रकार घुल–मिल जाती है कि परभक्षियों के लिए उन्हें पहचानना और शिकार करना मुश्किल हो जाता है।

अपने वातावरण के परिवेश में घुलने के लिए मछलियाँ अपनी त्वचा श्लेष्मा की परत का रंग और चमक बदल लेती हैं ताकि किसी के लिए भी उन्हें पहचानना कठिन या असंभव हो जाता है। साथ ही त्वचा श्लेष्मा के फिसलन वाले गुण के कारण परभक्षियों को इस प्रकार की मछलियों को पकड़ना थोड़ा मुश्किल होता है जो मछलियों के लिए बचाव का एक बेहतरीन प्रयास होता है।

(3) **रासायनिक संचार और सामाजिक संपर्क:** मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में रासायनिक संकेतक भी मौजूद होते है, जो संचार का एक रूप है और कई पारिस्थितिक संपर्कों में आवश्यक है। मछलियों की बाहरी त्वचा पर श्लेष्मा का विस्तार अंतर– और अंतर–विशिष्ट रासायनिक संचार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। श्लेष्मा के माध्यम से निकलने वाले फेरोमोन और अन्य रासायनिक संकेतन प्रजनन स्थिति, क्षेत्रीय सीमाओं या तनाव प्रतिक्रियाओं जैसी महत्वपूर्ण जानकारी देते हैं। कुछ प्रजातियों में श्लेष्मा, साथी को आकर्षित करने या सामाजिक पदानुक्रम स्थापित करने में भी भूमिका निभाती है। इसके अलावा, श्लेष्मा में रासायनिक संकेतों का उपयोग परजीविओं को दूर भगाने या आस–पास के खतरों के प्रति सचेत करने के लिए भी किया जाता है।

(4) **शारीरिक क्षति से सुरक्षा:** गतिशील परंतु निरंतर बदलते जलीय वातावरण में मछलियाँ अपनी श्लेष्मा परत के द्वारा किसी भी प्रकार के त्वचा–घर्षण से बच जाती है। श्लेष्मा की यह चिकनी परत स्नेहक के रूप में कार्य करती है। मछलियाँ का अधिकतर जीवन चट्टानी सतहों, वनस्पतियों, और तेज़ गति की जल धाराओं के बीच बीतता है और यदा कदा शारीरिक नुकसान की संभावना भी बनी रहती है। त्वचा पर किसी भी प्रकार का घाव होने से भी श्लेष्मा इस घाव को तुरंत भरने में बहुत मददगार साबित होती है। मछलियों के चारों ओर फैले श्लेष्मा का स्वरूप एकरूपता और सुव्यवस्थित गुणात्मकता वाला होता है जिसे मछलियाँ अपनी तैराकी क्षमता को बढ़ाने में भी प्रयोग करती है।

(5) **रोगजनकों के विरुद्ध सुरक्षा:** मछलियों की त्वचा श्लेष्मा जलीय वातावरण में व्याप्त अनेकानेक प्रकार के रोगजनकों और परजीवियों से निपटने के लिए एक प्राकृतिक और सुदृड़ रक्षापंक्ति साबित होती है। त्वचा श्लेष्मा की परत में विभिन्न कार्यों में निपुण रोगाणुरोधी पेप्टाइड, किण्वक (एंजाइम), इम्युनोग्लोबुलिन (आईजी) और अन्य जैवसक्रिय यौगिकों की भरमार होती है जो हानिकारक जीवाणु (बैकटीरिया), विषाणु (वायरस), परजीवी (पैरासाइट), कवक (एलगी), आदि के आक्रमण और विकास को रोकते है। जल में बहते हुए यह मछलियों की त्वचा से चिपक कर रक्षात्मक प्रक्रिया के तहत श्लेष्मा में रहते है और गैर–विशिष्ट या कभी–कभी विशिष्ट क्रिया के तहत रासायनिक रक्षा सूत्र बनाकर रोगजनकों को अस्थिर या पूर्णतः विध्वंस कर देते हैं। इसके अलावा, मछलियों की त्वचा श्लेष्मा अपनी संरचना विशेषता के कारण परजीवियों को तटस्थ परिस्थिति में समाप्त कर देती है और किसी भी प्रकार के संभावित संक्रमण से अपने आप को बचा लेती हैं। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में सम्माहित प्रमुख जीवाणुरोधी यौगिकों और उनकी पारिस्थितिक कार्यों का अवलोकन इस प्रकार हैः (अ) लाइसोजाइम – ये एक ऐसी श्रेणी के किण्वक (एंजाइम) होते हैं जो विशेष रूप से किसी भी जीवाणु (ग्राम–पॉजिटिव) की कोशिका भित्ति (पेप्टिडोग्लाइकन परत) को हाइड्रोलाइज कर देते हैं। इस प्रकार की किण्विक क्रिया (एंजाइमेटिक ऐक्टिविटी) कुछ ही समय में कोशिका को विखंडित करके हमलावर जीवाणु को मृत्यु की ओर ले जाती है। ये प्रोटीन, डीएनए और आरएनए घटकों से बंधकर विषाणुओं को भी नष्ट कर देते है। विभिन्न जीवों की प्रजातियों में पाए गए लाइसोजाइम के अनुसार इनकों तीन समूहों में विभाजित किया गया है यानि की 'सी (c)–प्रकार', 'जी (g)–प्रकार', और 'आई (i)–प्रकार' लाइसोजाइम। दिलचस्प बात यह है कि विभिन्न मछली प्रजातियों में 'सी–प्रकार' लाइसोजाइम की जीवाणुनाशक गतिविधियों को कई बार देखा गया है जो इनकी व्यापकता को दर्शाता है। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में मौजूद लाइसोजाइम एक महत्वपूर्ण रासायनिक सुरक्षा प्रदान करते हैं; (ब) इम्युनोग्लोबुलिन या एंटीबॉडी (आईजी) – मछलियों में केवल तीन मुख्य इम्युनोग्लोबुलिन प्रकार (आईजी आइसोटाइप) होते है – आईजी एम (IgM), आईजी डी (IgD), और आईजी टी/जेड (IgT/Z) जो त्वचा, गलफड़ों, आंत, नासिका, मुख, और ग्रसनी कोशिकाओं की श्लेष्मा स्रावों में अलग–अलग अनुपात में पाए जाते हैं। मुख्यतः आईजी एम ही मछलियों की त्वचा श्लेष्मा आधारित प्रतिरक्षा प्रणाली में प्रमुख भूमिका निभाते है।

जैविक संक्रमण होने पर ये एंटीबॉडी एक सुनिश्चित प्रतिक्रिया के अंतर्गत जीवाणुओं के एक भाग को 'एंटीजन' की तरह चिह्नित करते हैं जिससे प्रतिरक्षा कोशिकाएँ इन्हें योजनाबद्ध तरीके से नष्ट कर देती है। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में इम्युनोग्लोबुलिन का घनत्व या उपस्थिति किसी विशिष्ट जीवाणु रोगजनक के प्रति अनुकूली प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया की तरफ इंगित करती है; (स) प्रोटीएज – ये किण्वकों (एंजाइम) के एक ऐसे समूह को संदर्भित करता है जिनकी जन्मजात प्रतिरक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका होती है और ये मछलियों की श्लेष्मा में विभिन्न स्वरूप में पाए जाते हैं। त्वचा श्लेष्मा में उपस्थित प्रोटीएज मुख्य रूप से जीवाणुओं के संक्रमण को रोकते हैं और श्लेष्मा के गुणों के बारे में विस्तार से समझने में मदद देते है। इनका यह उत्प्रेरक कार्य एक विधि की तरह होता है। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में मौजूद प्रोटीएज (जैसे ट्रिप्सिन और काइमोट्रिप्सिन) मुख्य रूप से जीवाणुओं के प्रोटीन के पेप्टाइड बॉन्ड को हाइड्रोलाइज करके उन्हें समाप्त कर देते है जिससे प्रोटीएज की जीवाणुरोधी क्षमता का पता चलता हैं। प्रोटीएज मछलियों की त्वचा श्लेष्मा के भीतर रहकर अन्य रोगाणुरोधी अणुओं को भी सक्रिय कर देते हैं जिससे जीवाणुओं की निकासी तुरंत हो पाती है; (द) लेक्टिन – ये वो प्रोटीन होते हैं जिनका सहसंबंध कार्बोहाइड्रेट के साथ रहता हैं इसलिए ये विशेष कोशिकाओं के समूहन (एग्लूटनेशन) या ग्लाइकोकोनजुगेट्स और पॉलीसेकेराइड का अवक्षेपण (प्रेसिपिटेशन) जैसे कार्य करते हैं। मछलियों में लेक्टिन, कोशिका के अंदर (जैसे सीरम, आदि) और बाहर (जैसे त्वचा श्लेष्मा, आदि) दोनों जगहों में जैविक तरल के साथ पाए जाते हैं। मछलियों में यह प्रतिरक्षा कार्यों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। लेक्टिन अपनी कार्बोहाइड्रेट–बंधक (बाइंडिंग) क्षमता के कारण जीवाणुओं की सतह पर स्थित विशिष्ट तरीके के शुगर समूह को पहचान लेते है और उनसे बंधकर अपनी विशिष्ट कार्य को अंजाम देते हैं। इस तरह वे किसी भी हानिकारक जीवाणु को मछली की त्वचा में प्रवेश करने और श्लेष्मा में देर तक निवास करने से रोकते हैं। इस तरह से समय रहते मछलियों को अपनी प्रतिरक्षा प्रणाली को उत्प्रेरित करने का अवसर भी मिल जाता हैं जिससे जीवाणुओं को आसानी से मारा जा पाता हैं। कुछ लेक्टिन इस प्रकार की प्रक्रिया के दौरान हानिकारक जीवाणुओं का समूहन (एग्लूटनेशन) भी कर देते हैं ताकि प्रतिरक्षा प्रणाली द्वारा उन्हें आसानी से खत्म किया जा सके; (य) पूरक प्रणाली घटक (कॉम्पलिमेन्ट सिस्टम कॉमपोनेन्ट) – पूरक प्रणाली बड़ी संख्या में अलग–अलग प्लाज्मा प्रोटीनों से बनी होती है जो सुनियोजित तरीके से रोगजनक सूक्ष्मजीवों की कोशिका झिल्ली पर हमला करते है। यह एंटीबॉडी और फागोसाइटिक कोशिकाओं की क्षमता को भी बढ़ा देते है। इस प्रक्रिया में शामिल बहुत सारे पूरक प्रोटीन मुख्यतः प्रोटीएज़ होते हैं, जो स्वयं प्रोटियोलाईटिक क्लीवेज (विदलन) के बाद ही अपनी सक्रिय कार्यशीलता दर्शा पाते हैं। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में पूरक प्रणाली के कुछ प्रोटीनों का समूह पूर्णतः सक्रिय होने के बाद जीवाणुओं को चिह्नित (ऑप्सोनाइज़) कर देता हैं जिससे उन्हें प्रतिरक्षा कोशिकाओं के द्वारा आसानी से पहचाना जाता और लक्षित करके मार दिया जाता हैं। ये कार्य मेम्ब्रेन अटैक कॉम्प्लेक्स (एमएसी) बनाकर किया जाता है जिससे जीवाणु कोशिकाओं को सीधे तौर पर नष्ट करना आसान हो जाता हैं; और (र) पेरोक्सीडेज और अन्य ऑक्सीडेटिव किण्वक (एंजाइम) – पेरोक्सीडेज वो किण्वक (एंजाइम) होते है जो हाइड्रोजन पेरोक्साइड या कार्बनिक पेरोक्साइड द्वारा सब्सट्रेट के ऑक्सीकरण को उत्प्रेरित करके हानिकारक जीवाणु और परजीवियों से बचाव करते हैं। पेरोक्सीडेज अधिकतर पौधों, जानवरों, और सूक्ष्मजीवों में व्यापक रूप से पाए जाते हैं। वे इनकी कोशिकाओं को ऑक्सीडेटिव तनाव और हाईड्रोजन पैरोक्साइड की क्षति से बचाते हैं। ये किण्वक विषाक्त पदार्थों का विघटन, भारी धातु विषहरण, और हार्मोन विनियमन जैसी जैविक प्रक्रियाओं में शामिल होते हैं। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में पाए जाने वाले पेरोक्सीडेज कई प्रकार से 'एंजाइम रिएक्टिव ऑक्सीजन' वर्ग (आरओएस) को उत्पन्न करते हैं जिनमें प्रभावशाली जीवाणुनाशक गुण होते हैं। कार्यविधि के दौरान ये प्रतिक्रियाशील अणु मुख्यतः जीवाणुओं की झिल्ली तोड़कर उनके डीएनए और प्रोटीन को नुकसान पहुंचा देते हैं जिससे जीवाणुओं की मृत्यु हो जाती है। इन ऑक्सीडेटिव एंजाइमों की उपस्थिति यह भी दर्शाती है की मछलियों में रोगजनक जीवाणुओं को बेअसर करने की क्षमता अधिक है।

(6) सूक्ष्मजीवीरोधी पेप्टाइड (एंटीमाइक्रोबीएल पेप्टाइड या एएमपी): ये छोटे आकार के प्राकृतिक पेप्टाइड होते हैं जो मछलियों की श्लेष्मा

में वास करते है और हानिकारक जीवाणुओं के खिलाफ प्राथमिक रक्षा प्रणाली बनाकर सूक्ष्मजीवीरोधी प्रक्रिया को संचालित करते हैं। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में कई प्रकार के एएमपी होते हैं जिनको उनकी क्रिया तंत्र के अनुसार विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया हैं, उनमें से कुछ प्रमुख एएमपी का विवरण यहाँ दिया गया है : (अ) डिफेन्सिन – ये छोटे आकार के सरल श्रेणी के पेप्टाइड होते है जो मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में स्रावित होते रहते हैं। जब मछलियों की त्वचा पर किसी भी हानिकारक जीवाणु का हमला होता है तो ये छोटे पेप्टाइड जीवाणुओं की बाहरी झिल्ली में छिद्र बनाकर उसको अव्यवस्थित कर देते हैं जिससे जीवाणु के साइटोप्लाज़म में विद्यमान और महत्वपूर्ण कार्य करने वाले सारे जैविक घटक बाहर निकल जाते है और उनकी मृत्यु हो जाती है। अकशेरुकी और कशेरुकी जीवों में पाए जाने वाले सिस्टीन–समृद्ध, धनायनिक रोगाणुरोधी गुणों वाले इन छोटे पेप्टाइड के समूह को 'डिफेन्सिन' के नाम से जाना जाता हैं। इनकों अनुक्रम और संरचनात्मक रूप से अल्फा (α), बीटा (β), और थीठा (γ) की श्रेणी में विभाजित किया गया है। मछलियों में केवल बीटा–डिफेन्सिन जैसे प्रोटीन ही पाए जाते है। मानवों और मछलियों के डिफेन्सिन में कुछ संभावित समान जैविक गुण देखे गए हैं; (ब) कैथेलिसिडिन – ये विस्तृत–श्रेणी (ब्रॉड–स्पेक्ट्रम) के एएमपी होते है जो ग्राम–पॉजिटिव और ग्राम–नेगेटिव जीवाणुओं की बाहरी झिल्ली (मेम्ब्रेन) को अस्तव्यस्त करके उनको नष्ट कर देते हैं। कुछ वर्षों से मछलियों में कैथेलिसिडिन की व्यापक संरचना, आनुवंशिकी और कार्यात्मक प्रणालियों पर विस्तृत जानकारियाँ उपलब्ध हो पाई है जिससे जन्मजात रक्षा प्रणाली में इन पेप्टाइड की भूमिका को बेहतर तौर पर समझा गया है; और (स) हिस्टोन–व्युत्पन्न पेप्टाइड – ये पेप्टाइड मुख्यतः हिस्टोन से प्राप्त होते हैं और मछलियों में बेहद मजबूत रोगाणुरोधी गतिविधि को दर्शाते है। इनका जीवाणुओं पर हमला करने का तरीका थोड़ा अलग होता है। ये जीवाणु के डीएनए और अन्य महत्वपूर्ण कोशिका (सेलुलर) घटकों को लक्षित करते हैं। हिस्टोन प्रोटीन से प्राप्त एएमपी पेप्टाइड प्राकृतिक एंटीबायोटिक्स की तरह कार्य करते हैं। हिस्टोन अधिकतर यूकेरियोटिक कोशिकाओं में न्यूक्लियोसोम संरचनाओं के प्रमुख घटकों के रूप में जाने जाते है। गैर–विशिष्ट प्रकृति इन्हें जीवाणुओं की एक विस्तृत श्रृंखला के खिलाफ प्रभावी बनाती है।

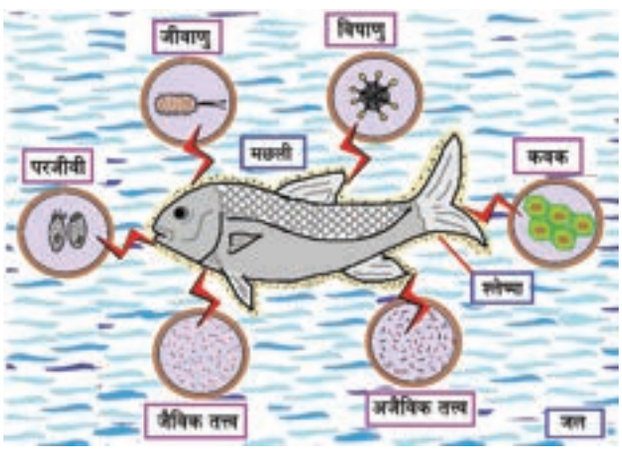

(7) पर्यावरणीय विषाक्तता से सुरक्षाः मछलियों में आनुवंशिक या पर्यावरणीय कारक सामान्य या असामान्य प्रतिरक्षा प्रणाली का निर्धारण करते हैं। जलीय जीवों पर मानवजनित प्रदूषकों (विषाक्त पदार्थों) के बढ़ते दुष्प्रभाव को अब चिंतन का विषय माना जा रहा हैं। जलीय वातावरण में जब मछलियाँ प्रतिरक्षा विषाक्तता (इम्यूनो–टॉक्सिसिटी) वाले किसी भी प्रदूषक के संपर्क में आती हैं तो उनकी बीमार या मृत्यु होने की संभावना बहुत बढ़ जाती है। ये हानिकारक प्रदूषक (रासायनिक) मछलियों की श्वसन क्रिया और हृदय प्रणाली पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। इस प्रकार के प्रदूषित वातावरण में रहने से मछलियों में विभिन्न तरीके वाले प्रतिरक्षा विषाक्तता लक्षण जैसे लिम्फोइड ऊतकों में हिस्टोलॉजिकल असमानताएँ, प्रतिरक्षा कार्यक्षमता में परिवर्तन, और हानिकारक रोगजनकों (जीवाणु, विषाणु, परजीवी, और कवक) के

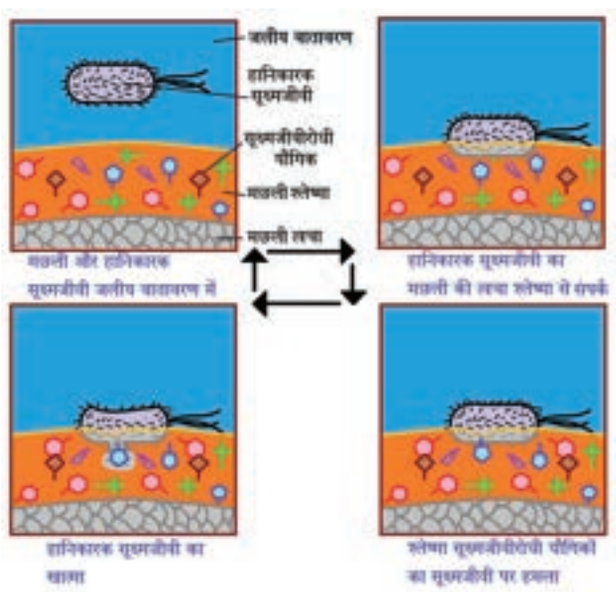

प्रति संवेदनशीलता देखने को मिलती हैं। मछलियों की त्वचा श्लेष्मा का जलीय वातावरण में मौजूद हानिकारक रसायनों और प्रदूषकों के निराविषीकरण (डिटॉक्सीफिकेशन) प्रक्रिया में भूमिका एक सुरक्षात्मक कार्यविधि मानी जाती है। मछलियों की त्वचा हमेशा जलीय संपर्क में रहती है जिससे विषाक्त पदार्थ उनके शरीर में आसानी से प्रवेश कर जाते हैं। श्लेष्मा के अंदर मौजूद कुछ जैवसक्रिय अणु (बायोएक्टिव मोलेक्यूल) इन विषाक्त पदार्थों को बेअसर या बांध कर निष्कासित कर देते हैं और उनकी विषाक्तता को खत्म कर देते हैं जिससे मछलियों को पर्यावरणीय तनावों से छुटकारा मिल जाता हैं।

(8) माइक्रोबियल सिम्बायोसिस (सूक्ष्मजीव सहजीविता): मछलियों की त्वचा श्लेष्मा में जलीय वातावरण में व्याप्त कई जीवाणु तथा अन्य सूक्ष्मजीवी भी निवास करते है जो कई मायनों में मछलियों के लिए लाभकारी सिद्ध होते है, इस प्रकार का 'श्लेष्मा–सूक्ष्मजीवी सहसंबंध' पारिस्थितिक रूप से बहुत महत्वपूर्ण साबित होता हैं क्योंकि इससे एक माइक्रोबायोम की स्थापना होती हैं जिनका मछलियों के स्वास्थ्य में समग्र योगदान होता है। ये सूक्ष्मजीवी श्लेष्मा में रहकर कई हानिकारक रोगजनकों को पनपने से रोक देते है तथा कई महत्वपूर्ण पोषक तत्वों का अधिग्रहण करने में भी सहायता करते है। मछलियों में प्रतिरक्षा प्रणाली के कार्य को भी सुचारु करने में इनकी अहम भूमिका होती हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि मछलियों की त्वचा श्लेष्मा के पारिस्थितिक कार्य बहुत विविध और बहुआयामी हैं जो जटिल जलीय परिदृश्यों में उनके अस्तित्व, विकास, और प्रजनन में मदद करने वाले कई आवश्यक कार्यों को अंजाम देते हैं। यह त्वचा श्लेष्मा मछलियों और उनके चुनौतीपूर्ण वातावरण के बीच नाजुक संतुलन बनाए रखने के लिए अपरिहार्य है। इन भूमिकाओं को अधिक गहराई से समझने से जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य, मत्स्य प्रबंधन और संरक्षण प्रयासों को अधिक व्यापक तौर पर लागू किया जा सकता हैं।

निष्कर्ष

मछलियों की त्वचा श्लेष्मा और उसमें मौजूद जीवाणुरोधी यौगिक न केवल मछलियों के प्राकृतिक आवास में जीवित रहने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं बल्कि उनमें संभावित जैव चिकित्सा गुण भी पाए जाते। पिछले कई दशकों से मछलियों की त्वचा श्लेष्मा पर अनुसंधान कार्यों में बहुत वृद्धि हुई है जो मुख्य रूप से जैवसक्रिय अणुओं (जीवाणुरोधी, विषाणुरोधी, कवकरोधी और परजीवीरोधी) की खोज पर केंद्रित रही है इससे मछलियों के प्रबंधन और मानव चिकित्सा के लिए प्राकृतिक एंटिबयोटिक्स का निर्माण करने में बहुत मदद मिल रही हैं। वर्तमान समय तक मछलियों की त्वचा श्लेष्मा पर अधिकांश शोध कार्य प्रतिरक्षा–संबंधी अणुओं और एएमपी पर मुख्यतः केंद्रित रहे है, जबकि चुनिंदा अध्ययनों के द्वारा ही त्वचा श्लेष्मा या उनमें सम्माहित घटकों/अणुओं का पारिस्थितिकी कार्य स्पष्ट हो पाया है।

मत्स्य एवं मत्स्य पालन पर उष्ण लहर का प्रभाव

कांताराजन. जी, शुभम कनौजिया, रजनी चंद्रन, ताराचन्द कुमावत, संतोष कुमार,
अजेय कुमार पाठक, ललित कुमार त्यागी एवं उत्तम कुमार सरकार
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

1. परिचय

भारत में आज मात्स्यिकी क्षेत्र अत्याधिक तेजी से बढ़ने वाला क्षेत्र है। भारत में मत्स्य पालन के लिए उपस्थित उच्चतम भौगोलिक परिस्तिथियाँ एवं विशाल जलीय संसाधन देश को लगातार मात्स्यिकी क्षेत्र में वृद्धि प्रदान कर रहे हैं। वर्तमान परिदृश्य में भारत आज विश्व के कुल मत्स्य उत्पादन में 8% योगदान देने के साथ–साथ विश्व में तीसरा सबसे बड़ा मत्स्य उत्पादक एवं जलीय कृषि उत्पादन में दूसरे स्थान पर है। भारत का वर्ष 2021–22 में कुल मछली उत्पादन 16.24 मिलियन टन रहा। इस कुल उत्पादन में समुद्री मछली उत्पादन 4.12 मिलियन टन था, जबकि जलकृषि (एक्वाकल्चर) से 12.12 मिलियन टन मछली उत्पादन हुआ। इस प्रकार, जलकृषि से मछली उत्पादन समुद्री मछली उत्पादन की तुलना में लगभग तीन गुना अधिक रहा।

जलवायु परिवर्तन आज देश ही नहीं अपितु वैश्विक चर्चा का विषय बना हुआ है मानवीय गतिविधियाँ, जैसे जीवाश्म ईंधन जलाना और वर्षावनों को नष्ट करना, जलवायु और पृथ्वी के तापमान पर प्रभाव बढ़ा रहा है जो की भूमण्डलीय ऊष्मीकरण बढ़ने में अहम् भूमिका निभाते हैं। भूमण्डलीय ऊष्मीकरण के कारक वायुमंडलीय गैसें जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, मेथेन आदि हैं जो भूमि पर असामान्य मौसम परिवर्तन और प्राकृतिक आपदाओं को बढ़ावा देती हैं। लगातार जलवायु परिवर्तन, उष्ण लहर या हीट वेव के उत्पन्न होने का कारण है। जो की जनजीवन के लिए एक खतरा बनी हुई हैं।

उष्ण लहरें "एक सामान्य तापमान की अवधि होती है जिसमें सामान्य तापमान अधिकतम तापमान से ज्यादा होता है।" उष्ण लहर आमतौर पर मार्च से लेकर जून या कभी कभी दुर्लभ मामलों में ये जुलाई तक भी बढ़ सकती हैं भारत में यह उत्तर–पश्चिमी मैदानी इलाकों, केंद्रीय भारत, पूर्वी भारत और दक्षिणी भारत के उत्तरी हिस्सों में देखी जाती है। यह पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र और कर्नाटक के कुछ हिस्सों, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना के साथ–साथ इनका प्रभाव तमिलनाडु और केरल में भी देखा जाता है। उष्ण लहरों का लम्बे समय तक बढ़ने का कारण, सौर विकिरण में वृद्धि, महासागरीय वायु धाराओं में परिवर्तन, वायु प्रदूषण का बढ़ना आदि होता है। लगातार बढ़ रहे भूमण्डलीय ऊष्मीकरण के कारण बीते 50 वर्षों में भारत में औसतन तापमान वृद्धि हुई है। जिसमें अधिकतम तापमान वृद्धि (0.14–0.21ºC) तथा न्यूनतम तापमान वृद्धि (0.1–0.23ºC) हुई है। लगातार हो रही तापमान वृद्धि का दुष्प्रभाव धरातलीय जनजीवन के साथ साथ जलीय संसाधनों एवं उनमें चर करने वाले जलीय जीवों पर भी पड़ रहा है।

2. उष्ण लहरों की घोषणा के मानदंडः

क) सामान्य से विचलन के आधार परः

उष्ण लहरः सामान्य तापमान से 4.5°C से 6.4°C तक का विचलन

गंभीर उष्ण लहरः सामान्य तापमान से 6.4°C से अधिक का विचलन

ख) वास्तविक अधिकतम तापमान के आधार परः

उष्ण लहरः जब वास्तविक अधिकतम तापमान 45°C या उससे अधिक हो

गंभीर उष्ण लहरः जब वास्तविक अधिकतम तापमान 47°C या उससे अधिक हो

इसके अतिरिक्त, जब कभी मैदानी क्षेत्रों में स्टेशन का अधिकतम तापमान कम से कम 40°C या अधिक होने पर और पहाड़ी क्षेत्रों में कम से कम 30°C या अधिक होने पर उष्ण लहर घोषित की जाती है।

3. उष्ण लहरों का जलीय वातावरण पर प्रभाव

3.1 जल में तापमान वृद्धि

लगातार हो रही ऊष्ण वृद्धि के कारण तापमान वृद्धि का असर आज गंगा नदी के बेसिन पर भी देखा जा रहा है शोधकर्ताओं के अनुसार उष्ण लहरों के कारण बीते कुछ दशकों में गंगा नदी के बेसिन में तापमान वृद्धि 0.6/°C दशक दर्ज की गयी है Das et al. (2013) के अनुसार

गंगा नदी के ऊपरी हिस्सों में जहाँ प्रायः पानी ठंडा होता है ऐसी जगह पर पिछले 20 वर्षों (1980–2009) में 1°C तक तापमान वृद्धि दर्ज की गयी है। शोधकर्ताओं के द्वारा विकसित जलवायु अवलोकन मॉडल के अनुसार 21वीं सदी के अंत तक गंगा नदी के बेसिन पर वायु तापमान 2°C से 5°C तक बढ़ने की सम्भावना है।

उष्ण लहर के दौरान, जब वातावरण का तापमान बहुत अधिक बढ़ जाता है, तो यह प्राकृतिक जल निकायों जैसे नदियों, झीलों और समुद्रों के पानी के तापमान को भी बढ़ा देता है। जल के उच्च तापमान का मछलियों और मात्स्यिकी पर गहरा प्रभाव पड़ता है। मछलियां शीतोष्ण प्राणी होती हैं, अर्थात उनके शरीर का तापमान उनके आस–पास के पानी के तापमान के अनुसार बदलता रहता है। जब पानी का तापमान उनके आदर्श सीमा से अधिक बढ़ जाता है, तो यह उनके लिए तनाव का कारण बनता है। उच्च तापमान मछलियों के मेटाबॉलिज्म को बाधित करता है और उनकी वृद्धि एवं विकास पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

साथ ही, गर्म पानी में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है, जिससे मछलियों को सांस लेने में कठिनाई होती है। ऑक्सीजन की कमी के कारण मछलियां तनाव में आ जाती हैं और उनकी प्रतिरक्षा प्रणाली कमजोर हो जाती है, जिससे वे बीमारियों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाती हैं।

उच्च तापमान मछलियों के आहार ग्रहण और पाचन क्रिया को भी प्रभावित करता है, क्योंकि उनके शरीर में एंजाइमों की गतिविधि बदल जाती है। इससे उनकी भूख कम हो जाती है और वे कम आहार खाती हैं, जिसके परिणामस्वरूप उनकी वृद्धि दर प्रभावित होती है।

इसके अलावा, गर्म पानी मछलियों के प्रजनन चक्र को भी विक्षिप्त कर सकता है। कई प्रजातियों की मादा मछलियां केवल निश्चित तापमान सीमा में ही अंडे देती हैं। यदि तापमान इस सीमा से बाहर हो जाता है, तो प्रजनन प्रभावित होता है, जिससे आबादी में कमी आती है।

अंत में, उच्च तापमान से मछलियों के प्राकृतिक आवास में भी बदलाव आता है। जलवायु परिवर्तन के कारण नदियों, झीलों और समुद्रों के तापमान में वृद्धि होने से जलीय पारिस्थितिकी तंत्र बिगड़ सकते हैं। यह मछलियों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों और ऑक्सीजन की उपलब्धता को प्रभावित कर सकता है, साथ ही शिकारियों और परजीवियों के साथ उनके संबंध भी बदल सकता है।

इस प्रकार, गर्मी की लहर से जल के तापमान में वृद्धि होना मछलियों और मात्स्यिकी उद्योग के लिए एक गंभीर चुनौती बन जाता है। इससे निपटने के लिए प्रभावी प्रबंधन रणनीतियों और जलवायु परिवर्तन से निपटने की कार्रवाई की आवश्यकता होती है।

3.2 वृद्धि एवं प्रजनन पर प्रभाव

जलीय परिवेश में तापमान वृद्धि न केवल जलीय गुणवत्ता को प्रभावित करती है अपितु यह मछलियों में चयापचय की प्रक्रिया को बढ़वा देती है। चयापचय क्रिया के बढ़ने से मछलियों में उनकी शारीरिक क्रिया सामान्य से

अधिक हो जाती है जो उनमे ऊर्जा की ज़रूरत को बढाती है ऐसे मत्स्य प्रजातियां जब बढ़ी हुई ऊर्जा की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाती हैं तो उनके आतंरिक ऊर्जा संचयन में कमी आ जाती है जिसके फलस्वररूप उनकी शारीरिक उपयुक्तता प्रभावित होती है ऐसी स्थिति में, शरीर अपने भंडारित ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करने लगता है ताकि ऊर्जा की कमी को पूरा किया जा सके। परिणामस्वरूप, यह मछलियों के विकास, प्रजनन क्षमता, प्रदर्शन और संभावित अस्तित्व पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। इस प्रकार, बढ़ी हुई ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा न कर पाने से जलीय जीव के विभिन्न महत्वपूर्ण पहलुओं पर विपरीत असर पड़ता है। जलीय जीवों के जीवन चक्र और प्रजनन चक्र अत्यधिक जटिल होते हैं। इन चक्रों पर उष्ण लहरों का प्रभाव विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है, जैसे कि उष्ण लहरों का समय और अवधि। कुछ मत्स्य प्रजातियाँ गर्मी के मौसम में प्रजनन करती हैं, जबकि अन्य ठंडे मौसम में प्रजनन करने की प्रवृत्ति रखती हैं। इसलिए, उष्ण लहरें विभिन्न प्रजातियों के प्रजनन चक्रों को अलग–अलग तरीकों से प्रभावित करती हैं। साथ ही, उष्ण लहरों की अवधि भी महत्वपूर्ण है– लंबी अवधि की उष्ण लहरें प्रजनन प्रक्रियाओं को अधिक गंभीर रूप से प्रभावित कर सकती हैं, जबकि छोटी अवधि की उष्ण लहरों का प्रभाव कम हो सकता है। इस प्रकार, जलीय प्रजातियों के जटिल जीवन और प्रजनन चक्रों के कारण, उनकी उष्ण लहरों के प्रति प्रजनन प्रतिक्रियाएं भिन्न परिस्थितियों में भिन्न होती हैं।

3.3 प्रजातियाँ और जनसंख्या स्तर पर प्रभाव

उष्ण लहरें जलीय जंतु की प्रजातियों और उनकी आबादी पर भी दुष्प्रभाव डालती हैं, लेकिन यह प्रभाव प्रजातियों के बीच भिन्न होता है। व्यापक थर्मल सहनशीलता (यूरीथर्म) वाली प्रजातियों की तुलना में संकीर्ण थर्मल सीमा (स्टेनोथर्म) वाली प्रजातियां उष्ण लहरों से अधिक नकारात्मक रूप से प्रभावित होने की संभावना रखती हैं। हालांकि, पूर्व में विक्षोभ का अनुभव करने वाली आबादियां उन आबादियों से भिन्न प्रतिक्रिया दे सकती हैं जिन्होंने पहले कभी ऐसा विक्षोभ नहीं देखा है। इसके अलावा, उष्ण लहरों की विशिष्ट विशेषताएं, जैसे कि इसकी अवधि और गर्मी का स्तर, भी इसके प्रभावों की गंभीरता को प्रभावित करती हैं। इस प्रकार, समुद्री एवं अंतरस्थलीय मत्स्य प्रजातियों और आबादियों द्वारा उष्ण लहर के प्रति प्रतिक्रियाएं उनकी विशिष्ट विशेषताओं और पिछले अनुभवों पर निर्भर करती हैं।

उष्ण लहरों का मत्स्य अनुवांशिक संसाधनों पर प्रभाव

उष्ण लहरों का मछली के आनुवंशिक संसाधनों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। ये प्रभाव तात्कालिक और दीर्घकालिक दोनों हो सकते हैं, जो विभिन्न तंत्रों के माध्यम से होते हैं। गर्मी के कारण होने वाली मृत्यु सबसे प्रत्यक्ष प्रभावों में से एक है। जब पानी का तापमान किसी प्रजाति की सहनशीलता स्तर से अधिक बढ़ जाता है, तो यह बड़े पैमाने पर मृत्यु का कारण बन सकता है। ये घटनाएँ सभी, मत्स्य प्रजातियों को समान रूप से प्रभावित नहीं करतीं, जिन मछलियों में गर्मी प्रतिरोधक आनुवंशिक लक्षण होते हैं, उनके जीवित रहने की संभावना अधिक होती है। समय के साथ, यह चयनात्मक दबाव आबादी के आनुवंशिक संरचना को गर्मी–सहनशील जीनोटाइप की ओर स्थानांतरित कर सकता है। हालांकि अल्पकालिक रूप से यह लाभदायक लग सकता है, यह समग्र आनुवंशिक विविधता के नुकसान का कारण बन सकता है, जो संभवतः मत्स्य आबादी को भविष्य में अन्य तनावों या पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति अधिक संवेदनशील बना सकता है।

मछलियों का प्रजनन चक्र अक्सर पानी के तापमान सहित पर्यावरणीय संकेतों से निकटता से जुड़ा होता है। उष्ण लहरें इन नाजुक समय तंत्रों को बाधित कर सकती हैं। कुछ प्रजातियाँ सामान्य से पहले या बाद में अंडे दे सकती हैं, जिससे लार्वा के लिए भोजन की उपलब्धता के साथ बेमेल हो सकता है। अन्य स्थितियाँ बहुत तनावपूर्ण होने पर अंडे देना पूरी तरह से छोड़ सकती हैं। प्रजनन के समय में ये परिवर्तन आनुवंशिक परिणाम ला सकते हैं।

गर्मी के तनाव से प्रेरित एपिजेनेटिक परिवर्तन जटिलता की एक और परत का प्रतिनिधित्व करते हैं। डीएनए अनुक्रम को स्वयं परिवर्तित नहीं करते हुए, ये संशोधन जीन की अभिव्यक्ति को बदल सकते हैं। उदाहरण के लिए, उच्च तापमान के जवाब में हीट शॉक प्रोटीन का नियमन बढ़ सकता है। यदि ये एपिजेनेटिक परिवर्तन बने रहते हैं और संतान को पारित किए जाते हैं, तो यह बदलते पर्यावरण के लिए तेज़ अनुकूलन का एक तंत्र प्रदान कर सकता है। उष्ण लहरें पारिस्थितिकी तंत्र की गतिशीलता को बदलकर मछली के आनुवंशिक संसाधनों को अप्रत्यक्ष रूप से भी प्रभावित कर सकती हैं। जैसे–जैसे तापमान बढ़ता है, ठंडे पानी की प्रजातियों को नए आवासों में प्रवास करने के लिए मजबूर किया जा सकता है, संभवतः पहले

से अलग–थलग आबादी के संपर्क में आ सकता है। इससे संकरण हो सकता है, जो आबादी में नई आनुवंशिक सामग्री पेश कर सकता है। हालांकि यह कभी–कभी आनुवंशिक विविधता को बढ़ा सकता है, यह स्थानीय रूप से अनुकूलित जीन परिसरों के नुकसान का भी कारण बन सकता है जो लंबी अवधि में विकसित हुए हैं।

4. उष्ण लहरों से निपटने के तरीके और सुझाव

1. छायादार क्षेत्रों का निर्माणः

मत्स्य पालन में छायादार क्षेत्रों का निर्माण उष्ण लहरों के दुष्प्रभावों से बचने का एक प्रभावी तरीका है। छाया क्षेत्र बनाने से जल निकाय का तापमान कम होता है और मछलियों को गर्मी से राहत मिलती है। कृत्रिम छाया के लिए पेड़ों के पौधे लगाए जा सकते हैं या नेट/छतरियों का प्रयोग किया जा सकता है। प्राकृतिक छाया जैसे पेड़ों का होना अधिक लाभदायक होता है क्योंकि वे ऑक्सीजन भी उत्पन्न करते हैं।

2. पालन टैंकों में शीतलन प्रणाली लगानाः

गर्मी के मौसम में समुचित शीतलन प्रणाली के साथ मत्स्य पालन टैंकों का उपयोग करना उपयुक्त होता है। एयर कंडीशनिंग, कूलर, चिलर और हीट एक्सचेंजर जैसी प्रणालियों का उपयोग जल तापमान को नियंत्रित करने के लिए किया जा सकता है। हालांकि, यह उच्च लागत वाली प्रक्रिया है, लेकिन मत्स्य पालन के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आवश्यक है।

3. जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए सरकारी नीतियांः

सरकार को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने के लिए उचित नीतियों और योजनाओं का निर्माण करना चाहिए। ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने, पुनर्नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग बढ़ाने और वन क्षेत्रों का संरक्षण करने जैसे उपायों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। साथ ही, जलवायु अनुकूलन और शमन रणनीतियों को भी लागू करना महत्वपूर्ण है।

4. जागरूकता अभियान और कृषकों का प्रशिक्षणः

जलवायु परिवर्तन और उष्ण लहरों के बारे में जागरूकता फैलाने के लिए विभिन्न अभियान और कार्यक्रम आयोजित किए जा सकते हैं। लोगों को इसके कारणों, प्रभावों और इससे निपटने के तरीकों के बारे में शिक्षित करना महत्वपूर्ण है। मत्स्य कृषकों और पशुपालकों को नवीनतम तकनीकों और सर्वोत्तम पद्धतियों के बारे में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ताकि वे मत्स्य पालन को अधिक कुशलतापूर्वक कर सकें और उष्ण लहरों से निपटने में सक्षम हो सकें।

5. निष्कर्ष

उष्ण लहरें मत्स्य पालन और जलीय जीवों के लिए एक गंभीर चुनौती हैं। जल का तापमान बढ़ना, मछलियों के वृद्धि, प्रजनन और आहार ग्रहण पर विपरीत प्रभाव डालता है। साथ ही, यह उनके प्राकृतिक आवास को भी प्रभावित करता है। हालांकि, इन चुनौतियों से निपटने के कुछ उपाय भी हैं जैसे छायादार क्षेत्रों का निर्माण, पालन टैंकों में शीतलन प्रणाली लगाना, उचित सरकारी नीतियों का निर्माण और जागरूकता अभियान चलाना। यदि हम समय रहते इन उपायों को अपनाते हैं, तो मत्स्य पालन को जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभावों से बचाया जा सकता है और इसे स्थायी रूप से जारी रखा जा सकता है। हमें अपने पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण करना होगा और जलवायु अनुकूलन के उपायों को लागू करना होगा ताकि भविष्य में भी मत्स्य पालन एक लाभदायक और सुरक्षित उद्योग बना रहे।

मछली की शारीरिक कठोर संरचनाओं का मत्स्य संरक्षण एवं सतत प्रबंधन में अनुप्रयोग

फराह बानो, वीरेंद्र कुमार, उत्तम कुमार सरकार एवं राजीव कुमार सिंह

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

मछली कशेरुक जीवों का सर्वाधिक विविधता वाला समूह है और इसमें विविधता के कई पहलू समाहित हैं जैसे मछली का शारीरिक आकार व आकृति विज्ञान, प्रजनन, निवास स्थान अधिभोग और जीवन–इतिहास लक्षण आदि। उपयुक्त मत्स्य प्रबंधन के लिए पर्यावरण, प्रजनन विशेषताओं एवं आनुवंशिक लक्षण वर्णन इत्यादि समझना आवश्यक है। परंपरागत तौर से, पर्यावरण इतिहास अनुसंधान को मार्क–रीकैप्चर और रेडियोटेलीमेट्री द्वारा अनुमानित किया जाता रहा हैं, लेकिन यह विधि थकाऊ है और दीर्घकालिक डेटा संग्रह की आवश्यकता होती है। अतः पर्यावरण इतिहास के विभिन्न पहलुओं की जांच के लिए प्राकृतिक टैग के रूप में वैकल्पिक माध्यमों तथा कठोर भागों (जैसे ओटोलिथ, शल्क, रीढ़, पंख किरणें, कशेरुक और स्कूट्स) का मूल्यांकन करने की आवश्यकता है (चित्र 1)। कठोर संरचनाओं को उनके अकार्बनिक संरचना बाहुल्यता के कारण लंबे समय तक आसानी से सुखाया और अध्ययन हेतु संग्रहीत किया जा सकता है।

ओटोलिथ

ओटोलिथ एक प्रकार की पॉलीक्रिस्टलाइन संरचना (सफेद इयरस्टोन) हैं जो कपाल के पीछे सिर क्षेत्र में मौजूद होती है और सबसे घनी संरचनाओं के रूप में मछली में संतुलन को बनाए रखने एवं सुनने में मदद करती है (चित्र 2)। ओटोलिथ मुख्य रूप से कैल्शियम कार्बोनेट (97%) के बने होते हैं। ये गैर–कोलेजनस कार्बनिक मैट्रिक्स में

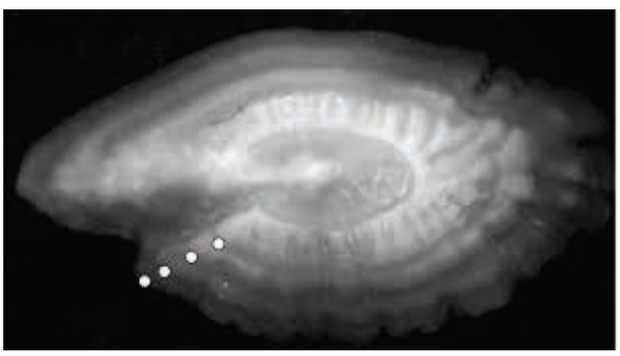

चित्र 2. ओटोलिथ की प्रारूपी छवि

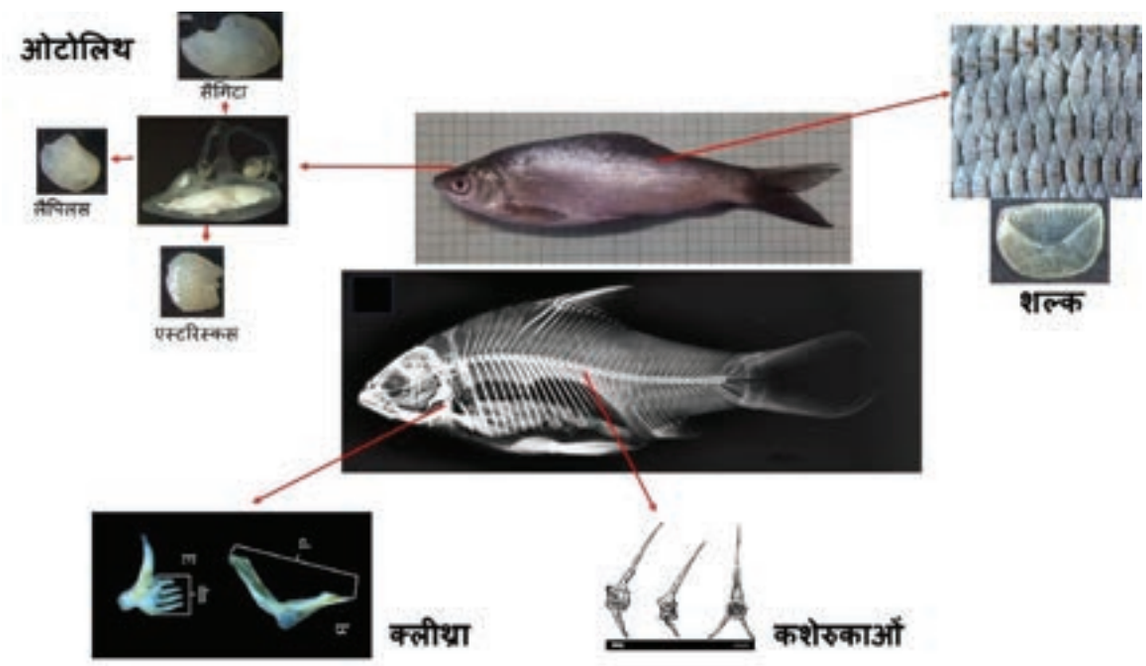

चित्र 1. एक विशिष्ट मछली की छवि जिसमें कठोर भाग दिखाई दे रहे हैं

अर्गोनाइट के आकार में होते हैं जो एक केंद्रीय नाभिक से तीन आयामों में बाहर की ओर विकिरण करते हैं और ओटोलिन नामक रेशेदार प्रोटीन के के बने होते हैं जो कोलेजन के समान होते हैं। मछलियों में तीन प्रकार के ओटोलिथ पाए जाते हैं, अर्थात् सैगिटा, लैपिलस और एस्टेरिस्कस जो कि टीलेओस्ट (या बोनी) मछली में पाए जाते हैं, जिसमें सैगिटा सबसे व्यापक रूप से मछलियों के आयु ज्ञात करने में उपयोग किया जाता है।

शल्क

टीलेओस्ट मछलियों के शल्क संरचनात्मक तौर से कोलेजन फाइबर की परतें हैं, जो कैल्शियम फॉस्फेट सामग्री से बनी है, यह हाइड्रोक्सीपाटाइट की समानता वाला दिखता है (चित्र 3)। संकेंद्रित विकास वृद्धि का निर्माण, जिसे सर्कुली के रूप में जाना जाता है, समय के साथ क्षेत्र में कठोर, खनिज बाहरी परत का विस्तार करने का कारण बनता है। इसके अतिरिक्त शल्कों का संग्रह एवं अध्ययन मछली के नमूने को बिना नुकसान पहुंचाये किया जा सकता है।

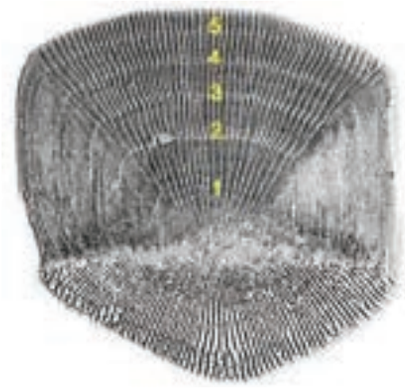

चित्र 3. एक स्केल प्रारूपी छवि

क्लीथ्रा, ऑपरेकुलर और ग्रसनी हड्डियां

क्लीथ्रा पेक्टोरल गर्डल से जुड़ी हड्डी है जिसका उपयोग अक्सर किया जाता है, क्योंकि यह मछली के कंकाल प्रणाली में सबसे बड़ी और सबसे मजबूत हड्डियों में से एक है। वे मछली के पेट में रहते हैं और आसानी से पचते नहीं हैं और रूपात्मक रूप से अलग होते हैं इसके अलावा, यह संरचना युवा शिकारी मछली के लिए सहायक है क्योंकि यह मछली के विकास के दौरान बनने वाली पहली नैदानिक हड्डियों में से एक है। आयु निर्धारण में क्लीथ्रा का उपयोग एक अच्छा तरीका माना जाता है। इसके अलावा, क्लीथ्रा अन्य हड्डियों जैसे कि ऑपेरकुलर और ग्रसनी हड्डियों की अपेक्षा उनके वर्गीकरण उपयुक्तता, आहार निर्धारण और जीवाश्म संबंधी अध्ययनों के कारण चुना जाता है। पोस्टक्लेथ्रम पेक्टोरल गर्डल का एक हिस्सा है, जो क्लीथ्रम की आंतरिक सतह के पास स्थित है और पेक्टोरल क्षेत्र की मांसपेशियों के बीच पीछे से गुजरता है। सिल्वर कार्प का पोस्टक्लिथ्रम आयु निर्धारण के लिए एक प्रामाणिक संकेतक माना गया है।

कशेरुक और डॉर्सल फिन

कशेरुकाओं और पृष्ठीय पंख रीढ़ (डॉर्सल फिन) का उपयोग मछली (जैसे इलास्मोब्रांच) की उम्र के लिए किया गया है जिसमें ओटोलिथ अनुपस्थित होते हैं। ये सरंचनाये स्टॉक संरचना तथा रासायनिक सरंचना द्वारा उनके भ्रमण को निर्धारित करने में सहायक होती हैं।

इसके अलावा, शल्क, पंख किरणों और रीढ़ दुर्लभ एवं लुप्तप्राय प्रजातियों के अध्ययन के लिए विशेष रूप से सहायक होते हैं क्योंकि वे मछलियों के पर्यावरणीय इतिहास के पुनर्निर्माण में ओटोलिथ के लिए एक महत्वपूर्ण विकल्प प्रदान करते हैं।

कठोर भागों की उपयोगिता

1. आयु और विकास निर्धारण

मत्स्य प्रबंधन के लिए उपयुक्त आयु अनुमान आवश्यक है क्योंकि आयु वर्गों का वितरण पापुलेशन की एक प्रमुख जनसांख्यिकीय विशेषता है। मछली की उम्र का अनुमान लगाने की प्रक्रिया में ओटोलिथ, शल्क और कशेरुकाओं जैसी कठोर संरचनाओं पर देखे गए विकास चिह्नों की जांच करना शामिल है। लेकिन ओटोलिथ का अध्ययन पर्याप्त समय लेने वाला एवं मछली की प्रजाति पर निर्भर करता है व किसी किसी प्रजाति में इसका विश्लेषण कम सटीक वाला होता हैं।

2. प्रवासी मार्ग का निर्धारण

मछली के कठोर भागों का उपयोग स्टॉक पहचान, मत्स्य प्रजाति में विभिन्नता के लिए, प्राकृतिक टैग के रूप में माना जाता है, जो कि विभिन्न आवासों में रहने वाली मछलियों में अलग हो सकते हैं तथा बायोमोनिटरिंग का कार्य कर सकते हैं। ओटोलिथ बेहतर कालानुक्रमिक डेटा प्रदान करता है और अन्य कठोर संरचनाओं की तुलना में बेहतर संरचना मानी जाती है। ओटोलिथ चयापचय रूप से निष्क्रिय होते हैं, लेकिन शल्क, कशेरुक, पंख रीढ़ और किरणों जैसे अन्य भाग चयापचय रूप से स्थिर होते हैं। विशेष रूप से, शल्क चयापचय स्थिरता नहीं दिखाते हैं, तनावपूर्ण या उच्च–पोषण संबंधी मांग स्थितियों में मौलिक

पुनर्जीवन की संभावना के साथ, लेकिन स्थिरता के तहत समूहों में जांच की जा रही विविधताओं की तुलना में पैमाने में परिवर्तन की डिग्री नगण्य है, शल्क स्टॉक संरचना और गतिविधि का पता लगाने में सहायक हो सकते हैं। इसके अलावा, फिन किरणें और स्पाइन, स्टॉक संरचना के कम उपयोगी सूचकांक हो सकते हैं विशेषकर जब कि पोषण की कमी होती है।

3. आहार विश्लेषण

ओटोलिथ, मछली के शिकार की पहचान के लिए व्यापक रूप से मान्यता प्राप्त संरचनाएं हैं, जो टीलेओस्ट मछली में सबसे सघन घटक हैं; फिर भी, रासायनिक और यांत्रिक दोनों प्रक्रियाओं के कारण पाचन के दौरान क्षतिग्रस्त हो सकते हैं। नतीजतन, शिकार की पहचान और आकार के अनुमान में उनका उपयोग सीमित है और वैकल्पिक कठोर भागों का उपयोग किया जाता है।

चूंकि, ओटोलिथ प्रजाति विशिष्ट और व्यापक अंतर्जातीय विभिन्नता वाले होते हैं, जिसके कारण पहचान कुंजी और गाइड सहित एटलस का विकास किया गया है। इसके अलावा, कशेरुकाओं को उनके खनिजकरण (कैल्शियम फॉस्फेट) के कारण ओटोलिथ की तुलना में कम आसानी से पचने वाला बताया जाता है। परिणामस्वरूप, कशेरुक मछली की पहचान करने, शिकार की मात्रा का अनुमान लगाने और मछली के आकार की गणना करने के लिए एक उपयोगी माध्यम है। वर्तमान में, ओटोलिथ को मछलीभक्षी खाद्य नमूनों में मछली के अवशेषों की पहचान करने के लिए सबसे उपयोगी साधन में से एक माना जाता है।

4. इको (पर्यावरणीय) आकृति विज्ञान

आणविक और शारीरिक अध्ययनों की तुलना में कठोर भागों पर आकार विश्लेषण को रचनात्मक, किफायती और समय–कुशल माना जाता है। कई उल्लेखनीय शोधकर्ताओं ने इंट्रा और इंटरस्पीशीज अलगाव के लिए सल्कस मॉर्फोमेट्रिक्स के उपयोग की सिफारिश की है। आकार विश्लेषण, ओटोलिथ रसायन विज्ञान और अन्य प्रयोगशाला आधारित आनुवंशिक अध्ययनों की तुलना में आसान तथा कम खर्चीला है।

5. जीवाश्म रिकॉर्ड

ओटोलिथ मछली के विकास और पैलियोबायोग्राफी के पुनर्निर्माण के लिए एक अनूठा उपकरण है, और वे पैलियो–बैथिमेट्रिक और पैलियो–पारिस्थितिक संकेतक के रूप में भी उपयोगी है। मछली ओटोलिथ और कंकाल भागों का अध्ययन एक दूसरे के पूरक हैं। मछलियों के जीवाश्म रिकॉर्ड मत्स्य विकास सम्बन्धी साक्ष्य प्रदान कर सकते हैं। अच्छी तरह से संरक्षित जीवाश्मों के आधार पर सही पहचान हमें विस्तृत विकासवादी, पैलियो–बायोग्राफिकल और पेलियोएन्वायरमेंटल प्रश्नों को संबोधित करने में सहायक होता है।

कठोर भागों में रूपात्मक विविधताएं पर्यावरण या आनुवंशिक कारणों में भिन्नता के कारण होती हैं। लेकिन कठोर भागों में परिवर्तनशीलता उत्पन्न करने के लिए पर्यावरण की तुलना में आनुवंशिक कारक अधिक महत्वपूर्ण हैं। विभिन्न पर्यावरणीय कारक जैसे तापमान, लवणता, गहराई, खाद्य उपलब्धता आदि ओटोलिथ में आकारीय भिन्नता पैदा कर सकते हैं।

मत्स्य प्रबंधन में कठोर भागों का एकीकरण

स्थानीय पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुकूलन का अध्ययन मत्स्य विज्ञान के विभिन्न पहलुओं मुख्यतया स्थायी मत्स्य प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण है। विभिन्न प्रयोजनों के लिए मछलियों में आमतौर पर उपयोग किए जाने वाले कठोर भागों के लाभों और सीमाओं पर चर्चा से यह निष्कर्ष निकलता है कि उन्हें उपयुक्त मत्स्य प्रबंधन के लिए एकीकृत किया जाए। क्योंकि मछली के पर्यावरण के इतिहास और मत्स्य प्रबंधन में इसकी उपयोगिता के मूल्यांकन के लिए एक प्रभावी दृष्टिकोण में कठोर भागों के उपयोग पर अध्ययन की व्यापक जांच नहीं की गई है। अकादमिक, सरकारी एजेंसियों और गैर–सरकारी संगठनों के मत्स्य पालकों के बीच उपयुक्त सहयोग मत्स्य प्रबंधन में कठोर भागों की भूमिका को संवर्धित करने में मदद करेगा। इसके अलावा, जैविक मार्कर के रूप में व्यक्तिगत कठोर भागों के उपयोग की कमियों को अन्य मार्करों के एकीकृत उपयोग से दूर किया जा सकता है क्योंकि दो पूरक तरीके बेहतर परिणाम देंगे।

मछलियों के कठोर भागों को एक अच्छा फेनोटाइपिक मार्कर माना जाता है और आनुवंशिक डेटा की कमी की भरपाई करने में सक्षम है। कुछ मामलों में, आण्विक मार्कर और आनुवंशिक तकनीकें स्टॉक/पापुलेशन में अंतर करने में विफल रहती हैं क्योंकि यह समय लेने वाली एवं महंगी होती है और इसके लिए अवसंरचना और उपकरण की आवश्यकता होती है। यहां, वर्तमान अध्ययन में मत्स्य विज्ञान में विभिन्न कठोर भागों का उपयोग कर मत्स्य प्रबंधन को और भी अधिक अर्थपूर्ण बनाया जा सकता है।

क्रिस्पर-कैस 9 जीनोम एडिटिंग तकनीकी: चुनौतियाँ एवं संभावनाएं

अखिलेश कुमार मिश्र, मुरली एस., महेंदर सिंह, एल. मोग चौधरी, बासदेव कुशवाहा एवं रविन्द्र कुमार

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

हम अपने आस–पास जिन पालतू जानवरों या फसलों, फलदार पौधों, सब्जियों को देखते है उनको इस अवस्था तक विकसित करने में हमारे पूर्वजों के हजारों वर्ष लगे हैं। मानव सभ्यता तथा जनसंख्या जिस गति से बढ़ रही है, उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु नित नवीन विधियों की खोज समय–समय वैज्ञानिकों द्वारा की जाती रही है। जिससे नयी प्रजातियों का विकास कम समय में किया जा सके। हम में से ज़्यादातर लोग आनुवंशिक–अभियांत्रिकी (जेनेटिक– इंजीनियरिंग) से परिचित होंगे, जिसमें किसी भी प्राणी या पौधे से विशेष लक्षण या परिणाम प्राप्त करने हेतु उसके किसी विशेष जीन की संरचना में आवश्यक बदलाव किया जाता है, जीनोम एडिटिंग तकनीकी भी इसी दिशा में एक सफल प्रयास है। जीनोम एडिटिंग एक ऐसी विधि है जिसमें प्रौद्योगिकियों के एक समूह की सहायता से वैज्ञानिकों द्वारा न्यूक्लियोटाइडों के इंसर्शन, डिलीशन अथवा सबस्टीटूशन द्वारा पौधों, बैक्टीरिया और जानवरों सहित कई जीवों के डीएनए को बदलने अथवा संशोधित करने का कार्य किया जाता है अर्थात जीनोम एडिटिंग प्रौद्योगिकियां आनुवंशिक सामग्री को जीनोम में सटीक स्थानों पर जोड़ने, हटाने या बदलने की प्रक्रिया है जिसमें लक्षित स्थान पर डीएनए में डबल–स्ट्रैंड ब्रेक बनाने के लिए विशेष रूप से इंजीनियर्ड न्यूक्लियेज का उपयोग किया जाता है जिन्हें एक विशिष्ट डीएनए अनुक्रम को लक्षित करने के लिए अभियन्त्रित किया गया है, जहां वे डीएनए में कट लगाकर, सम्बन्धित डीएनए टुकड़े को हटाने और प्रतिस्थापन डीएनए के इंसर्शन का मार्ग प्रशस्त करते हैं। तत्पश्चात डीएनए की मरम्मत क्रियाविधि द्वारा जीव में इच्छित आनुवंशिक बदलाव उत्पन्न किये जाते हैं। वैज्ञानिक और चिकित्सक इस तकनीक के माध्यम से, जीन्स में बदलाव करके विभिन्न रोगों की चिकित्सा तथा फसलों की गुणवत्ता में सुधार लाकर, अनेक आर्थिक व सामुदायिक समस्याओं के निराकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। अर्थात जीनोम एडिटिंग एक ऐसा टूल है जो चिकित्सा क्षेत्र में क्रांति ला सकता है। इसका उपयोग रिवर्स आनुवंशिक अध्ययन द्वारा जीन के कार्यों को ज्ञात करने में किया जा सकता है एवं रोगों के मॉडल बनाकर उनका चिकित्सीय विकास किया जा सकता है। क्रिस्पर–कैस 9 मानव रोगों के लिए नए उपचार विकसित करने हेतु नवीनतम जीन संपादन तकनीकों में से एक है, जो एंजाइम की सहायता से डीएनए में जीन को काटने या जोड़ने के लिए कैंची की तरह कार्य करती है। बीमारी के इलाज या रोकथाम के इरादे से मानव जीनोम को संपादित करने में इस तकनीक का उपयोग किया जा रहा है। जीनोम एडिटिंग दो तरीकों से की जा सकती है:

1. ***एक्स विवो*** जिसमें कोशिकाओं को एक रोगी से अलग किया जाता है, जीनोम एडिट किया जाता है, और फिर रोगी में वापस लाया जाता है तथा
2. ***इन विवो*** जिसमें अभियंत्रित न्यूक्लिएजेस वायरल या नॉनवायरल माध्यम का उपयोग करके सीधे रोगी में आंख, मस्तिष्क या मांसपेशियों जैसे विशिष्ट ऊतकों को लक्षित करते हुए प्रविष्ट कराये जाते हैं।

यद्यपि कि जीन एडिटिंग से सम्बन्धित टीएएलईएनएस (टेलेंस) और जेडएफएन (जिंक फिंगर न्यूक्लिएजेस) जैसी अन्य तकनीकें भी हैं, लेकिन इस कार्य में क्रिस्पर–कैस 9 अपनी सरलता और प्रभावशीलता के कारण अत्यंत लोकप्रिय बन गया है जिसका वर्णन यहाँ किया जा रहा है।

क्रिस्पर–कैस 9 (CRISPR-Cas9)

क्रिस्पर–कैस 9 एक जीन– एडिटिंग तकनीक है जो वैज्ञानिकों को विशिष्ट क्षेत्रों में डीएनए को संशोधित या उसका सुधार करने में सक्षम बनाती है। यह एक स्वाभाविक रक्षा प्रणाली पर आधारित है जो बैक्टीरिया, वायरस के विरुद्ध जीनोम एडिटिंग के माध्यम से उपयोग करते हैं। वस्तुतः यह तकनीक उसी जीनोम एडिटिंग प्रणाली का प्रयोगशाला में उपयोग के लिए एक प्रकार का अनुकूलन है। जीन– एडिटिंग प्रौद्योगिकियों में ऐसे महत्वपूर्ण आणविक टूल को 'क्लस्टर्ड रेगुलरली इंटरस्पर्सड शार्ट पैलिनड्रोमिक रिपीट्स–क्रिसपर एसोसिएटेड प्रोटीन 9' जिसे शार्ट में

क्रिस्पर–कैस 9 कहते हैं, के रूप में जाना जाता है। यह वर्ष 2012 में अमेरिकी वैज्ञानिक जेनिफर ए डूडना, फ्रांसीसी वैज्ञानिक इमैनुएल कार्पेंटियर और सहयोगियों द्वारा खोजी गई एक शक्तिशाली तकनीक है जिसे कालान्तर में अमेरिकी वैज्ञानिक फेंग झांग और सहयोगियों ने और अधिक परिष्कृत किया। जेनिफर ए डूडना और इमैनुएल कार्पेंटियर को इस कार्य के लिए रसायन विज्ञान में 2020 का नोबेल पुरस्कार भी प्रदान किया गया। क्रिसपर–कैस 9 सटीकता के साथ कार्य करता है, जिससे शोधकर्ताओं के लिए वांछित स्थानों में डीएनए को हटाना और इन्शर्ट करना संभव हो पाता है तथा इसका उपयोग कई साइटों को लक्षित करने के लिए किया जा सकता है और प्रोटीन–आधारित संशोधनों की तुलना में अधिक आसानी से किया जा सकता है। इस तकनीक का अनुप्रयोग आनुवंशिक बीमारियों के इलाज, कैंसर उपचार व पौधों के प्रजनन सहित कई क्षेत्रों में हो रहा है। वर्तमान में अंधापन, एचपीवी (ह्यूमन पैपिलोमा वायरस) कारित ग्रीवा नियोप्लासिया और ट्रांसथायरेटिन एमाइलॉयडोसिस के इलाज के लिए इन विवो परीक्षण चल रहे हैं। क्रिसपर–कैस 9 की सामान्य क्रियाविधि चित्र 1 में दर्शायी गयी है:

प्रोटोस्पेसर एडजेसेंट मोटिफ (पीएएम) एक 2–6 बेस पेयर का डीएनए अनुक्रम है जो क्रिस्पर प्रणाली द्वारा क्लीवेज (अनुभेदन) के लिए लक्षित डीएनए क्षेत्र का अनुसरण करता है। कैस न्यूक्लियेस द्वारा कट साइट पहचानने में पीएएम एक चिन्ह का काम करता है। कैस न्यूक्लियेज द्वारा डीएनए को काटने के लिए पीएएम की आवश्यकता होती है जो आमतौर पर कट साइट से नीचे की ओर 3–4 न्यूक्लियोटाइड के रूप में पाया जाता है। इस प्रणाली में दो आवश्यक घटक होते हैं: डीएनए को काटने वाला प्रोटीन Cas-9 तथा सिंगल गाइड आरएनए (एसजीआरएनए)। ये दोनों घटक मिलकर एक काम्प्लेक्स बनाते हैं जो डीएनए के किसी विशिष्ट भाग को पहचान कर काट सकता है।

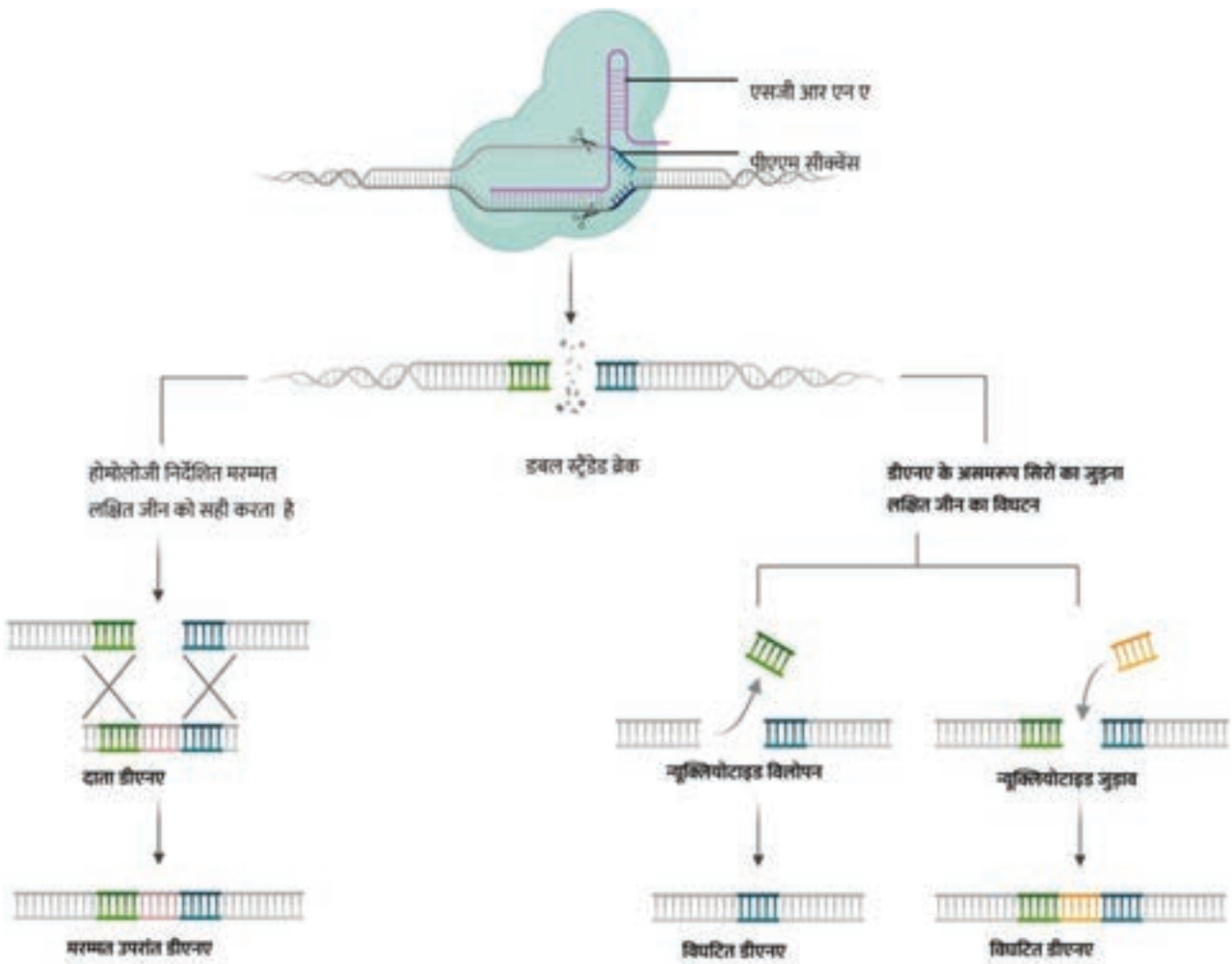

चित्र 1: क्रिस्पर–कैस 9 की सामान्य क्रियाविधि (साभार: साइंसडायरेक्ट डॉटकॉम)

क्रिस्पर–कैस 9 जीनोम एडिटिंग की प्रक्रिया में तीन चरण होते हैं, पहचान, अनुभेदन और मरम्मत। सर्वप्रथम कैस–9 डिज़ाइन किया गया एसजीआरएनए एक कम्पलीमेंट्री बेस पेयर के माध्यम से जीन ऑफ इंटरेस्ट में लक्ष्य अनुक्रम की पहचान करता है। जबकि कैस–9 न्यूक्लियस प्रोटोस्पेसर एडजेसेंट मोटिफ (पीएएम) के लिए एक साइट 3 बेस पेयर अपस्ट्रीम पर डबल–स्ट्रैंडेड ब्रेक बनाता है, फिर डबल–स्ट्रैंडेड ब्रेक की मरम्मत नॉन–होमोलोगस येंड या होमोलॉजी–निर्देशित सेलुलर मरम्मत तंत्र द्वारा की जाती है। जीन एडिटिंग के कुछ संभावित लाभ और उपयोग के क्षेत्र निम्नलिखित हैं:

बीमारियों का इलाजः जीन एडिटिंग का उपयोग आनुवंशिक बीमारियों जैसे कि सिकल सेल एनीमिया, थैलेसीमिया, और किस्टिक फाइब्रोसिस के इलाज में किया जा सकता है।

कृषि में सुधारः फसलों की उपज बढ़ाने, रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने, और पौधों की गुणवत्ता में सुधार के लिए जीन एडिटिंग का उपयोग किया जा सकता है।

प्रयोगशाला अनुसंधानः वैज्ञानिक जीन एडिटिंग का उपयोग नए चिकित्सा तरीकों की खोज, विकास और परीक्षण में करते हैं। यद्यपि जीन एडिटिंग के कई संभावित लाभ हैं, इसके साथ ही कुछ नैतिक और सामाजिक प्रश्न भी उठते हैं। इन सवालों में शामिल हैं:

नैतिक चिंताएँः क्या हमें प्राकृतिक जीनोम में बदलाव करने का अधिकार है? क्या यह तकनीक केवल चिकित्सा उद्देश्यों के लिए उपयोग की जानी चाहिए या इसके अन्य अनुप्रयोगों पर भी विचार किया जाना चाहिए?

सुरक्षाः जीन एडिटिंग के दीर्घकालिक प्रभाव क्या होंगे? क्या इससे नई बीमारियाँ उत्पन्न हो सकती हैं या मौजूदा स्वास्थ्य समस्याएँ बिगड़ सकती हैं? क्रिस्पर–कैस 9 प्रणाली का उपयोग करने के लाभों में से एक यह है कि ट्रांसजीन–मुक्त जानवरों/पौधों को बनाया जा सकता है जिससे आम लोगों द्वारा प्रौद्योगिकी की बेहतर स्वीकार्यता हो सकती है।

सामजिक प्रभावः जीन एडिटिंग के व्यावसायिक और सामाजिक प्रभाव क्या होंगे? क्या यह सामाजिक असमानताओं को बढ़ावा देगा? यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि जीनोम संपादन तक पहुंच सभी को उपलब्ध कराई जाय ताकि लाभ समाज सभी वर्गों द्वारा समान रूप से साझा किया जा सके। जीनोम संपादन कम लागत पर आबादी के एक बड़े हिस्से के लिए खाद्य और पोषण सुरक्षा हासिल करने में भी मदद कर सकता है, जो इसे अपनाने और उपभोक्ता स्वीकृति को और अधिक बढ़ा सकता है।

इन विषयों पर भी अध्ययन आवश्यक है। परन्तु फिर भी जीन एडिटिंग एक क्रांतिकारी तकनीक है, और इसके संभावित लाभ और चुनौतियों को समझना और संतुलित दृष्टिकोण अपनाना महत्वपूर्ण है।

मात्स्यिकी अनुसंधान में जीनोम एडिटिंग

मछलियों में जीन एडिटिंग एक दिलचस्प और तेजी से विकसित हो रहा क्षेत्र है, जिसका उद्देश्य मछलियों के आनुवंशिक गुणों को बदलकर उनके स्वास्थ्य, वृद्धि दर, और अन्य विशेषताओं को सुधारना है। जीनोम एडिटिंग तकनीकों को कॉमन कार्प, ज़ेब्राफिश, तिलापिया, अटलांटिक सैल्मन, मेडका और कुछ अन्य मत्स्य प्रजातियों में सफलतापूर्वक नियोजित किया गया है। इस तकनीक का उपयोग मात्स्यिकी में कई लाभकारी उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है, जैसेः

मत्स्य संवर्धन में सुधार लाने हेतु

जीन एडिटिंग का उपयोग मछलियों की वृद्धि दर को तेज करने के लिए किया जा सकता है, जिससे मत्स्य पालन में उत्पादन बढ़ाया जा सके। इसके अलावा मछलियों को रोगों और परजीवियों के प्रति अधिक प्रतिरोधक बनाने के लिए जीन एडिटिंग का उपयोग किया जा सकता है, जिससे उनकी जीवित रहने की दर में सुधार हो। इस प्रकार जीन एडिटिंग के माध्यम से मत्स्य संवर्धन में सुधार लाकर समग्र मत्स्योत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।

सजावटी व्यापारः भारत में सजावटी मछलियां कुल सजावटी मछली व्यापार का लगभग 1% योगदान दे रही हैं। जीन एडिटिंग का उपयोग सजावटी मछलियों के सौंदर्य को डिजाइन करने या बढ़ाने के लिए किया जा सकता है जैसे कि रंग बढ़ाना, एल्बिनो बनाना, मोनोसेक्स आबादी विकसित करना, एक्वेरियम के लिए उपयुक्त मत्स्य आकार को विनियमित करना और बेहतर फीड–अपटेक आदि।

पर्यावरणीय लाभः जीन एडिटिंग का उपयोग मछलियों को उन स्थितियों के लिए अनुकूलित करने में किया जा सकता है जिनमें वे बेहतर ढंग से जीवित रह सकें, जैसे कि उच्च तापमान या कम ऑक्सीजन वाले पानी में इस प्रकार मत्स्यपालन हेतु पर्यावरणीय स्थिरता प्राप्त कर पर्यावरणीय हानि से बचा जा सकता है।

पोषण और गुणवत्ता में सुधार

जीन एडिटिंग के माध्यम से मछलियों के पोषणीय गुणों को बेहतर बनाया जा सकता है, जैसे कि ओमेगा 3 फैटी एसिड के उत्पादन को अधिकतम मत्स्य प्रजातियों में संभव बनाया जा सकता है जिससे मानव समाज को रोगमुक्त रखने में मदद मिलेगी।

निष्कर्ष

इस प्रकार CRISPR-Cas-9 जीनोम–एडिटिंग उपकरण चिकित्सा, कृषि और जैव प्रौद्योगिकी सहित कई क्षेत्रों में अनुप्रयोग होने के कारण बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रोद्योगिकी हैं। कृषि में, यह उनके पोषण मूल्य में सुधार करने के लिए नए अनाज के डिजाइन में मदद कर सकता है। चिकित्सा अनुसंधान में, कैंसर, एचआईवी और जीन थेरेपी जैसे सिकल सेल रोग, सिस्टिक फाइब्रोसिस और ड्यूकेन मस्कुलर डिस्ट्रॉफी जैसी गंभीर बीमारियों के निदान में और प्रभावी ढंग से इसकी मदद कैसे ली जाय इस पर शोध चल रहा है। कैस–9 प्रोटीन के उन्नत संशोधन के माध्यम से विशिष्ट जीन के नियमन में भी इस प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जा रहा है। हालांकि, नैदानिक अनुप्रयोगों में प्रौद्योगिकी का विस्तार करने के लिए इम्युनोजेनेसिटी, प्रभावी वितरण प्रणाली, ऑफ–टारगेट प्रभाव और नैतिक मुद्दे प्रमुख चुनौतियाँ हैं। यद्यपि क्रिस्पर–कैस 9 आणविक जीव विज्ञान में एक नया युग बन गया है और इसमें बुनियादी आणविक शोधों से लेकर नैदानिक अनुप्रयोगों तक की अनगिनत भूमिकाएं हैं, फिर भी व्यावहारिक अनुप्रयोगों में आने वाली चुनौतियों और बाधाओं को दूर करने के लिए अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है।

झारखण्ड राज्य में छोटे स्वदेशी कैटफिश मछलियों का प्रजनन और बीज संवर्धन

रजनी गुप्ता[1] एवं एच.एन.द्विवेदी[2]
[1]मत्स्य प्रसार पदाधिकारी, बोकारो
[2]निदेशक (मात्स्यिकी), झारखंड, रांची

झारखंड राज्य में मात्स्यिकी के विस्तार, मछलियों के उत्पादन में वृद्धि हेतु मछलियों की प्रजातियों की विविधीकरण की संभावना एवं छोटी कैटफिश मछलियों के बीजों की मांग को देखते हुए कैटफिश के प्रजनन की दिशा में समुचित कदम उठाए जाने की आवश्यकता उभरकर सामने आई है। झारखंड राज्य में छोटी कैटफिश मांगुर, सिंघी एवं पाबदा पाई जाती है इनमें से मांगुर एवं सिंही मछलियों का व्यावसायिक रूप में उत्पादन भी शुरू हो चुका है। प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना अंतर्गत बनाए जा रहे बायोफ्लोक टैंक, बायोफ्लोक तालाबों, आर.ए.एस प्रणाली की इकाइयों की स्थापना राज्य भर में की गयी है। इनमें सीमित जगह में अधिक उत्पादन हेतु छोटे आकार की मछलियों का पालन किया जा रहा है। इस परिस्थिति में छोटे कैटफिश मछलियों के बिज की मांग बढ़ी है। अभी तक इन बीजों की आपूर्ति पड़ोसी राज्य पश्चिम बंगाल से की जा रही है मछली पालन हेतु उच्च गुणवत्तापूर्ण बीज की उपलब्धता स्थानीय स्तर पर सुनिश्चित करने के लिए उक्त मछलियों का स्थानीय स्तर पर प्रजनन हेतु हैचरी (आधारभूत संरचना) एवं प्रशिक्षित मानव संसाधन की आवश्यकता है। छोटी कैटफिश के बीज की बढ़ती हुई मांग एवं भविष्य में मत्स्य पालन में विविधीकरण की संभावनाओं को देखते हुए राज्य सरकार के द्वारा इस दिशा में कदम उठाया जा रहा है। आईसीएआर–सीफा, भुवनेश्वर से तकनीकी सहयोग प्राप्त करने के लिए प्रकिया जारी है। साथ ही अभी हाल में 29 जुलाई से 1 अगस्त 24 तक झारखंड के कुछ चयनित मत्स्य कृषकों को हैचरी संचालको को "कैटफिश मछलियों का प्रजनन एवं बीज संवर्धन के प्रशिक्षण" हेतु सीफा कल्याणी फील्ड स्टेशन, पश्चिम बंगाल, भेजा गया था। प्रशिक्षण उपरांत सभी कृषक छोटे कैटफिश के प्रजनन एवं बीज उत्पादन हेतु उत्साहित एवं प्रयासरत हैं। भविष्य में इन कृषकों को योजना अंतर्गत आधारभूत संरचना (हैचरी) उपलब्ध कराए जाने से एवं आवश्यक तकनीकि सहयोग करने से इस दिशा में सफलता अपेक्षित है।

छोटी कैटफिश प्रजातियों के सफलतापूर्वक प्रजनन में स्थानीय स्तर पर जो बाधाएं उत्पन्न हो रहे हैं उनके निराकरण से स्थानीय स्तर पर गुणवत्तापूर्ण बीजों की उपलब्धता सुनिश्चित हो पाएगी, जिससे मछली उत्पादन में अभिवृद्धि एवं रोजगार का सृजन होगा। मछलियों के उत्पादन में बढ़ोतरी से मांग एवं आपूर्ति के अंतर को कम करने में सहायक सिद्ध होगा। स्थानीय स्तर पर बीज की आपूर्ति होने पर मछली उत्पादन में आशातित वृद्धि होगी कृषकों के आय में वृद्धि होगी एवं उच्च गुणवत्ता पूर्ण चिकित्सकीय रूप से महत्वपूर्ण मछली मांगुर एवं सिंघी की उपलब्धता से उपभोक्ताओं में पोषण के स्तर में उल्लेखनीय सुधार आएगा।

प्रस्तावना

झारखंड राज्य अपने उपलब्ध जल संसाधन 86538 हेक्टेयर तालब तथा 145426 हेक्टेयर जलाशय जलक्षेत्र के साथ मात्स्यिकी/जल कृषि के विस्तार और विकास के लिए एक बड़ी संभावना प्रदान करता है। मछली उत्पादन ना सिर्फ स्थानीय लोगों के लिए आजीविका का साधन मुहैया कराता है बल्कि लाखों लोगों के लिए ताजा प्रोटीन की उपलब्धता के साथ पोषण सुरक्षा भी प्रदान करता है। राज्य में मुख्य तौर पर भारतीय मेजर कार्प एवं विदेशी कार्प प्रजातियों की मछलियों का उत्पादन किया जाता रहा है। बीते 10–12 वर्षों से केज में पंगेशियस एवं तिलापिया मछली का पालन हो रहा है। इधर हाल के वर्षों में तिलापिया, कवई, मांगुर, सिंघी इत्यादि मछलियों की प्रजातियों के व्यवसायिक उत्पादन के तरफ मत्स्य किसानों का रूझान बढ़ा है। इसके अलावा प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना अन्तर्गत अंतरगत पिछले तीन–चार वर्षों में बायोफ्लॉक टैंक/बायोफ्लोक तालाब, आर.ए.एस प्रणाली के द्वारा मत्स्य उत्पादन शुरू किया गया है। क्योंकी इन प्रणालियों में सीमित तथा कम जगह में अधिक घनत्व में मछली उत्पादन किया जाता है, इसलिए इनमें छोटे आकर की मछलियों के उत्पादन को प्राथमिकता दी जाती है। जिनमें देशी मांगुर एवं सिंघी भी शामिल है।

उक्त अत्याधुनिक प्रणाली में वैज्ञानिक तकनीक से कम जगह कम समय में अधिक मछली का उत्पादन किया जा रहा है जिससे यह किसानों में बहुत तेजी से लोकप्रिया हो रहा है और भविष्य में इसकी संख्या और ज्यादा बढ़ने की संभावना है। मछलियों के बीज की मांग बड़ी है माछली पालन जल कृषि है एवं अन्य किसी भी कृषि कार्य की तरफ मछली पालन के लिए भी गुणवत्ता पूर्ण बीज की उपलब्धता पहली प्राथमिकता हैं। झारखंड में जलकृषि के विस्तार की उपरोक्त संभावनाओं एवं आने वाले दिनों में मछली की मांग के अनुरूप उपलब्धता बढ़ाने के लिए मछली की प्रजातियों में विविधता लाने की अवशयकता है। इस हेतु छोटे स्वदेशी मछलियां विशेष कर छोटे कैट फिश जैसे देसी मांगुर, सिंघी, पाबदा की वैज्ञानिक तरीके से उत्पादन को बढ़ावा देने की अवशयकता है जिसके लिए उक्त मछलियों के प्रचुर मात्रा में बीज की आवश्यकता पड़ेगी।

स्थानीय रूप से बीज की उपलब्धता बढ़ाने के लिए छोटी स्वदेशी कैटफिश देसी मागुर, सिंघी तथा पाबदा का सफल कृत्रिम प्रजनन एवं बीज संवर्धन हेतु तकनीकी सहयोग एवं आधारभूत संरचना की आवश्यकता है। देशी मांगुर, सिंघी या पाबदा मछलियों के कृत्रिम प्रजनन हेतू छोटी हैचरी की आवश्यकता पडती है जो किसान आसानी से संचालित कर सकते हैं। इनके प्रजनक का रखरखाव भी छोटे जलक्षेत्र 2000 वर्ग फीट में 20,000 की संख्या में अंगुलिकाओ का संचयन किया जा सकता है।

विषय वस्तु

छोटी कैटफिश जैसे देसी मांगुर, सिंघी, पाबदा (high value fish) उच्च गुणवत्तापूर्ण महंगी मछली है और इसकी मांग भी ज्यादा है। किसान को कम जगह में अधिक आय हो जाती है। झारखंड में self recruiting छोटी कैटफिश जैसे देसी मांगुर सिंघी का उत्पादन खुद ब खुद अन्य मछलियों के साथ हो जाता है। ये वैसे सदाबहार तालाबों में जिसमें थोड़ा बहुत कीचड़ तली में होता है। अब इन मछलियों के बाजार एवं बाजार मूल्य को देखते हुए तथा बगल के राज्य पश्चिम बंगाल से बीज उपलब्ध हो जाने के कारण मत्स्य कृषक इन मछलियों की प्रजातियों का संचयन कर व्यवसायिक रूप से उत्पादन कर रहे हैं। झारखण्ड के कुछ जलाशयों से पाबदा मछली की उपलब्धता प्रतिवेदित की गई है। झारखंड में कितनी तरह की कैटफिश की प्रजातियां पाई जाती है इस डाटा मौजूद नहीं हैं किन्तु इन मछलियों के व्यावसायिक रूप से उत्पादन हेतु बीज के लिए पश्चिम बंगाल पर निर्भर रहना पड़ता है। कुछ कृषकों के द्व ारा अपने प्रयास से छोटी कैट फिश की हैचरी की स्थापना की गयी हैं एवं वे सिंघी तथा देशी मांगुर के प्रजनन की दिशा में प्रयासरत हैं।

प्रजनक मछलियों की उपलब्धता एवं बाधाः

झारखंड के बाजारों में में देशी मांगुर एवं सिंघी की जीवित अवस्था में उपलब्धता देखी जा सकती है, विक्रेता इन मछलियों को जीवित अवस्था में ही बेचते हैं परंतु इनका प्रयोग प्रजनक के रूप में नहीं हो पता है क्योंकि यह विक्रेता उनके बारब एवं फिनस को तोड़ देते हैं, जिसके कारण mating के समय कठिनाइयां होती है एवं mating की प्रकिया सफल नहीं हो पता है। मांगुर एवं सिंघी पालन कर रहे किसानों में प्रजनक के रूप में इन मछलियों को उपलब्ध कराने के संबंध में प्रशिक्षित एवं जागरूक करने की आवश्यकता है। 'पाबदा' की उपलब्धता कुछ जलाशयों में पायी गयी है, उन जलाशयों के किसानों को पाबदा मछली के प्रजनक की पहचान एवं संरक्षण तथा संवर्धन हेतु प्रशिक्षित एवं जागरूक किए जाने की आवश्यकता है। उक्त प्रयास से उपयुक्त प्रजनक की उपलब्धता सुनिश्चित हो पाएगी एवं प्रजनक उपलब्ध कराने वालो कृषकों को भी अधिक आय की प्राप्ति होगी।

छोटी कैटफिश का पोषण और आर्थिक मूल्य, देशी कैटफिश मांगुर और सिंघी, अपने अधिक पोषण और आर्थिक मूल्य के लिए प्रसिद्ध है वायुश्वांशी कैटफिश मुख्य रूप से मांगुर और सिंघी को उनके अच्छे स्वाद एवं कम रीढ की सामग्री, उच्च पोषण मूल्य और आसान पाचन शक्ति के कारण उपभोक्ताओं के बीच एक मुख्य पसंद है। भारतीय कैटफिश, *सी. मांगुर* स्थानीय रूप से मांगुर के रूप में जाना जाता है एवं *एच.फॉसिलिस* जिसे स्थानीय रूप से सिंघी के नाम से जाना जाता है को भारत में एक संभावित जल कृषि प्रजाति माना जाता है। जिसकी उपलब्धता झारखंड में भी है इस मछली का अच्छा बाजार है यहां यह मुख्य कार्य की तुलना में अधिक कीमत प्राप्त करता है आमतौर पर ₹ 400 से 500 प्रति किलो है।

प्रेरित प्रजनन एवं बीज उत्पादनः

कुछ स्वदेशी कैटफिशों के प्रजनन और बीज उत्पादन का सफलतापूर्वक प्रदर्शन किया गया है और देश के कुछ हिस्सों में उनका व्यावसायिक उत्पादन भी शुरू किया गया है सेंट्रल इंस्टीट्यूट आफ फ्रेश वॉटर एक्वाकल्चर (सीफा), भुवनेश्वर और इसके क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र पश्चिम बंगाल को मांगुर एवं एवं पाबदा के प्रजनन और हैचरी प्रबंधन में सफलता मिली है इसके अतिरिक्त पाबदा कैटफिश के हैचरी का डिजाइन भी किया गया है। इन कैटफिशों की

कुछ विशेषताएं वायु स्वास्थ्य मछली वायुस्वांशी मछली होने के कारण सतह पर आकर कम ऑक्सीजन वाले पानी में जीवित रह सकते हैं। सभी प्रकार के उथले ताजा पानी के आवासन, दलदल, धान के खेत, नदियां झील, सिंचाई नहर में प्राकृतिक रूप से पनपते हैं। इन्हें अत्यधिक उच्च स्टॉकिंग घनत्व पर पाला जा सकता है, ये पिलेटेड आहार स्वीकार करते हैं, इनमें इंटरमस्कुलर हड्डियां कोमल, मांस और स्वादिष्ट स्वाद के कारण उच्च बाजार मूल्य मिलता है।

मांगुर और सिंघी को प्रकृति में पौष्टिक और उपचारात्मक मछली के रूप में माना जाता है, और इनमें हीमोग्लोबिन का उच्च प्रतिशत होता है। कार्प या पशु प्रोटीन की तुलना में सुपाच्य प्रोटीन होता है। राज्य में देशी मांगुर एवं सिंघी के बीजों की मांग एवं मत्स्य प्रजातियां की विविधता को बढ़ावा देने के लिए छोटे कैटफिश प्रजनन हेतु आवश्यक प्रशिक्षित मानव संसाधन एवं आधारभूत संरचना की आवश्यकता को देखते हुए राज्य सरकार के द्वारा राज्य के कुछ चयनित मत्स्य कृषकों, हैचरी संचालकों को क्षेत्रीय अनुसंधान अनुसंधान केंद्र भारती कृषि अनुसंधान परिषद फीफा कल्याणी फील्ड स्टेशन पश्चिम बंगाल सीफा, राहरा एवं कल्याणी (पश्चिम बंगाल) प्रशिक्षण हेतु भेजा गया था।

निष्कर्षः

झारखंड में जलीय कृषि में कैटफिशों के प्रजातियों के विविधीकरण की काफी संभावना पूर्व से ही रही है, लेकिन कई बाधाओं के कारण उन्हें अब तक उचित ध्यान नहीं मिल पाया है। किसी भी मछली प्रजाति के व्यवसायिक पालन के लिए मूल आवश्यकता गुणवत्तापूर्ण मछली बीज है, लेकिन वर्तमान में हैचरी उत्पादित गुणवत्ता वाले बीज की आपूर्ति या उपलब्धता कम होने के कारण इन मछलियों की खेती व्यापक स्तर पर नहीं हो पा रही है। अतः इन प्रजातियों के बीज उत्पादन हेतु सीफा एवं अन्य अनुसंधान केन्द्रों के तकनीकी सहयोग एवं हैचरी की आधारभूत संरचना की आवश्यकता है। झारखंड में इन प्रजातियों की उपलब्धता पर आरंभिक सर्वे एवं शोध भी किया जा सकता है।

संदर्भः प्रशिक्षण मैन्युअल कैटफिश मछलियों का प्रजनन एवं बीच संवर्धन, क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, सीफा कल्याणी फील्ड स्टेशन, पश्चिम बंगाल, भाकृअनुप–मीठा जल जीव पालन अनुसंधान संस्थान, कौशल्यागंगा, भुवनेश्वर, उड़ीसा।

भारत में मूंगा चट्टानें: जैव विविधता, खतरे और संरक्षण प्रयास

टीना जयकुमार टी.के एवं उत्तम कुमार सरकार
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

परिचय

प्रवालीय भित्तियाँ (मूंगा चट्टानें) उथले पानी में पाई जाने वाली समुद्री पारिस्थितिक प्रणालियाँ हैं, जो उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाई जाती हैं। ये अपनी अत्यधिक उच्च बायोमास उत्पादन और विविध जीव–जंतुओं के लिए जानी जाती हैं, जो जैव विविधता के मामले में उष्णकटिबंधीय वर्षा वनों के समान हैं। 'कोरल' शब्द Phylum Cnidaria की कक्षा Anthozoa के तहत समुद्री अकशेरुकी जीवों की एक विस्तृत श्रृंखला को संदर्भित करता है, जिसमें हार्ड कोरल, सॉफ्ट कोरल, कीमती कोरल और हाइड्रोकोरल शामिल हैं। "Corallum" पूरे कोरल संरचना को संदर्भित करता है, जबकि "Corallite" वह चूनेदार कप होता है जहाँ कोरल पॉलीप्स रहते हैं। ये पॉलीप्स प्लवक (plankton) और अन्य खाद्य कणों को पकड़ने के लिए बलगम का स्राव करते हैं, जिन्हें वे फिर खाते हैं। प्रवालीय भित्तियों में एक महत्वपूर्ण सहजीवी संबंध कोरल पॉलीप्स और प्रकाश संश्लेषक शैवाल के बीच होता है। शैवाल को पॉलीप्स से पोषक तत्व और कार्बन डाइऑक्साइड प्राप्त होता है, जबकि पॉलीप्स को शैवाल से प्रकाश संश्लेषण उत्पाद प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त, एक जीव जिसे Zooxanthellae कहा जाता है, वह कोरल पॉलीप्स की वृद्धि और स्रावी कार्यों को नियंत्रित करता है। कोरल संरचना में बाहरी जीवित ऊतक की एक परत होती है जो चूना पत्थर के कंकाल की एक निचली परत को स्रावित करती है। स्वतंत्र रूप से तैरने वाले प्लानुला (coral larvae) का द्वीपों के जलमग्न किनारों पर लगाव और बाद में वृद्धि अंततः प्रवाल भित्ति के निर्माण की ओर ले जाती है।

प्रवालीय जीव मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं: हर्माटाइपिक कोरल (Hermatypic corals) और अहर्माटाइपिक कोरल (Ahermatypic corals)। हर्माटाइपिक कोरल का ज़ोक्सांथेला (zooxanthellae) के साथ सहजीवी संबंध होता है और वे महासागरों की सतह के नीचे विशाल भित्ति संरचनाओं का निर्माण करते हैं। ये भित्तियाँ दुनिया भर के उष्णकटिबंधीय जल के फोटिक ज़ोन में पनपती हैं। अहर्माटाइपिक कोरल अकेले या उपनिवेश रूप में होते हैं और ये बिना सहजीवी के होते हैं, जो समुद्र के पानी से प्लवक या मृत कार्बनिक पदार्थ को फ़िल्टर करके पोषक तत्व प्राप्त करते हैं। ये भित्ति निर्माण में योगदान नहीं देते।

कोरल्स में उनकी आवास की विशिष्ट स्थितियों के अनुसार अपनी वृद्धि के पैटर्न को अनुकूलित करने की एक अद्भुत क्षमता होती है, जिसमें गहराई, प्रकाश के स्तर, तापमान और पानी के प्रवाह जैसे कारक शामिल होते हैं। इस प्रकार, एक ही भित्ति में विभिन्न प्रकार के आवास होते हैं, जो उन जीवों की अनूठी आवश्यकताओं के अनुसार होते हैं जो उन पर निर्भर होते हैं। स्वयं कोरल के अलावा, वे मछलियाँ, घोंघे, क्रस्टेशियन, शार्क, डॉल्फिन और समुद्री कछुए जैसे समुद्री जीवों की एक विस्तृत श्रृंखला का समर्थन करते हैं।

ये भित्तियाँ विशिष्ट परिस्थितियों की मांग करती हैं जिनमें उथली गहराइयाँ, सीधे सूर्य के प्रकाश का संपर्क, 23–25°C के बीच इष्टतम तापमान, और निलंबित तलछटों से मुक्त साफ पानी शामिल हैं। ये भित्तियाँ समुद्री जीवन का समर्थन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और दुनिया भर में लाखों लोगों को विभिन्न आर्थिक और पर्यावरणीय लाभ प्रदान करती हैं (चित्र 1)।

चित्र 1. मूंगा चट्टान की पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएँ

भारत में प्रवाल भित्ति

भारत में मुख्य रूप से चार प्रकार की प्रवाल भित्तियाँ पाई जाती हैं:

1. **प्लेटफार्म भित्तियाँ (Platform Reefs)**: ये भित्तियाँ लगभग सपाट होती हैं और इनकी अपनी कोई लैगून नहीं होती। ये महाद्वीपीय शेल्फ के उथले हिस्सों पर स्थित होती हैं और भारत में मुख्य रूप से कच्छ की खाड़ी में पाई जाती हैं।
2. **फ्रिंजिंग भित्तियाँ (Fringing Reefs)**: ये भित्तियाँ मुख्य भूमि या द्वीपों के किनारों के पास विकसित होती हैं। भारत में, ये मन्नार की खाड़ी, पलक की खाड़ी और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में पाई जाती हैं (चित्र 2)।
3. **रुकावट भित्तियाँ (Barrier reefs)**: ये फ्रिंजिंग रीफ्स के समान होते हैं, लेकिन इन्हें मुख्य भूमि से गहरे समुद्र के द्वारा अलग किया जाता है। ये भारत में अंडमान और निकोबार द्वीपों में पाई जाती हैं। दुनिया भर में सबसे प्रसिद्ध उदाहरण ग्रेट BARRIER रीफ, ऑस्ट्रेलिया है।
1. **एटोल (Atolls)**: ये समुद्र में स्थित संरचनाएँ होती हैं और भूमि से जुड़ी नहीं होतीं। ये मुख्य रूप से लक्षद्वीप द्वीपसमूह में पाई जाती हैं।

भारत में प्रवाल भित्तियाँ अपनी उल्लेखनीय जैव विविधता के लिए जानी जाती हैं, जो महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र के रूप में कार्य करती हैं जो समुद्री जीवन की एक विस्तृत श्रृंखला का समर्थन करती हैं। D. et al. द्वारा एक व्यापक अध्ययन के अनुसार। 2020 में, कुल 585 मूंगा प्रजातियाँ, 108 जनरेशन और 23 कुलों में वितरित होने की सूचना है। इनमें से, एक्रोपोरिडे कुल ने छह प्रजातियों में 184 प्रजातियों के साथ प्रजातियों के संयोजन में सबसे अधिक योगदान दिया। इसके बाद मेरुलिनिडे कुल आया, जिसमें 19 जनरेशन के भीतर 100 प्रजातियां शामिल थीं। इसके अतिरिक्त, पोरिटिडे कुल में चार प्रजातियों की 52 प्रजातियां शामिल थीं, जबकि फंगिडे कुल का प्रतिनिधित्व 15 प्रजातियों की 42 प्रजातियों द्वारा किया गया था। प्रमुख प्रजातियाँ हैं एक्रोपोरा (104 प्रजातियाँ), मोंटीपोरा (54 प्रजातियाँ), पोराइट्स (30 प्रजातियाँ), डिप्सास्ट्रिया (20 प्रजातियाँ), गोनियोपोरा (20 प्रजातियाँ), फेवाइट्स (18 प्रजातियाँ), लोबोफिलिया (16 प्रजातियाँ) और पावोना (16 प्रजातियाँ)। यह विविधता न केवल भारत में प्रवाल भित्ति पारिस्थितिकी प्रणालियों के स्वास्थ्य और जटिलता का संकेत है, बल्कि समुद्री जैव विविधता संरक्षण के लिए इन आवासों के महत्व को भी उजागर करती है। प्रवाल प्रजातियों का विविध संयोजन चट्टानों की संरचनात्मक जटिलता में योगदान देता है, जो मछली, अकशेरुकी और शैवाल सहित कई समुद्री जीवों के लिए आवश्यक वास स्थल प्रदान करता है।

तालिका 1. भारत में प्रमुख मूंगा चट्टानें, प्रमुख मूंगा पीढ़ी और संरक्षण रणनीति

चट्टान का स्थान	रीफ क्षेत्र (किमी²)	प्रमुख पीढ़ी
अंडमान व निकोबार द्वीप समूह	1021.46	एक्रोपोरा, मोंटीपोरा, पोराइट्स, डिप्सा. स्त्रिया, फेविया और पोसिलोपोरा
काची की खाड़ी	325.5	मोंटीपोरा, गोनियोपोरा और फ़ेविया
मन्नार की खाड़ी और पाक खाड़ी	94.3	एक्रोपोरा, मोंटीपोरा और पोराइट्स
लक्षद्वीप द्वीप समूह	933.7	एक्रोपोरा, पोराइट्स और मोंटीपोरा

चित्र 2. अंडमान द्वीप की मूंगा चट्टानें

प्रवाल भित्तियों को खतरा

प्रवाल भित्तियों का स्वास्थ्य, 60 के दशक से साहित्यिक रिकॉर्ड्स से अनुमानित, मुख्य रूप से मानवजनित हस्तक्षेप और तनाव के कारण निरंतर गिरावट पर है। ग्लोबल वार्मिंग महासागरों में अम्लता बढ़ा रही है, जो प्रवाल पारिस्थितिक तंत्र के लिए खतरा है। इसके अलावा, दुनिया भर में ग्लेशियरों के पिघलने से समुद्र स्तर बढ़ रहा है, जिससे प्रवाल भित्तियाँ जलमग्न हो रही हैं और उनके विकास के

लिए अपर्याप्त सूर्य प्रकाश मिल रहा है, जिससे उनकी वृद्धि धीमी हो जाती है। प्रवाल भित्तियाँ तापीय तनाव के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं, जो समुद्र की सतह के तापमान (SST) के एक निश्चित सीमा से अधिक होने पर सहजीवी शैवाल की हानि के साथ–साथ विरंजन (bleaching) घटनाओं का कारण बन सकती हैं। प्रवाल विरंजन तब होता है जब प्रवाल ऊतक सफेद हो जाता है, जो जूक्सांथेला नामक सहजीवी शैवाल के आंशिक या पूर्ण निष्कासन के कारण होता है। बढ़ी हुई किरण, कम लवणता, और धातु प्रदूषण जैसी अन्य कारक भी विरंजन में योगदान कर सकते हैं, लेकिन मुख्य चिंता समुद्र की सतह के तापमान में वृद्धि के कारण हो रही ग्लोबल तापमान में वृद्धि है। मजबूत तूफानों के बढ़ने से महासागरीय लहरें प्रवाल भित्तियों को तोड़ती और क्षति पहुँचाती हैं। ये लहरें प्रवाल उपनिवेशों को भी तोड़ सकती हैं और उन्हें रहने के लिए असुरक्षित बना सकती हैं।

जैसे–जैसे समुद्र में अधिक से अधिक CO_2 अवशोषित होता है, pH स्तर बढ़ते जाते हैं। उच्च pH स्तर कमजोर प्रवाल कंकालों, उनकी बीमारियों और तूफानों द्वारा विनाश की संभावना को बढ़ाते हैं। विभिन्न महामारी रोग जैसे कि व्हाइट प्लेग, व्हाइट पॉक्स, व्हाइट बैंड और ब्लैक बैंड प्रवाल भित्तियों के लिए महत्वपूर्ण खतरा हैं, जिससे व्यापक क्षति होती है। भारतीय प्रवाल भित्तियों में हालिया रिपोर्टों से व्हाइट बैंड, पिंक लाइन, पिंक स्पॉट, व्हाइट पॉक्स, येलो बैंड, फंगल ब्लॉच, व्हाइट प्लेग, नारकोटिक पैचेस, ब्लैक बैंड और कोरलिन लीथल ऑरेंज डिजीज (CLOD) जैसी बीमारियों के उभरने की जानकारी मिली है।

अवैध और विनाशकारी मछली पकड़ने की प्रथाएँ, जिनमें विस्फोटक मछली पकड़ना शामिल है, प्रवाल भित्तियों के अपक्षय में योगदान देती हैं (चित्र 2)। अधिक मछली पकड़ने से शाकाहारी मछलियाँ समाप्त हो जाती हैं, जिससे शैवाल की अनियंत्रित वृद्धि होती है और प्रवाल और मछली रहित शैवाल–प्रधान बंजर भित्तियों की ओर बदलाव होता है। Kappaphycus alvarezii जैसी मैक्रोएल्गी और स्नोफ्लेक ऑक्टोकोरल Carijoa riisei का आक्रमण प्रवाल भित्तियों को और नुकसान पहुँचाता है। प्रवाल–खाने वाले क्राउन ऑफ थॉर्न्स स्टारफिश (*Acanthaster planci*) के प्रकोप की रिपोर्ट भी भारतीय प्रवाल भित्तियों में की गई है। चरम प्राकृतिक घटनाएँ जैसे चक्रवात, स्थानीय भूकंपीय उथल–पुथल, और सुनामी प्रवालों को अत्यधिक नुकसान पहुँचाते हैं। इसके अलावा, अनियंत्रित प्रवाल पर्यटन उथले पानी के प्रवालों को गलती से या जानबूझकर कुचलने और टुकड़े करने के माध्यम से अपक्षय में योगदान देता है (चित्र 3)।

इसके अतिरिक्त, मानवजनित गतिविधियाँ जैसे अवैध शंख संग्रहण, अनियमित दोहन, और विदेशी समुद्री जीवों और प्रवाल भित्ति से प्राप्त उत्पादों की तस्करी भारतीय भित्तियों के लिए प्रमुख चिंताएँ बनी हुई हैं। समुद्री प्रदूषण, विशेष रूप से प्लास्टिक और अन्य प्रदूषकों से, प्रवाल भित्तियों का दम घोंट रहा है। प्रवालों को जीवित रहने के लिए पर्याप्त स्थान और स्वच्छ पानी की आवश्यकता होती है, लेकिन बढ़ते प्रदूषण स्तर उनके अस्तित्व को खतरे में डाल रहे हैं।

चित्र 3. प्रवाल भित्तियों के लिए प्रमुख खतरे

संरक्षण रणनीतियाँ

भारत में समुद्री पार्कों और बायोस्फीयर रिजर्व की स्थापना के माध्यम से मूंगा चट्टान संरक्षण के प्रयास किए गए हैं। उचित रूप से प्रबंधित एमपीए और बायोस्फीयर रिजर्व निवास स्थान की रक्षा करते हैं और जैव विविधता के संरक्षण के साथ–साथ टिकाऊ उपयोग में दृढ़ता से योगदान करते हैं। दुनिया के कई हिस्सों में समुद्री पारिस्थितिक तंत्र के अति–दोहन में निरंतर तेजी को देखते हुए, एमपीए समुद्री जैव विविधता को बनाए रखने के लिए किसी भी रणनीति का एक अनिवार्य हिस्सा प्रतिनिधित्व करते हैं। उदाहरण हैं गुजरात में कच्छ की खाड़ी समुद्री पार्क, दक्षिण अंडमान के वंडूर में महात्मा गांधी समुद्री पार्क, मन्नार की

खाड़ी बायोस्फीयर रिजर्व और अंडमान और निकोबार में झाँसी रानी समुद्री पार्क। भारत में कुल 31 समुद्री संरक्षित क्षेत्र (एमपीए) हैं, जिनमें संरक्षण उद्देश्यों के लिए पांच मूंगा चट्टान क्षेत्रों की पहचान और सर्वेक्षण किया गया है।

समुद्री संसाधनों के संरक्षण और सतत उपयोग के प्रति स्थानीय समुदायों की भागीदारी सुनिश्चित करना फोकस क्षेत्र होना चाहिए। यह सुनिश्चित करने के लिए हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए कि संरक्षित क्षेत्रों के संचालन से स्थानीय समुदायों को आर्थिक और सामाजिक रूप से लाभ हो। संरक्षित क्षेत्रों से पारंपरिक मानव उपयोग को बाहर करने का प्रयास लोगों के भौतिक या आर्थिक अस्तित्व को खतरे में डाल सकता है। इसलिए, यह सुनिश्चित करने के लिए हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए कि एमपीए के संचालन से स्थानीय समुदायों को आर्थिक और सामाजिक रूप से लाभ हो। मानवीय गतिविधियों के प्रबंधन के लिए स्थानीय समुदायों और अधिकारियों की क्षमताओं में तत्काल सुधार की भी आवश्यकता है ताकि समुद्री पर्यावरण का उपयोग पारिस्थितिक रूप से टिकाऊ हो। वैकल्पिक या पूरक आजीविका मूंगा चट्टान के संरक्षण और चट्टान प्रबंधन में सामुदायिक भागीदारी को मजबूत करने का एक और तरीका है। लक्षद्वीप में इस संबंध में एनबीएफजीआर की पहल आगे बढ़ने का एक तरीका है जिसमें स्थानीय समुदाय वैकल्पिक आजीविका के रूप में सजावटी झींगा के पालन में शामिल होते हैं। इससे द्वीपवासियों की आजीविका को बढ़ावा देने के अलावा स्थायी मछलीघर व्यापार और प्रवाल भित्ति पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण में मदद मिलती है।

भारत में मूंगा चट्टान संरक्षण में कानून महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रवाल भित्तियों की सुरक्षा के लिए भारत सरकार द्वारा विभिन्न कानून बनाए गए हैं। उदाहरण के लिए, जुलाई 2001 से सभी स्क्लेरेक्टिनियन और गोर्गोनिड्स को वन्यजीव संरक्षण अधिनियम 1972 के तहत लाया गया था। संरक्षण प्रयासों को 2000 के समुद्री मत्स्य पालन विनियमन अधिनियम (एमएफआरए) और 2011 के तटीय विनियमन क्षेत्र (सीआरजेड) अधिसूचना के तहत भी लागू किया गया है, जो कानूनी रूप से भारतीय प्रवाल भित्तियों की रक्षा करें। तटीय विनियमन क्षेत्र अधिसूचना, 1991 सभी प्रवाल भित्तियों को एकमात्र कानूनी सुरक्षा प्रदान करती है। इसमें प्रवाल भित्ति क्षेत्र सीआरजेड 1 श्रेणी के अंतर्गत आते हैं। अंडमान, निकोबार और लक्षद्वीप के द्वीपों के लिए एक विशेष श्रेणी सीआरजेड 4 तैयार की गई है। सीआरजेड के भीतर गतिविधियों के विनियमन के मानदंडों में कहा गया है कि समुद्र तटों और तटीय जल से मूंगा और रेत का उपयोग निर्माण और अन्य उद्देश्यों के लिए नहीं किया जाएगा। मूंगा संरचनाओं में और उसके आसपास ड्रेजिंग और पानी के भीतर विस्फोट की अनुमति नहीं दी जाएगी। धारा 7 (2) में यह भी कहा गया है कि पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील क्षेत्रों जैसे समुद्री पार्क और मूंगा चट्टानों (19 फरवरी, 1991 की अधिसूचना 8.0114 (ई) में समुद्र तट रिसॉर्ट्स/होटलों के निर्माण की अनुमति नहीं दी जाएगी। लक्षद्वीप के प्रशासन ने पहले से ही निर्माण उद्देश्यों के लिए मूंगों के संग्रह पर प्रतिबंध लगा दिया है, लेकिन एटोल की जैव विविधता की सुरक्षा के लिए कुछ क्षेत्रों में एक राष्ट्रीय समुद्री पार्क स्थापित करने के लिए तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता है। आरंभ करने के लिए, संसाधनों के उपयोग के उनके पारंपरिक अधिकारों का सम्मान करते हुए, स्थानीय समुदायों के सहयोग से निर्दिष्ट क्षेत्र स्थापित किए जाने चाहिए जहां किसी हस्तक्षेप की अनुमति नहीं है।

लक्षद्वीप में पर्यटन, जिसे अब बड़े पैमाने पर अनुमति दी गई है, को पारिस्थितिक पर्यटन के रूप में सख्ती से विनियमित किया जाना चाहिए। द्वीपों से समुद्री सजावटी झींगा इकट्ठा करते समय मूंगा चट्टान पारिस्थितिकी तंत्र नष्ट हो जाता है। समुद्री सजावटी अकशेरुकी जीवों की संस्कृति को सुदृढ़ करने के एक भाग के रूप में, आईसीएआर–नेशनल ब्यूरो ऑफ फिश जेनेटिक रिसोर्सेज ने लक्षद्वीप के अगत्ती द्वीप में समुद्री सजावटी अकशेरुकी जीवों के लिए एक जर्मप्लाज्म संसाधन केंद्र की स्थापना की। केंद्र में समुद्री सजावटी झींगा का कैप्टिव उत्पादन किया जाता है जिससे जंगली स्टॉक पर दबाव कम करने में मदद मिलेगी। परियोजना के एक भाग के रूप में सामुदायिक जलीय कृषि इकाइयाँ स्थापित की गई हैं, जहाँ समुद्री सजावटी झींगा को महिला द्वीपवासियों द्वारा पाला जाता है और लाभ कमाने के लिए विपणन किया जाता है। समुद्री सजावटी झींगा पालन भारत में तटीय और द्वीप समुदायों के लिए एक संभावित वैकल्पिक आजीविका विकल्प है और इससे समुद्री जैव विविधता के संरक्षण में मदद मिलेगी।

कई अध्ययनों से पता चला है कि क्षतिग्रस्त और क्षत–विक्षत प्रवाल भित्तियों को विभिन्न पारिस्थितिक इंजीनियरिंग तकनीकों का उपयोग करके बहाल किया जा सकता है, जैसे कि प्रवाल स्थानांतरण, संपूर्ण प्रवाल कालोनियों का प्रत्यारोपण, प्रवाल फ्रैगिंग या रीफ बागवानी, नर्सरी स्थापित करना, और रीफ विकास के लिए कृत्रिम सब्सट्रेट्स को तैनात करना। कोरल रीफ बहाली एक प्रमुख संरक्षण रणनीति है जिसका उद्देश्य अपमानित, क्षतिग्रस्त,

या नष्ट हो चुके रीफ पारिस्थितिकी तंत्र को स्वस्थ स्थिति में बहाल करना और जीवित कोरल कवरेज को बढ़ाना है। प्रवाल भित्ति संरक्षण और प्रबंधन प्रथाओं में इन दृष्टिकोणों को शामिल करने से स्थानीय और वैश्विक तनावों के कारण प्रवाल गिरावट की निगरानी के अलावा ठोस परिणाम भी मिल सकते हैं। भारत में प्रवाल भित्तियों पर पारिस्थितिक लाभों और तटीय समुदायों की आर्थिक निर्भरता को ध्यान में रखते हुए, संभावित तटीय विकास स्थलों से जीवित मूंगों को स्थानांतरित करने और प्रत्यारोपण करने के लिए उपयुक्त स्थानों की पहचान प्रवाल भित्तियों के संरक्षण और स्थिरता में योगदान कर सकती है।

भारत में मूंगा बहाली के कुछ सफल प्रयासों के बावजूद, ऐसी पहल अभी भी अपने प्रारंभिक चरण में हैं। एक सफल बड़े पैमाने पर मूंगा बहाली कार्यक्रम तटीय संरक्षण, मत्स्य पालन, पर्यटन और समग्र पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। ऐसे कार्यक्रमों के लिए ठोस वैज्ञानिक समझ, सावधानीपूर्वक योजना और पुनर्स्थापित चट्टानों की दीर्घकालिक निगरानी की आवश्यकता होती है। यद्यपि वे महँगे हैं, फिर भी वे निष्क्रियता के परिणामों की तुलना में अधिक किफायती हैं। हालाँकि, अपर्याप्त वैज्ञानिक समझ और योजना के कारण होने वाली विफलताओं से बचने के लिए सावधानीपूर्वक कार्यान्वयन आवश्यक है।

केवल सरकारी एजेंसियों पर निर्भर रहने के बजाय दीर्घकालिक लाभार्थियों और कॉर्पोरेट संस्थाओं की पहल और भागीदारी आवश्यक है। "प्रदूषक भुगतान करेगा" सिद्धांत को लागू करने से प्रवाल भित्तियों के संरक्षण और बहाली के लिए वित्तीय संसाधन उत्पन्न करने की क्षमता है, जिससे राज्य के वित्त पर बोझ कम हो जाएगा। पुनर्स्थापना गतिविधियों को पारिस्थितिक न्याय को बढ़ावा देने, कॉर्पोरेट सामाजिक और पर्यावरणीय जिम्मेदारी का हिस्सा माना जा सकता है। इससे भारत और अन्य विकासशील देशों में विशेषज्ञों, कॉरपोरेट्स, नीति निर्माताओं और प्रबंधकों के बीच उनके संसाधनों और क्षमताओं के आधार पर उचित रीफ बहाली लक्ष्य स्थापित करने के लिए एक सचेत बहस को बढ़ावा मिलना चाहिए।

निष्कर्ष

भारत में मूंगा चट्टानें महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र हैं जो समृद्ध जैव विविधता का समर्थन करते हैं, समुद्र तट की रक्षा करते हैं और लाखों लोगों को आजीविका प्रदान करते हैं। जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और मानवीय गतिविधियों से महत्वपूर्ण खतरों का सामना करने के बावजूद, चल रहे संरक्षण प्रयास उनके संरक्षण की आशा प्रदान करते हैं। बढ़ती जागरूकता और वैश्विक सहयोग के साथ सतत प्रबंधन प्रथाएं, भावी पीढ़ियों के लिए इन अमूल्य समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों के अस्तित्व को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं।

मात्स्यिकी एवं मत्स्य पालन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण ज्ञान-विज्ञान

शरद कुमार सिंह
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

मछली किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती है। इसके अलावा मछलियां आम जनमानस के स्वास्थ्य में अमूल्य योगदान देती है। प्राचीनकाल से ही मछलियों की अपने पौष्टिक एवं औषधीय गुणों से एक विशिष्ट पहचान है। कृषि के अन्तर्गत जलजीव पालन भी एक अहम उद्यम है। जिसे सामान्य रूप से जलकृषि कहते है। जो हमारे खाद्य उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है। मत्स्य माँस आवश्यक अमीनों अम्ल, विटामिन्स, खनिज लवणों के साथ अन्य माँस की अपेक्षा सरल, सुपाच्य एवं स्वास्थ्यवर्धक होता है। वनस्पति युक्त आहार के साथ मत्स्य माँस का सम्पूरक उपयोग काफी प्रभावशाली होता है। मछलियां बहुअसंतृप्त वसा अम्ल (पालीअनसैचुरेटेड फैटी एसिड) के प्रचुर स्रोत है। मानव आहार में प्रति सप्ताह दो से तीन बार इनका सम्मिलन सदा लाभदायक साबित हुआ है। यही कारण है कि आम जनमानस में मछलियां लोकप्रिय हो रही है। ओमेगा–3 वसा अम्ल (ओमेगा–3 फैटी एसिड) लवणग्रत जल में पायी जाने वाली मछलियों में प्रचुरता में पायी जाती है जो बच्चों के अनुकूल विकास हेतु आवश्यक है। अनुसंधानों से पता चला है कि ऐसी माताएँ जो ओमेगा–3 परिपूर्ण मत्स्य का सेवन करते हुए बच्चों को जन्म देती है, उनके बच्चों की वृद्धि तीव्र एवं प्रखर होती है तथा स्वास्थ्य भी अच्छा पाया गया है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

होरा (1956) के अनुसार भारत में मछली के विषय में ज्ञान ईसा से 30 लाख वर्ष पूर्व से था। प्राचीन भारत की कलाकृतियों में प्राप्त विशिष्ट प्रतीकों, चित्रों, मूर्तियों तथा कढ़ाई आदि में मछली को विशेष स्थान प्राप्त था। युगल–मीन या मीन–मिथुन को अष्टमंगल प्रतीको में से एक माना गया था। इसमें दो मछलियों के मुंह में रस्सी है तथा इसी के द्वारा दोनों एक दूसरे से जुड़ी है। सुन्दर नेत्रों वाली स्त्रियों को मीनाक्षी (मीन समान नेत्र) नाम से पुकारा जाता है। सांची संग्रहालय में रखी गई छठी शताब्दी (ए. डी.) की गौतम बुद्ध की मूर्ति की दाई कलाई तथा महाबोधि के बज्रासन सिंहासन के सामने स्थित गौतम बुद्ध के पद चिन्हों पर तीन मछलियों का चित्र है। यह तीनों मछलियां एक ही मुंह द्वारा एक दूसरे से जुड़ी है। कामदेव की पताका तथा भगवान श्रीकृष्ण के कुण्डलों में मछलियां चित्रित होना और अर्जुन का मत्स्य–नेत्र भेदन भी मछलियों के महत्व को दर्शाता है। "मत्स्य जातक" कथा में विशाल मछली के रूप मे जन्मे बोधिसत्व ने भूखे प्राणियों के प्राण रक्षा के लिये स्वयं को भोजन के रूप में अर्पित कर दिया था। धार्मिक ग्रन्थ तथा महाकाव्य रामचरित मानस के बाल कांड तथा सुन्दर कांड में अनेक स्थानों पर गोस्वामी तुलसीदास जी ने जल जीवन का अति सुन्दर तथा रोचक ढंग से वर्णन किया है। महर्षि वाल्मीकि द्वारा किष्किधा कांड में भी अनेक वर्णन मिलते है। मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा की खुदाई (सिन्धु घाटी सभ्यता 2500 से 1500 ईसा पूर्व) में मछलियों के कटे हुए अवशेष मिले है, जिससे पता चलता है कि उस काल में भी मछलियों का भोजन के रूप में प्रयोग होता था। सम्राट विक्रमादित्य षष्ठम के पुत्र सम्राट सोमेश्वर द्वारा लिखित 'मत्स्य विनाद' नामक पुस्तक (विक्रम संवत् 1127 अर्थात् ईस्वी सन् 1070) से मत्स्य आखेट संबन्धित मछलियों आदि के बारे में ज्ञान मिलता है।

सम्राट अशोक के शिलालेखों में प्राप्त वर्णनों से उस काल में मछली पालन तथा पकड़ने आदि के बारे में बनाये गये नियमों का ज्ञान होता है। दिल्ली शिवालिक के पांचवें शिलालेख में मछली मारने के सम्बन्ध में यह निर्देश है कि आषाढ़ पूर्णिमा से पौष पूर्णिमा तक अधोलिखित तिथियों पर मछली पकड़ने/बेचने पर प्रतिबन्ध लगा था–

- पौष माह में पुष्य नक्षत्र तथा पूर्णिमा, चौदस और अमावस्या को।
- आषाढ़ तथा पौष माह में दोनों प्रतिपदा।

उपरोक्त शिलालेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि मत्स्य उद्योग को उस काल में मान्यता प्राप्त थी तथा भोजन में मछली का उपयोग महान सम्राट अशोक के समय में भी होता था जबकि उस काल में जीव हत्या पर रोक लगा दी गई थी। ईसा से 300 वर्ष पूर्व मौर्य काल में चाणक्य ने विभिन्न धर्मसूत्रों के अध्ययन के आधार पर शासन चलाने के लिये प्रसिद्ध नीति ग्रन्थ "कौटिल्य अर्थशास्त्र" की रचना की। इस पुस्तक में भी मत्स्य–उद्योग के लिए स्पष्ट नियम बनाये गये थे। जनपद–निवेश के उन्नीसवें प्रकरण में उल्लेख है कि "राजा जलाशयों तथा झीलों में मछली

पकड़ने, नौका चलाने एवं शाक व्यापार पर अपना स्वामित्व रखेगा।" "कौटिल्य अर्थशास्त्र" में मत्स्य–उद्योग तथा राज्य संचालित मछली व्यापार हेतु जनहित में नियम भी बना दिये गये थे। उदाहरणार्थ कुछ उद्धरण प्रस्तुत है–

- मछली की रक्षा, प्रजनन, शुल्क आदि प्राप्त करने, मछली के प्रबन्धन तथा प्रशासनिक व्यवस्था के अतिरिक्त मछली की प्रजाति तथा नमूने का पूरा–पूरा महत्व अनुमानित किया जाता था।
- मछली पकड़ने की अनुज्ञा के अनुसार पकड़ी हुई मछली का छठा भाग राज्य शुल्क के रूप में जमा किया जाता था।
- इकतालीसवें प्रकरण में लिखा है कि पौधो में अंकुर फूटने के बाद छोटी–छोटी ताजा मछलियों की खाद देनी चाहिए।

हमारे देश में उपलब्ध प्रचुर अंतरस्थलीय जल–संसाधनों के आधार पर मत्स्य उद्योग तथा व्यापार का प्रचार–प्रसार भी आवश्यक था। समय, काल, स्थान, परिस्थिति के अनुसार मत्स्य–पालन की पद्धतियों में अन्तर होता रहा है। हमारे देश का 8110 किमी. विस्तृत समुद्र तट मछुआरों के लिये सदैव से उपयोगी रहा है, जिससे मछली की प्राप्ति अबाध गति से निरन्तर होती रही है। क्षेत्र विशेष की परिस्थिति के अनुसार वहाँ की नाव, जाल आदि उपकरण में पायी जाने वाली विभिन्नता मत्स्य–उद्योग की प्राचीन परम्परा की जीवन्त उदाहरण है। धीरे–धीरे मत्स्य पालन तथा व्यापार जनरूचि, भोजन स्वभाव तथा अन्य कारणों (जिसमें सामाजिक मान्यतायें, मौसम आदि प्रमुख है) से देश के पूर्वी भागों यथा असम, उड़ीसा, बिहार, बंगाल तथा समुद्र तटीय स्थानों में ही अधिक प्रचलित रह गया। इन स्थानों पर मछली तथा चावल स्थानीय लोगों के दैनिक भोजन का आवश्यक अंग बन गये। परन्तु स्वत्रंता प्राप्ति के पश्चात् धीरे–धीरे केन्द्र तथा राज्य सरकारों के प्रयास से मत्स्य पालन पुनः पुनर्जीवित होकर देश के प्रत्येक कोने में अपनाया जा रहा है। उपलब्ध जल संसाधनों का उपयोग उन्नत वैज्ञानिक ढंग से जलजीव पालन हेतु करके निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या को प्रोटीन युक्त पौष्टिक आहार उपलब्ध कराया जा सकता है। ऐसे में जलीय वातावरण का उपयोग विभिन्न प्रकार के जन्तुओं के पालन तथा पादपों को उगाकर अतिरिक्त भोज्य पदार्थ पैदा करने के लिये किया जा सकता है।

मछली क्या है?

मछली शीत रक्त जलीय कशेरुकी प्राणी है जो मीठे या खारे जल में निवास करती है। ये प्रारूपिक रूप से बाह्य तापीय, शल्कीय, या अशल्कीय दो जोड़े फिनधारी और जोड़ा रहित कई फिन (पंख), गलफड़ों से श्वास लेने वाला जीव है। रेस्तराँ या वाबर्ची दृष्टिकोण से मछलियां दो प्रकार की होती है। जिसे पंखमीन फिनफिश एवं कवचमीन (सेलफिश) कहते है। इस वर्गीकरण के अनुसार पंखमीन

मछलियों में पंख, रीढ़ (कशेरुका) और गलफड़े होते है, इसके अन्तर्गत शल्कमीन एवं अशल्कमीन मछलियां आती है। जबकि कवचमीन मछलियों (झींगा, सीपी, घोंघा आदि) में एक या दूसरा कवच होता है जो अकशेरुकी होती है। कुछ शल्कमीन एवं अशल्कमीन मछलियां वायुश्वासी भी होती है, जिसमें सौर (मरलस) और मांगुर, सिंघी आदि बिड़ालमीन आते है। उपरोक्त को निम्नलिखित प्रवाह आरेख–1 से समझा जा सकता है।

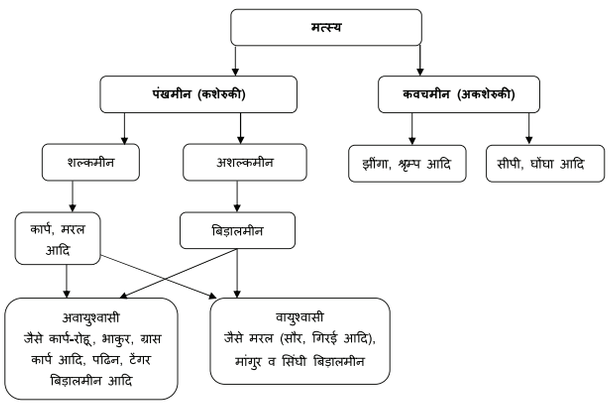

आरेख–1

प्रमुख लोकप्रिय मत्स्य समूहः प्रमुख रूप से निम्न मत्स्य समूह प्रचलित है।

1.	लैवरिन्थ फिश	2.	बिड़ालमीन
3.	चिचलीड	4.	साइप्रिनिडस
5.	लोचेज	6.	लाइभ वियरर

मछलियों का प्रमुख वर्गीकरण

(1) बिना कवच की मछलियों को मीठा जल एवं खारा जल वाले दो समूहों में विभाजित किया जा सकता है।

(2) मछलियों को तैरने की प्रकृति पर विभाजन किया गया है। चपटी मछली तली में तैरती है। गोलीय मछली में गोलाकार शरीर होता है आँखे सिर के दोनो तरफ होती है।

(3) वसा के आधार पर मछलियों में विभाजन

(क) निम्न वसा मत्स्यः इस प्रकार की मछलियों में

तेल उनके मांस के अपेक्षा यकृत में होता है। जिनमें वसा 2.5 प्रतिशत होता है। उदाहरण : सीबास (भेटकी) मछली।

(ख) मध्य वसा मत्स्यः इस प्रकार की मछलियों में वसा 6 प्रतिशत से कम होता है। उदाहरण : टूना मछली।

(ग) उच्च वसा मत्स्यः इस प्रकार की मछलियों में वसा 30 प्रतिशत से ज्यादा होता है। वैसे औसतन 12 प्रतिशत वसा इस वर्ग की मछलियों में होता है। उदाहरणतः इल और मैकरल।

मछली पर अध्ययन करने वालों को क्या कहा जाता है?

जो व्यक्ति मछली पर अध्ययन करते है, उन्हे इक्थियोलाजिस्ट कहा जाता है।

मछलियों को कैसे पहचाने : कई सम्मिलित गुणों, मुख की अवस्था, शल्क गिनती, सामान्य गुण, रंग, अधिकतम लम्बाई और वितरण के आधार पर इनकी पहचान की जाती है।

नर एवं मादा का विभेदः कुछ प्रजातियों में इनका आकार या रंग अलग–अलग होता है। हमेशा यह स्पष्ट नहीं होता प्रजनन काल में विशेष प्रखर होता है। नर मछली के फिन खुरदरे तथा मादा के फिन मुलायम होते है। वयस्क मछली में नर के जननांग को दबाने पर सफेद द्रव निकलता है जबकि मादा के जननांग को दबाने पर अण्डे बाहर निकलते है।

मछलियां कैसे श्वसन करती हैः कुछ मछलियां फेफड़ों से श्वसन करती है लेकिन अधिकतर गलफड़ो से श्वसन करती है जो रक्त कोशिकाओं से बनी होती है।

लेटरल लाइन (पार्श्व रेखा) क्या हैः मछलियों में सिर से पूंछ तक शल्कों की श्रेणीबद्ध रेखा होती है। जिसके द्वारा मस्तिष्क को संवेदना पहुँचती है इसके द्वारा आहार खोज एवं शत्रुओं की जानकारी भी मिलती है।

मछलियां चिपचिपी क्यों होती हैः मछलियां अपने शरीर चर्म से एक प्रकार की श्लेष्मा निकालती है जो परजीवी एवं रोग से बचाने में मदद् करता है। कुछ मछलियों की श्लेष्मा अपने बच्चों को भोजन प्रदान करती है।

मछलियां क्या खाती हैः मछलियां प्राकृतिक रूप से सुक्ष्म प्राणियों का भोजन करती है। जिन्हें प्लवक (प्लेंकटान) कहते है। कुछ मछलियां कीट–पतंगो के लार्वा का भक्षण करती है अन्य मछलियां कोशस्थ प्राणी, जलीय पौधे, शैवाल, निम्न मत्स्य एवं उनके अण्डे, जलीय पंछी, कछुऐ, मेंढ़क साँप एवं चूहे आदि भी खा जाती है।

मछलियों के शत्रु कौन–कौन से हैः मछलियों को बड़ी या हिंसक मछलियां, पक्षी, साँप, कछुऐ, क्रस्टेशियन, कुछ कीड़ो के डिम्भ (ड्रेगन फ्लाई) और मानव, भोजन के रूप में लेते है और कुछ स्थानों पर जंगली बिल्ली (आटर), जंगली सूअर, भालू आदि मछलियों का भक्षण करते है।

मछलियां कहाँ रहती हैः मछली मीठाजल नदी, झील, जलाशय, सरोवर, ताल, मान चौर, तालाब, नाले आदि में निवास करती है कुछ मीठाजल मछली के जीवन का एक हिस्सा समुद्र या खारे जल में होता है। कुछ मछलियां खारे जल समुद्र, लैगून, सागर–संगम वैक–वाटर भूमिगत खारा जल आदि में निवास करती है।

क्या मछलियां पानी पीती हैः इस का उत्तर हाँ एवं ना दोनो में है। मीठाजल में निवास करने वाली मछली पानी नहीं पीती है। क्योंकि मीठाजल मछली के आन्तरिक शरीर का जल बाह्य पर्यावरण जल की अपेक्षा अधिक लवणीय एवं उच्च घनत्व वाला होता है जिससे इस प्रकार की मछली को पानी लेने से लगातार शरीर फूलने का खतरा होता है इस वजह से ये पानी नहीं पीती है। इनमें जो पानी त्वचा, गलफड़े एवं शरीर से प्रवेश होता है वह गुर्दे मे जाकर उत्सर्जित होकर पेशाब के रूप में बाहर निकल जाता है। खाराजल या समुद्री मछली में यह क्रिया बिल्कुल उल्टी होती है। इस प्रकार की मत्स्य के आन्तरिक शरीर का जल बाह्य पर्यावरण (खारा जल) की अपेक्षा कम लवणीय होता है। इस वजह से जल संतुलन का हमेशा खतरा होता है। जिससे बचने के लिये मछलियां ज्यादा मात्रा में खाराजल ग्रहण करती है क्योंकि उत्सर्जन पश्चात् जल की निकासी गलफड़ों एवं शरीर से होती रहती है।

मछलियां कैसे तैरती हैः मछलियों का आकार ज्यादातर भिन्न–भिन्न होता है। लेकिन सामान्यतः ये नौकाकार होते हुए जल में चलायेमान होती है।

मछलियां कैसे देखती हैः जल में देखना वायु की अपेक्षा अलग होता है। जल में प्रकाश विसर कर मन्द हो जाता है। इसके मद्देनज़र मछलियां अपने आप को माध्यम के अनुकूल बनाती है। बहुतेरी मछलियों की आँखें इस प्रकार की होती है कि उनमें एकल दृष्टि होती है। जैसे आँखे एक अलग तरह से असमन्वित चित्र एकत्रित करती है। जो न्यूनतम परत ओवरलैप करती है इसके अलावा मछलियों की रेटिना केवल मस्तिष्क के हिस्से में संवेदना पहुँचाती है। इसके विपरीत आँखे एकल दृष्टि प्रभाव में बढ़ेत्तरी करती रहती

है। जबकि मनुष्यों में दोहरा (ओवर लैसिंग) विजन उनकी आँखो के बनावट के कारण होता है। मनुष्य की आँखों में संवेदना नर्व (सिरा) के द्वारा मस्तिष्क के दोनों तरफ पहुँचती है जो द्विदृष्टि को सही साबित करता है। कुछ मछलियों में विभाजित दृष्टि होती है।

मछलियों की उम्र का पता कैसे चलता है: मछलियों के त्वचा में सिर से पूंछ तक शल्क का कवच होता है इन्हीं शल्कों को निम्न सूक्ष्मदर्शी में देखने से पता चलता है कि शल्क में कितना गोला (वलय) है उस आधार पर उम्र का पता चलाते है। इसके अलावा बिना शल्क वाली मछलियों में उनके कठोर भाग जैसे स्पाइन, आटोलिथ आदि का अध्ययन करके उम्र का पता लगाते है।

कितनी स्वास्थ्य हितकारी मछलियां: मछलियों का स्वाद उनकी उत्पति पर निर्भर करता है कि ये खारा जल या मीठा जल से लायी गयी है। खारे जल की मछलियों में ओमेगा–3 फैटी एसिड ज्यादा होता है। मांसाहारियों के लिये मछली अन्य मांस की अपेक्षा सुपाच्य भोज्य पदार्थ है।

1. **मानव मस्तिष्क के विकास में मछलियां:** मछली खायें और अपने मस्तिष्क को समृद्ध बनायें। ऐसी आम धारणा है कि ऐसे समुदाय जो अपने नित्य प्रति दिन भोजन में मत्स्य आहार के रूप में लेते है वे ज्यादा बुद्धिमान होते है। अनुसंधानों से यह साबित हो चुका है कि कुछ ऐसे पोषक तत्व है जो मानव मस्तिष्क विकास में आवश्यक है वह मछलियों में परिपूर्ण होते है। मस्तिष्क में ज्यादा मात्रा में डिकोसा हेक्साओनिक एसिड (डी.एच.ए.) होता है। जो मनुष्य के शरीर में स्वयं संश्लेषित नही हो पाता वो मछलियों में ज्यादा मात्रा में होता है। मछलियों में इकोसा पेन्टाओनिक एसिड (ई.पी.ए.) और डी.एच.ए. पाली सचुरेटेड फैटी एसिड होते है जिनको आहार में प्रतिदिन कम से कम 200 मिली ग्राम एक सप्ताह तक लेने से यादगार शक्ति में वृद्धि होती है। इनसे दृष्टि सुधार, रक्त परिसंचरण और त्वचा सुधार तथा अर्थेराईटिस में भी कमी होती है।
2. **हृदय सुरक्षा हेतु मत्स्य:** मछलियों में पायी जाने वाली ओमेगा–3 फैटी एसिड मनुष्य के हृदय ऊतकों में प्रवेश कर उनकी सुरक्षा करती है। एक सप्ताह में कम से कम एक बार मछली खाने से हृदय गति अवरोध का डर आधा हो जाता है। ओमेगा–3 फैटी एसिड हृदय को कई तरह की सुरक्षा देता है जैसे इससे हृदय स्पन्दन तीव्र होता है, यह रक्त जमाव प्रतिरोधी है और साथ ही साथ हृदय धमनियों को बन्द पड़ने से रोकता है।
3. **रक्त दबाव नियन्त्रण में मत्स्य:** ओमेगा–3 पालीअनसेचुरेटेड फैटी एसिड परिपूर्ण मछलियों को आहार में लेने से उच्च तनाव में कमी के साथ रक्तचाप में कमी आती है।
4. **कैंसर बचाव में मत्स्य:** वैज्ञनिकों के प्रारम्भिक अनुसंधानों से पता चला है कि ओमेगा–3 फैटी एसिड कैंसर प्रसार को रोकता है।
5. **पोषक तत्वों से परिपूर्ण मछलियां:** मछली, प्रोटीन का एक अच्छा स्रोत है जो सामान्यतः इनमें 13–24 प्रतिशत तक पाया जाता है। मत्स्य प्रोटीन सभी आवश्यक अमिनों एसिड का अच्छा स्रोत है। मत्स्य प्रोटीन लाइसीन और थियोनिन से परिपूर्ण होता है जो वनस्पति प्रोटीन के साथ सम्पूरक आहार के रूप में हमारे जीवन में कार्य करता है।

   छोटी मछलियों में प्रचुर कैल्शियम होता है। मछलियों में विटामिन्स ए और डी पाया जाता है। खारे जल की मछलियां आयोडीन, फास्फोरस और कैल्शियम, कॉपर आदि से परिपूर्ण होती है। मत्स्य तेल इन्सूलिन कार्य में सुधार करता है। जिससे दूसरे प्रकार के डाइबटीज (मधुमेह) रोग से बचा जा सकता है। मोटापा दूर करने में इससे सहायता मिलती है।
6. **मानसिक तनाव दूर करने में मछलियां:** रंगीन मछलियां आज के तनावग्रस्त पिरवेष में मनुष्य को मानसिक सुकून प्रदान करती है। प्रतिदिन की दिनचर्या में जब मनुष्य शाम को अपने घर लौटता है, घर के एक कोने में मीनालय में रखी जीवन्त रंगीन मछलियों को देखकर या आकर्षित होकर कुछ समय के लिये सब कुछ भूलकर उन्ही मे घुलमिल जाता है। ये अन्य पालतू जानवरों की अपेक्षा बिना शोरगुल के अपनी तरफ आकर्षित करती है। रंगीन मछलियों की उपस्थिति वातावरण को जीवन्त बनाती है। पानी में उछल–कूद करती रंगीन मछलियां घर का सूनापन दूर करती है तथा इनकी मनोहरी अदायें एकाकी जीवन साथी बन जाती है। इनको घर में रखने से मनुष्य को प्रकृति के प्रति प्रेम और जीव जन्तुओं से लगाव बढ़ाता है।
7. **मनुष्य हेतु मत्स्य जल चिकित्सा:** विभिन्न प्रकार की मछलियों से भरे पात्रों/लघु मीनालय में पैर कुछ समय तक रखने से थकावट दूर होती है।

8. **शल्य चिकित्सा में मछलियां:** मछली की आंतो से प्राप्त रेशा मनुष्य की शल्य चिकित्सा में सिलाई का साधन पाया गया है।
9. **अस्थमा रोग दूर करने में मछलियां:** हैदराबाद, आन्ध्र प्रदेश में अस्थमा के रोगियों को एक विशेष तिथि और विशेष प्रकार की मछली के माध्यम से होम्योपैथिक दवा देने का प्रचलन है।
10. **मत्स्य अवशेष का विभिन्न उपयोग:** मत्स्य अवशेषों से जनित विभिन्न प्रकार के उत्पाद तैयार हो रहे है, जो हमारे लिये लाभप्रद है।

कार्प किसे कहते है?

वर्गीकरण (Taxonomy) के अनुसार साईप्रिनिडी फैमिली की सदस्य मछलियों को कार्प कहा जाता है। जिनके शरीर पर साइक्लाइड स्केल्स होते है और एक ही शाखित रेखाओं युक्त पृष्ठ पक्ष होता है (चित्र–1)। इनके मुंह पर स्पर्शाएं भी दो जोड़ी से कम होती है। पालन पद्धतियों में ये मछलियां महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

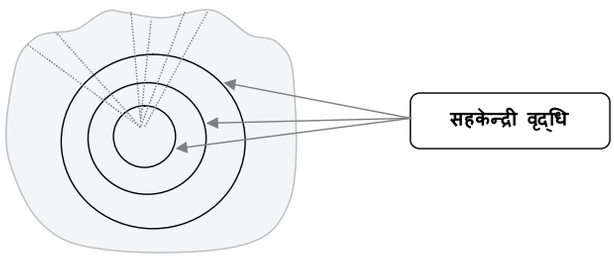

चित्र–1

कार्प की देशी प्रजातियों को भी मुख्यतः दो भागों में बांटा गया है–

1. मेजर कार्प्स (Major Carps)
2. माईनर कार्प्स (Minor Carps)

मेजर कार्प्स (Major Carps) यानि प्रमुख शफर मत्स्य वर्ग की मछलियों में पृष्ठ पक्ष में शाखित रेखाओं की संख्या 11 से अधिक होती है। इस ग्रुप की प्रमुख मछलियों में रोहू, कतला तथा नैन आती है। कालबासू भी इसी वर्ग में आती है। ये सभी मछलियां गंगा नदी में ज्यादा पाई जाती है अतः गैंगेटिक कार्प भी कही जाती है। सरसी (लेबियो गोनियस) तथा ममोला (लेबियो फिमब्रिएटस) को कावेरी कार्प के नाम भी जाना जाता है। मिश्रित मत्स्य पालन में मुख्यतः मेजर कार्प वर्ग की मछलियों का ही प्रयोग किया जाता है।

माईनर कार्प्स (Minor Carps) यानि निम्न शफर मत्स्य वर्ग की मछलियों में पृष्ठ पक्ष पर शाखित रेखाओं की संख्या 11 से कम होती है यह मछलियां कुछ छोटे आकार की होती है। इस वर्ग की प्रमुख मछिलयों में बाटा, मलवा, रैया, भागन, पुट्टी आती है।

विदेशी कार्प मछलियां

जलक्षेत्र के समुचित उपयोग तथा उत्पादन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कई बार अन्यत्र स्थानों से भी मछलियां लाकर पालन करना लाभकारी होता है। इन्ही परिस्थितियों को ध्यान में रखकर इन विदेशी कार्प मछलियों को मेजर कार्प के साथ मिश्रित पालन में पाला गया। जलक्षेत्रों के समुचित उपयोग और मत्स्य उत्पादन में गुणात्मक वृद्धि के लिये कामन कार्प (1939) तथा सिल्वर कार्प (1959) को विदेशों से लाकर इन्हे भारतीय परिवेश में ढाला गया। इन्हीं के साथ जलीय वनस्पति के जैविक नियन्त्रण हेतु ग्रास कार्प (1959) को भी लाया गया तथा मिश्रित मत्स्य पालन हेतु प्रयोग किया गया।

जलकृषि क्या, क्यों, कैसे?

जलजीव पालन के अन्तर्गत जलीय वातावरण का उपयोग विभिन्न प्रकार के जलीय जन्तुओं तथा वनस्पतियों के पालन तथा पैदावार के लिये किया जाता है। इसके अन्तर्गत इन जन्तुओं व वनस्पतियों का पालन, भोजन, व्यवहार, वृद्धि, प्रजनन आदि विभिन्न क्रियाएं आती है। इस प्रकार के जलजीव पालन को जलकृषि भी कहा जाता है। जल के उपयोग के अनुसार इसे मीठाजल जलकृषि, अल्प लवण जलकृषि एवं सामुद्रिक जलकृषि में बाँटा गया है। अधिकांश जलीय जन्तु तथा वनस्पतियां पौष्टिक पदार्थो से परिपूर्ण होती है (सारणी–1)। कृषि के अन्तर्गत स्थल पर उगाये जाने वाली फसलों, सब्जियों, फल तथा पाले जाने वाले जानवरो की तुलना में जलजीव पालन द्वारा प्रति हैक्टेयर कहीं अधिक उपज ली जा सकती है। जल में पाये जाने वाले सूक्ष्मदर्शी भोज्य प्राणियों, जिन्हे हम प्लवक के नाम से जानते है, का उपयोग हम सीधे नही कर सकते है। परन्तु प्लवक–भोजी स्वभाव वाली मछलियों, घोंघा, झींगा आदि का पालन करके हम इन सूक्ष्मदर्शी प्लवक का प्रयोग अपने लाभ के लिये कर सकते है, क्योंकि ये मछलियां, सीप, घोंघा, झींगा आदि इन प्लवक को भोजन के रूप में प्रयोग करते है (आरेख–2 व 3)। मछलियों, झींगा, केकड़ा आदि का रक्त ठंडा होता है तथा इनके शरीर का घनत्व जल के घनत्व के बराबर होता है, इसलिये इनकी अधिकतर ऊर्जा शारीरिक विकास हेतु प्रयोग की जाती है, जबकि भूमि पर पाले जाने वाले जन्तुओं में ऐसा नहीं होता है।

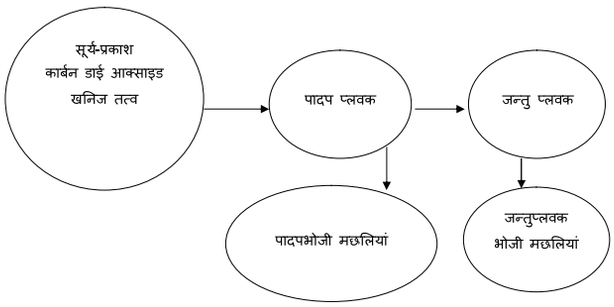

आरेख–2

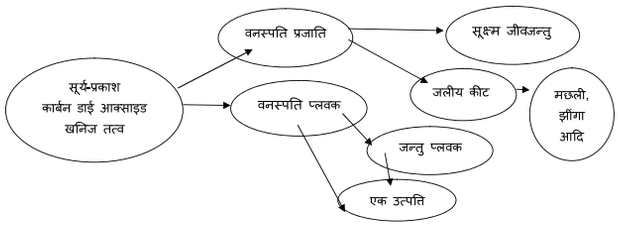

आरेख–3

भोज्य पदार्थ उत्पन्न करने के अतिरिक्त जलीय संसाधन का उपयोग मनोरंजन तथा आखेट के लिये भी किया जा सकता है। मत्स्याखेट के लिये चारे के रूप में प्रयोग होने वाले प्राणियों का पालन भी किया जाता है। प्राकृतिक तथा कृत्रिम मोती पैदा करने, आलंकारिक मत्स्य तथा पादप प्रजातियों का पालन करने के लिये भी जलीय संसाधनों का प्रयोग आवश्यक हो जाता है। मनुष्य तथा अन्य जानवरो द्वारा उत्पन्न मलजल को उपचारित करने के उपरान्त एक कोशिकीय आप्यकाओं के उत्पादन हेतु प्रयोग किया जा सकता है। ये आप्यकाएं बड़े जन्तुओं के भोजन हेतु प्रयोग की जा सकती है।

सारणी–1: जलजीवों में उपलब्ध पौष्टिक पदार्थ

क्र. सं.	नाम	ग्राम/100 ग्राम खाद्य भाग					मि. ग्रा./100 ग्राम खाद्य भाग			
		प्रोटीन	जल	वसा	खनिज	कार्बोहाइड्रेट	ऊर्जा कि. कैलोरी	कैल्शियम	फास्फोरस	लोहा
1	हिल्सा	21.8	53.7	19.4	2.2	2.9	273	180	280	2.1
2	करौंछ	14.7	81.0	1.0	1.3	2.0	76	320	380	0.8
3	कवई	14.8	70.0	8.8	2.0	4.4	156	410	390	1.4
4	मांगुर	15.0	78.5	1.0	1.3	4.2	86	210	290	0.7
5	नैन	19.0	75.0	0.8	1.5	3.2	98	350	280	1.1
6	रोहू	16.6	76.7	1.4	0.9	4.4	97	650	175	1.0
7	सिंघी	22.8	68.0	0.6	1.7	6.9	124	670	650	2.3
8	टेंगरा	15.2	70.0	6.4	2.1	2.3	144	270	170	2.0
9	पढ़िन (वरारी)	19.1	69.9	7.8	1.1	2.1	155	357	175	404
10	झींगा	19.1	77.4	1.0	1.7	0.8	89	323	278	5.3
11	कर्कट (केकड़ा)	11.2	65.3	9.8	4.6	9.1	169	160	253	–
12	समुद्री लोबस्टर	20.5	77.3	0.9	1.9	–	90	16	279	–
13	मसेल्स (मीठा जल)	14.5	79.5	1.6	2.3	2.1	81	592	406	–
14	जल पालक (पत्ती)	2.9	90.3	0.4	2.1	3.1	28	110	46	3.9
15	जल पालक (डंठल)	0.9	93.7	0.2	1.8	3.4	19	80	30	0.8
16	कमल (डंठल सूखा)	4.1	9.5	1.3	8.7	51.4	234	405	128	60.6
17	कमल (बीज सूखा)	17.2	10.0	2.4	3.8	64.0	346	36	294	2.3
18	कमल (जड़)	1.7	85.9	0.1	0.2	11.3	53	21	74	0.4
19	मखाना	9.7	12.8	0.1	0.5	76.9	347	20	90	1.4
20	घोंघा (बड़ा)	10.5	74.1	0.6	2.4	12.4	97	870	116	–
21	कुमुदिनी बीज	8.3	10.0	1.0	0.9	75.6	345	20	110	–
22	सिंघाडा (हरा)	4.7	70.0	0.3	1.1	23.3	115	20	150	1.35
23	सिंघाडा (सूखा)	13.4	13.8	0.8	3.1	68.9	330	70	440	2.4
24	समुद्री वनस्पतियां (सूखी)	10.8	9.5	0.8	22.7	51.2	255	1543	1143	–

मीठाजलकृषि की भूमिका: कृषि संबन्धित अन्य व्यवसायों में मीठाजल जलकृषि भी अब एक सक्षम आजीविका के रूप में स्थापित हुआ है। जो निम्नवत् रूपों में उपयोगी है।

- अन्य फसलों की तुलना में अधिक उत्पादकता के साथ लाभकारी।
- रोजगार का उत्तम साधन।
- आय सृजनात्मक क्षमता।
- उद्योगपरक व्यवसाय।
- नम क्षेत्र, बृहद जलक्षेत्र, परत्याग जलक्षेत्र, खारा जल लवणीय भूमि एवं जल पर्वतीय जलक्षेत्र हेतु उपयोगी।
- ग्रामीण मौसमी एवं बारहमासी तालाबों से उत्पादन उपयोगी।
- आखेट एवं पर्यटन हेतु उपयोगी।
- अपजल उपयोगी जलकृषि।
- बहते जल से मत्स्य उत्पादन।
- जलाशयों से पिंजड़ा एवं बाडा मत्स्य पालन।
- दो या अधिक कृषि पद्धतियों के साथ मत्स्य पालन समन्वयन।
- जैविक मत्स्य पालन क्षमता।
- विभिन्न प्रकार की मत्स्य प्रजातियों का पालन।
- झींगा के साथ एकल व बहु प्रजाति मत्स्य पालन।
- सम्पूरक उद्योग एवं उद्यम की अपार क्षमता।
- सीमान्त एवं लघु कृषकों के आजीवीका का साधन।
- भूमिगत जल स्तर बनाये रखने में मद्दगार।
- खाली पड़े गांव के तालाबों, रेलवे लाइन के किनारे उपलब्ध जलक्षेत्रों, पोखरो आदि हेतु उपयोगी।

गंभीर रूप से लुप्तप्राय स्थानिक कैटफिश *हेमिबाग्रस पंक्टेटस* का गहन अन्वेषण: संरक्षण स्थिरता रणनीतियाँ

वेदिका मसराम, साईकृष्णन के.आर., सरथ वर्गीज, अभिलाष सी.पी., चरन रवि एवं वी.एस. बशीर

पीएजीआर केंद्र, भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, कोच्चि

हेमीबाग्रस वंश में बड़ी बैग्रिड कैटफिश शामिल हैं और इसे सबसे पहले 1862 में ब्लीकर द्वारा स्थापित किया गया था। इसमें ऐसी प्रजातियाँ शामिल हैं जिनकी विशेषता उनके दबे हुए सिर, रूखे सिर की ढालें हैं जो त्वचा से ढकी नहीं हैं, पतली पश्चकपाल प्रक्रियाएँ और मध्यम रूप से लंबे वसायुक्त पंख हैं। 1864 में गुंथर के शोधकार्य के बाद से, बाद के लेखकों ने हेमीबाग्रस को मिस्टस के साथ समानार्थी बना दिया है; हालाँकि, इस वंश को हाल ही में 1991 में मो द्वारा फिर से मान्य किया गया। मो के निदान के अनुसार, हेमीबाग्रस के भीतर की प्रजातियों में एक पतला, प्लेट जैसा मेटाप्टेरीगोइड वाला एक दबा हुआ सिर होता है।

हेमिबाग्रस प्रजाति का वितरण

वैश्विक

हेमीबाग्रस वंश में वर्तमान में 41 मान्यता प्राप्त प्रजातियाँ शामिल हैं, जो गंगा–ब्रह्मपुत्र बेसिन के पूर्व में और यांग्त्जी बेसिन के दक्षिण में नदी जल निकासी में वितरित हैं। यह वंश दक्षिण–पूर्व एशिया में स्थित सुंडालैंड में अपनी सबसे अधिक विविधता प्रदर्शित करता है। हेमीबाग्रस की प्रजातियाँ पशु प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं, विशेष रूप से पूर्वी एशिया में, और इन प्रजातियों के लिए जलीय कृषि प्रथाएँ उनके वितरण क्षेत्रों में प्रचलित हैं (Ng, 1999)। उल्लेखनीय रूप से, हेमीबाग्रस की एक प्रजाति *एच. मेजर* को विलुप्त माना जाता है, जिसके जीवाश्म अवशेषों की पहचान थाईलैंड के मिओसीन झील के जीवों से की गई है।

भारत में हेमिबाग्रस की प्रजातियाँ

भारत में, हेमीबाग्रस की चार मान्यता प्राप्त प्रजातियाँ प्रलेखित हैं: *एच. मेनोडा* (Hamilton, 1822), *एच. मेडेली* (रॉसल, 1964), *एच. माइक्रोफथाल्मस* (D, 1877) और *एच. पंक्टेटस* (Jordan, 1849)। प्रत्येक प्रजाति अलग–अलग भौगोलिक क्षेत्रों में पाई जाती है। *एच. मेनोडा* पूर्वोत्तर भारत के जल में, बांग्लादेश और नेपाल के पद्मा, जमुना, गंगा, ब्रह्मपुत्र, महानदी और गोदावरी नदी में पाई जाती है। *एच. मेडेली* दक्षिणी भारत में कृष्णा नदी के जल निकासी के मध्य भाग में पाई जाती है। *एच. माइक्रोफथाल्मस* भारत में मणिपुर जल निकासी के साथ–साथ म्यांमार के इरावदी और सितांग जल निकासी, थाईलैंड में साल्विन नदी और दक्षिणी लाओस में मेकांग नदी प्रणाली में वितरित है। आईयूसीएन रेड लिस्ट के अनुसार, केवल विशेष रूप से *एच. पंक्टेटस* को गंभीर रूप से संकटग्रस्त के रूप में वर्गीकृत किया गया है, जबकि अन्य तीन प्रजातियों को कम से कम चिंताजनक के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

गंभीर रूप से लुप्तप्राय कैटफिश *हेमिबाग्रस पंक्टेटस* का अवलोकन

एच. पंक्टेटस, जिसे आमतौर पर पोर्थोल बगरिड, नीलगिरी मिस्टस, पोल्का डॉट कैटफ़िश या सॉर्ट प्लेटेट पिगमेल के नाम से जाना जाता है, भारत के पश्चिमी घाटों में कावेरी नदी प्रणाली की एक स्थानिक प्रजाति

है (Dahanukar et al., 2004; Ng and Kottelet, 2013)। इस प्रजाति का वर्णन सबसे पहले 1849 में जेर्डन द्वारा दक्षिणी भारत में कावेरी नदी और उसकी सहायक नदियों से एकत्र किए गए नमूनों के आधार पर *बाग्रस पंक्टेटस* के रूप में किया गया था। बाद के अभिलेखों से कावेरी नदी (Rao and Sheshchar, 1927; Hora, 1937; Ali et al., 2013) और इसकी विभिन्न सहायक नदियों के मुख्य शाखाओ में *एच. पंक्टेटस* की उपस्थिति का संकेत मिलता है, जिनमें भवानी नदी (Day, 1867, 1877, 1878; Mukherjee, 1931; Rajan, 1955), मोयार नदी (Rajan, 1955, 1963; Manimeklai, 1998), हेमवती नदी (Jayaram, 1977; Madhyastha and Murugan, 1993), काबिनी नदी (Isa and Shaji, 1997) और भवानी नदी (Athikadavu) (Ali et al., 2013) शामिल हैं। अतिरिक्त अभिलेखों में स्टेनली जलाशय (Praveen et al., 2019) और मुदुमलाई (Manimeklai, 1998) और करुवन्नूर (थॉमस, 2004) जैसे स्थान शामिल हैं।

वितरण संबंधी विसंगतियां

चालियार और भरतपुझा नदियों से *हेमीबाग्रस पंक्टेटस* की पहचान अनिश्चित है, क्योंकि यह प्रजाति आमतौर पर केवल पूर्व की ओर बहने वाली नदियों में पाई जाती है। इसके अतिरिक्त, करुवन्नुरपुझा में रिपोर्ट किया गया वितरण गलत हो सकता है, और तूतीकोरिन की पापुलेशन की भी गलत पहचान हो सकती है। इसके अलावा, AqGRISI एनबीएफजीआर डेटाबेस में सूचीबद्ध प्रजातियों के वितरण में अशुद्धियाँ प्रतीत होती हैं, क्योंकि इसमें गलती से मध्य प्रदेश और असम जैसे क्षेत्र शामिल हैं।

पारिस्थितिक भूमिका

एच. पंक्टेटस जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र के कार्यों को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है। निचले इलाके से भोजन करने वाले के रूप में, ये मछलियाँ नदी के तल से कार्बनिक पदार्थ निकालकर जल की गुणवत्ता में योगदान करती हैं। आम तौर पर मांसाहारी, वे छोटी मछलियों, क्रस्टेशियंस और जलीय अकशेरुकी को खाती हैं, जो पापुलेशन को नियंत्रित करने में मदद करता है और कुछ प्रजातियों की पापुलेशन वृद्धि को रोकता है। यह शिकारी व्यवहार खाद्य जाल की स्थिरता, पोषक चक्रण में योगदान देता है, और अंततः जल की गुणवत्ता बनाए रखते हुए पौधों की वृद्धि का समर्थन करता है। इसके अतिरिक्त, *एच. पंक्टेटस* अपने आवास में प्रजातियों की विविधता को बढ़ावा देता है, जिससे एक अधिक संतुलित और लचीला समुदाय सुनिश्चित होता है।

संरक्षण स्थिति

प्रदूषण, आवास में बदलाव, मानवजनित हस्तक्षेप और अनियमित मछली पकड़ने के कारण एच. पंक्टेटस की पापुलेशन में लगभग 100% की गिरावट आई है, जिसके परिणामस्वरूप इसे आईयूसीएन रेड लिस्ट (Raghavan and Ali, 2011) में गंभीर रूप से संकटग्रस्त के रूप में वर्गीकृत किया गया है। तमिलनाडु और कर्नाटक में कावेरी नदी की सहायक नदियों में 14 साल के अंतराल के बाद इस प्रजाति को फिर से खोजा गया (Ali et al., 2013)। इसके बावजूद, मछुआरों से स्थानीय जानकारी और चल रहे सर्वेक्षणों से पता चलता है कि कावेरी में *एच. पंक्टेटस* की मध्यम पापुलेशन अभी भी मौजूद है, जो भविष्य में संरक्षण प्रयासों की आवश्यकता को दर्शाता है। हेमिबाग्रस प्रजातियों की रक्षा और उनकी पारिस्थितिक भूमिकाओं को संरक्षित करने के उपायों को लागू करना आवश्यक है। इन संरक्षण प्रयासों में आवास पुनर्स्थापन, सतत मछली पकड़ने की विधियाँ और प्रदूषण को नियंत्रित करने के उपाय शामिल हो सकते हैं।

एनबीएफजीआर द्वारा कार्यान्वित संरक्षण कार्यक्रम

एनबीएफजीआर द्वारा किए गए कार्य ने *एच. पंक्टेटस* के संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, जो कि 1998 से विलुप्त घोषित की गई प्रजाति है (आईसीएआर–एनबीएफजीआर, 2019)। आईसीएआर–एनबीएफजीआर, पीएजीआर केंद्र ने पहली बार कैद में सफलतापूर्वक ब्रूडस्टॉक विकास और

प्राकृतिक स्पॉनिंग को प्रेरित किया, जिसके परिणामस्वरूप नियंत्रित परिस्थितियों में F2 पीढ़ी की संतान का प्रसार हुआ। कावेरी नदी में *हेमिबाग्रस फिंगरलिंग्स* की सफल रैंचिंग भी की गयी है, जो उनके संरक्षण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। माइटोकॉन्ड्रियल जीनोम का पूरा विश्लेषण और माइटोजेनोमिक्स के माध्यम से फ़ाइलोजेनेटिक अध्ययन किया गया। स्टॉक संरचना विश्लेषण के लिए *एच. पंक्टेटस* में नए माइक्रोसैटेलाइट मार्कर सेट भी विकसित किए गए। इसके अतिरिक्त, *एच. पंक्टेटस* के नर और मादा जीव विज्ञान पर व्यापक शोध किया गया, जिसमें प्राकृतिक नमूनों की आंत सामग्री विश्लेषण और भोजन व्यवहार का आकलन शामिल था। प्रजनन ग्रंथियां की जांच की गई, और एकत्रित नमूनों के लिए वृषण और अंडाशय का ऊतकीय विश्लेषण किया गया। यौन व्यवहार, द्विरूपता, प्रजनन ऋतु और स्पॉनिंग व्यवहार पर अध्ययन भी किए गए, साथ ही अनुमानित अंडों की संख्या भी ज्ञात की गई, जिनमें से सभी भविष्य की संरक्षण रणनीतियों के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ रखते हैं।

निष्कर्ष

गंभीर रूप से लुप्तप्राय स्थानिक कैटफ़िश *हेमिबाग्रस पंक्टेटस* अपनी मूल नदी प्रणालियों में एक आवश्यक पारिस्थितिक भूमिका निभाती है, जो जैव विविधता, जल गुणवत्ता और जलीय पारिस्थितिकी प्रणालियों की स्थिरता में योगदान देती है। हालाँकि, आवास क्षरण, प्रदूषण और अत्यधिक मछली पकड़ने के कारण इसकी पापुलेशन में उल्लेखनीय गिरावट आई है, जिसके कारण इसे गंभीर रूप से लुप्तप्राय के रूप में सूचीबद्ध किया गया है। इन चुनौतियों के बावजूद, हाल ही में संरक्षण प्रयासों, विशेष रूप से आईसीएआर–एनबीएफजीआर द्वारा किए गए प्रयासों ने इस प्रजाति के पुनः जीवित होने की उम्मीद जगाई है। ब्रूडस्टॉक का सफल विकास, प्रेरित स्पॉनिंग और कैद में *एच. पंक्टेटस* संतति का प्रसार महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं। कावेरी नदी प्रणाली में फिंगरलिंग्स की पुनर्स्थापना, साथ ही प्रजातियों के जीव विज्ञान और प्रजनन व्यवहार पर व्यापक शोध, भविष्य की संरक्षण रणनीतियों के लिए एक आधार प्रदान करता है। ये प्रयास *एच. पंक्टेटस* के दीर्घकालिक अस्तित्व और पश्चिमी घाट के जलीय पारिस्थितिकी प्रणालियों के भीतर इसकी पारिस्थितिक भूमिका के संरक्षण को सुनिश्चित करने के लिए स्थायी प्रबंधन प्रथाओं, पर्यावास पुनर्स्थापन और चल रहे शोध के महत्व को रेखांकित करते हैं।

संदर्भ

Ali, A.; Dahanukar, N.; Kanagavel, A.; Phillip, S.; Raghavan, R. (2013). "Records of the endemic and threatened catfish, *Hemibagrus punctatus* from the southern Western Ghats with notes on its distribution, ecology and conservation status". Journal of Threatened Taxa. 5 (11): 4569–4578.

Ferraris, Carl J. Jr. (2007). "Checklist of catfishes, recent and fossil (Osteichthyes: Siluriformes), and catalogue of siluriform primary types" (PDF). *Zootaxa*. **1418**: 1–628.

Froese, Rainer; Pauly, Daniel (eds.). "Species in genus Hemibagrus". FishBase. February 2024 version.

Natural History Museum (2024). Natural History Museum (London) Collection Specimens. Occurrence dataset. GBIF.org on 2024.

Ng, H.H. &Kottelat, M. (2013): Revision of the Asian catfish genus *Hemibagrus Bleeker*, 1862 (Teleostei: Siluriformes: Bagridae). *The Raffles Bulletin of Zoology*, **61** (1): 205-291.

Ng, Heok Hee; Dodson, Julian J. (1999). "Morphological and Genetic Descriptions of a New Species of Catfish, *Hemibagrus chrysops*, from Sarawak, East Malaysia, with an Assessment of Phylogenetic Relationships (Teleostei: Bagridae" (PDF). *The Raffles Bulletin of Zoology*. **47** (1): 45–57.

Ng, Heok Hee; Rainboth, Walter J. (1999). "The Bagrid Catfish Genus Hemibagrus (Teleostei: Siluriformes) in Central Indochina with a New Species from the Mekong River" (PDF). *The Raffles Bulletin of Zoology.* **47** (2): 555–576.

Ng, Peter K. L.; Ng, H. H. (1995). "*Hemibagrus gracilis*, a New Species of Large Riverine Catfish (Teleostei: Bagridae) from Peninsular Malaysia" (PDF). *The Raffles Bulletin of Zoology*. **43** (1): 133–142. Archived from the original (PDF) on 2007-06-17.

Raghavan, R. & Ali, A. (2011). "*Hemibagrus punctatus*". IUCN Red List of Threatened Species. 2011: e.T172430A6890986.

Roberts, Tyler R.; Jumnongthai, Junya (1999). "Miocene fishes from Lake Phetchabun in north-central Thailand, with descriptions of new taxa of Cyprinidae, Pangasiidae, and Chandidae" (PDF). *Natural History Bulletin Siam*. **47**: 153–189.

मत्स्य पालन और जलीय कृषि में आणविक मार्करों का अनुप्रयोग

रश्मि वर्मा, अखिलेश कुमार मिश्र, बासदेव कुशवाहा, मुरली एस. एवं रविन्द्र कुमार
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

जैव प्रौद्योगिकी का बहुमुखी आयाम मत्स्य पालन और जलीय कृषि के विकास के लिए अनेकानेक संभावित अनुप्रयोग प्रदान करता है। अगामी आधुनिक पीढ़ी के जलीय कृषि की सफलता काफी हद तक जैव प्रौद्योगिकी हस्तक्षेप से प्रभावित प्रौद्योगिकी द्वारा निर्देशित होगी। जलीय कृषि के सभी चार महत्वपूर्ण स्तंभ जैसे बीज, चारा, रोग और पर्यावरण को जैव प्रौद्योगिकी अनुप्रयोगों के साथ बहुत अच्छी तरह से एकीकृत किया जा सकता है जो अंततः उत्पादन में कई गुना सुधार कर सकता है। संप्रति मत्स्य जैव प्रौद्योगिकी के विभिन्न प्रक्षेत्रों में आशातीत अनुसंधान कार्य हो रहा है जिसमे आणविक मार्कर संबंधी अनुसंधान एवं अनुप्रयोग प्रमुख है। मत्स्य पालन अनुसंधान में आणविक आनुवंशिक तकनीकों का उपयोग पिछले कई वर्षों में नाटकीय रूप से बढ़ गया है, जिसका मुख्य कारण तकनीकों की बढ़ती उपलब्धता और आनुवंशिक डेटा के महत्त्व के बारे में बढ़ती जागरूकता है। हाल के वर्षों में, जीवन विज्ञान में सबसे प्रमुख विशेषताओं में से एक आणविक जीव विज्ञान तकनीकों का तेजी से विकास है। वर्तमान में, आणविक जीव विज्ञान सिद्धांत और प्रौद्योगिकी का उपयोग व्यापक रूप से पौधों और जानवरों की प्रजातियों के सुधार व पहचान, मानव रोगों के निदान एवं उपचार तथा अन्य क्षेत्रों में किया गया है। अब आणविक जीवविज्ञान तकनीकों को जलीय क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर लागू किया जा रहा है। आणविक जीव विज्ञान जलीय कृषि प्रौद्योगिकी में समस्याओं को हल करने, नए क्षेत्रों को खोलने और उद्योग के पारंपरिक मॉडल को बदलने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। कई देशों ने जलीय कृषि से संबंधित आणविक जीव विज्ञान तकनीकों पर शोध और विकास कार्य किया है, जो नए प्रकार के अच्छे प्रजनन, उच्च उपज वाले तनाव–प्रतिरोधी किस्मों की खेती पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। आणविक जीव विज्ञान तकनीकों को जलीय क्षेत्रों में बड़ी सफलता के साथ लागू किया गया है और इसने मत्स्य प्रबंधन उपकरण के रूप में पारंपरिक तरीकों को काफी हद तक बदल दिया है तथा अभी भी जलीय कृषि प्रजातियों के सुधार और बीमारियों की रोकथाम में आणविक जीव विज्ञान तकनीकों के अनुप्रयोग में बहुत कुछ विकसित होना बाकी है। प्रस्तुत लेख का उद्देश्य इन क्षेत्रों में आणविक जीव विज्ञान और तकनीकों के अद्यतन अनुप्रयोगों को पेश करना है।

1950 के दशक में मत्स्य पालन में आणविक आनुवंशिक दृष्टिकोण का उपयोग शुरू हुआ। ये प्रारंभिक अध्ययन मुख्य रूप से ट्यूना, सैल्मोनिड्स और कॉड में रक्त समूह वेरिएंट के थे, और सफलतापूर्वक आनुवंशिक रूप से नियंत्रित भिन्नता के अस्तित्व का प्रदर्शन किया जिसका उपयोग इनकी जनसंख्या संरचना के विश्लेषण में किया जा सकता है। मत्स्य पालन और जलीय कृषि में प्रजातियों के लक्षणों के सटीक वर्णन हेतु विकसित किए गए आणविक मार्करों का अनुप्रयोग व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। इन आणविक मार्करों को टाइप I और टाइप II मार्करों के रूप में वर्णित किया जा सकता है। टाइप I मार्कर ज्ञात फ़ंक्शन के जीन से जुड़े होते हैं और टाइप II मार्कर अज्ञात फ़ंक्शन के जीन से जुड़े होते हैं। माइक्रोसैटेलाइट्स और अन्य तटस्थ मार्कर प्रकार II मार्कर हैं जब तक कि वे किसी ज्ञात फ़ंक्शन के जीन से जुड़े न हों। आणविक मार्करों के अनुप्रयोग ने मछली आनुवंशिकी के क्षेत्र में क्रांति ला दी है। प्रत्येक मामले में मार्कर प्रकार का चुनाव सावधानी से किया जाना चाहिए ताकि आउटपुट की गुणवत्ता अधिकतम हो सके। कोई भी एकल आणविक मार्कर किसी अन्य से बेहतर नहीं है और मार्करों का संयोजन ही हमेशा उपयुक्त होता है। हाल ही में, अगली पीढ़ी की अनुक्रमण तकनीकों का उपयोग करके विकसित और जांचे गए मार्करों का उपयोग मछली आनुवंशिकी में तेजी से किया जा रहा है। जलीय कृषि उत्पादों और आधुनिक आणविक तरीकों की वैश्विक मांग बढ़ रही है और आणविक आनुवंशिकी जलीय कृषि में गुणवत्ता और स्थिरता लाने में प्रमुख भूमिका निभा सकती है। कुछ प्रमुख आणविक मार्कर इस प्रकार हैं:

एलोजाइम

एलोजाइम एक एंजाइम के विभिन्न आणविक रूप हैं जो एक सामान्य जीन (लोकस) के विभिन्न एलील के अनुरूप हैं। जबकि आइसोजाइम एक एंजाइम के रूप हैं जो अलग–अलग जीन या लोसाई से एन्कोड होते हैं। एलोजाइम लोसाई का विश्लेषण मछलियों में जनसंख्या आनुवंशिकी और स्टॉक संरचना संबंधी जांच करने में सबसे

लोकप्रिय तरीकों में से एक रहा है। यह तकनीक तीव्र एवं अपेक्षाकृत सस्ती है और एक व्यापक रूपात्मक और मात्रात्मक सर्वेक्षण के बिना किसी आबादी के भीतर भिन्नता के स्तर का एक स्वतंत्र अनुमान प्रदान करती है। एलोजाइम एक एंजाइम के विभिन्न आणविक रूप हैं जो एक सामान्य जीन (लोकस) के विभिन्न एलील के अनुरूप हैं। जबकि आइसोजाइम एक एंजाइम प्रणाली के संरचनात्मक रूप से अलग आणविक रूप हैं जिनमें गुणात्मक रूप से एक ही उत्प्रेरक कार्य होता है जो एक या अधिक लोसाई द्वारा एन्कोड किया जाता है। आइसोजाइम, जो एक ही जीन लोकस के विभिन्न एलील द्वारा एन्कोड किए जाते हैं, उन्हें एलोजाइम या एलोएंजाइम कहा जाता है। एक एंजाइम के विभिन्न एलीलिक रूपों की पॉलीपेप्टाइड श्रृंखला में एमिनो एसिड अंतर अंतर्निहित डीएनए अनुक्रम में परिवर्तन को दर्शाते हैं जिसका उपयोग जीवों में परस्पर प्रजाति अथवा पापुलेशन स्तर पर आनुवंशिक भिन्नता को मापने में किया जाता है। एलोजाइम एक को–डोमिनेंट मार्कर हैं अर्थात प्रत्येक माता–पिता से एलील या वेरिएंट संतानों में देखे जा सकते हैं। वर्तमान में कई सौ आनुवंशिक लोसाई का प्रतिनिधित्व करने वाले 75 आइसोजाइम सिस्टम ज्ञात हैं।

आरएपीडी (रैंडम एम्पलीफाइड पॉलीमॉर्फिक डीएनए) मार्कर

इसमें पोलीमरेज़ चेन रिएक्शन (पीसीआर) द्वारा रैंडम डीएनए खंड प्रवर्धित होते है। इसका उपयोग आनुवंशिक संबंधों, आनुवंशिक विविधता और टैक्सोनोमिक पहचान का विश्लेषण करने के लिए किया जाता है। आरएपीडी तब उपयोगी होता है जब केवल सीमित मात्रा में डीएनए उपलब्ध होते हैं। आरएपीडी तकनीक में एक एकल कृत्रिम रूप से संश्लेषित रैंडम बहुरूपी न्यूक्लियोटाइड अनुक्रम (आमतौर पर 10 बेस जोड़े) का उपयोग प्राइमर के रूप में किया जाता है, और जीनोमिक डीएनए का उपयोग पीसीआर एंजाइमी प्रवर्धन के लिए टेम्पलेट के रूप में किया जाता है। प्राइमर जीनोमिक डीएनए की विशिष्ट साइटों से बंधते हैं। आरएपीडी मार्कर जीनोम के कम कार्यात्मक हिस्से के प्रवर्धित उत्पाद हैं, जो फेनोटाइपिक स्तर पर चयन का दृढ़ता से जवाब नहीं देते हैं। ऐसे डीएनए क्षेत्र अंतर–जनसंख्या आनुवंशिक विभेदीकरण का आकलन करने की क्षमता के साथ अधिक न्यूक्लियोटाइड उत्परिवर्तन जमा कर सकते हैं। कशेरुकी परमाणु जीनोम का लगभग 90% गैर–कोडिंग है, यह माना जाता है कि अधिकांश प्रवर्धित लोसाई सेलेक्टिवली न्यूट्रल होंगे। आरएपीडी द्वारा बड़ी संख्या में लोसाई और इंडीविजुअल्स की एक साथ जांच की जा सकती है। इस प्रकार के मार्कर में एक कमी यह है कि लोसाई की मेंडेलियन वंशागति को प्रदर्शित करने में कठिनाई और होमोज़ाइगोट्स और हेटेरोज़ायगोट्स के बीच अंतर करने में असमर्थता है। विश्लेषण इस धारणा का अनुसरण करता है कि अध्ययन के तहत आबादी हार्डी–वेनबर्ग अपेक्षाओं का पालन करती है।

एम्पलीफाईड फ्रेगमेंट लेंथ पालीमोर्फिस्म (एएफएलपी)

एएफएलपी एक पीसीआर–आधारित तकनीक है जो किसी के जीनोम के लिए यूनिक फिंगरप्रिंट बनाने और तुलना करने के लिए डीएनए टुकड़ों के एक उपसमूह के चयनात्मक प्रवर्धन का उपयोग करती है। पौधे और सूक्ष्मजीव अध्ययनों के लिए व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले, एएफएलपी को विभिन्न अनुप्रयोगों के लिए नियोजित किया जाता है, जैसेः प्रजातियों के भीतर या निकट से संबंधित प्रजातियों के बीच आनुवंशिक विविधता का आकलन करना, जनसंख्या–स्तर की फाइलोजेनी और बायोग्राफिकल पैटर्न का अनुमान लगाना, आनुवंशिक मानचित्र बनाना और किस्मों के बीच संबंध निर्धारित करना। ट्रांसक्रिप्टोमिक भिन्नता और डीएनए मिथाइलेशन बहुरूपता जैसी विविधता के अतिरिक्त स्तरों को लक्षित करने के लिए मानक एएफएलपी पद्धति के विभिन्न रूप भी विकसित किए गए हैं।

रेस्ट्रिकशन फ्रेगमेंट लेंथ पालीमोर्फिस्म (आरएफएलपी)

आरएफएलपी एक आणविक तकनीक है जो जीवों के बीच डीएनए अनुक्रमों में भिन्नता की पहचान करती है। रेस्ट्रिकशन एंजाइम प्रोटीन होते हैं जो विशिष्ट अनुक्रमों पर डीएनए को काटते हैं जिन्हें रेस्ट्रिकशन साइट कहा जाता है। डीएनए अनुक्रमों में भिन्नता के परिणामस्वरूप जब डीएनए एक रेस्ट्रिकशन एंजाइम के साथ डाइजेस्ट किया जाता है तो विभिन्न आकार के डीएनए टुकड़े प्राप्त होते हैं। जिन्हें एगरोज जेल में रन करने पर विशिष्ट बैंड पैटर्न प्राप्त होता है। आरएफएलपी का उपयोग कई अनुप्रयोगों में किया जाता है, जैसे जीनोम मैपिंग भिन्नता विश्लेषण, जीनोटाइपिंग, फोरेंसिक, पितृत्व परीक्षण, वंशानुगत रोग निदान, तथा प्रजातियों की पहचान इत्यादि।

सिंगल न्यूक्लियोटाईड पालीमोर्फिस्म (एसएनपी)

एसएनपी सामान्य रूप से किसी जीव के डीएनए में औसतन प्रत्येक 1,000 न्यूक्लियोटाइड में लगभग एक

बार होते हैं (चित्र 1)। एसएनपी के रूप में वर्गीकृत होने के लिए, एक प्रकार के एसएनपी कम से कम 1 प्रतिशत आबादी में पाया जाना आवश्यक है। वैज्ञानिकों द्वारा दुनिया भर की मानव आबादी में 600 मिलियन से अधिक एसएनपी पाए गए हैं। इसी प्रकार कुछ मत्स्य प्रजातियों में एसएनपी रिपोर्ट किए गए हैं जैसे लेबिओ रोहिता में इनकी संख्या लगभग 5 मिलियन पाई गयी है। आमतौर पर, एसएनपी जीन के बीच डीएनए में पाए जाते हैं। वे जैविक मार्कर के रूप में कार्य कर सकते हैं, जिससे वैज्ञानिकों को बीमारी से जुड़े जीन का पता लगाने में मदद मिलती है। जब एसएनपी एक जीन के भीतर या जीन के पास एक नियामक क्षेत्र में होते हैं, तो वे जीन के कार्य को प्रभावित करके रोग में अधिक प्रत्यक्ष भूमिका निभा सकते हैं।

चित्र 1. सिंगल न्यूक्लियोटाईड पालीमोर्फिस्म (एसएनपी)

एसएनपी बिंदु उत्परिवर्तन के कारण होने वाले बहुरूपता का वर्णन करता है जो एक स्थान के भीतर किसी दिए गए न्यूक्लियोटाइड स्थान पर वैकल्पिक आधारों वाले विभिन्न एलील को जन्म देता है। एसएनपी आणविक मार्कर विकास में एक केंद्र बिंदु बन रहे हैं क्योंकि वे किसी भी जीव के जीनोम (कोडिंग और गैर–कोडिंग क्षेत्रों) में सबसे प्रचुर मात्रा में बहुरूपता का प्रतिनिधित्व करते हैं, और अन्य मार्करों और विधियों से पता नहीं लग पाई छिपी हुई बहुरूपता को प्रकट करते हैं। सैद्धांतिक रूप से, एक स्थान के भीतर एक एसएनपी दो एलील तक उत्पन्न कर सकता है, जिनमें से प्रत्येक में एसएनपी साइट पर दो संभावित आधार जोड़े में से एक हो सकता है। इसलिए, एसएनपी को द्वि–एलीलिक माना जाता है। एसएनपी मार्कर की वंशागति को–डोमिनेंट मार्कर के रूप में होती हैं।

माइक्रोसेटेलाइट्स एवं शार्ट टेंडम रिपीट मार्कर

माइक्रोसैटेलाइट्स और शॉर्ट टेंडेम रिपीट (एसटीआर) एक ही चीज है, जो छोटे डीएनए अनुक्रमों के पूरे जीनोम में कई बार रिपीट होते हैं। एसटीआर डीएनए के 1–6 बेस जोड़े (बेस पेयर) की रिपीटीशन वाली इकाइयों से बने होते हैं, जिनकी श्रृंखला 100 न्यूक्लियोटाइड तक लम्बी हो सकती है। एसटीआर का उपयोग आनुवंशिकी और फोरेंसिक में आणविक मार्कर के रूप में किया जाता है। वे व्यक्तिगत स्तर पर अत्यधिक विभेदकारी हैं, जो उन्हें पहचान और रिश्तेदारी सम्बन्ध परीक्षण के लिए उपयोगी बनाते हैं। एसटीआर का उपयोग जीन डुप्लीकेशन या डिलीशन का अध्ययन करने और आनुवंशिक रूप से समान समूहों के जीवों का निर्णय करने के लिए भी किया जाता है। एसटीआर को कुछ मानव रोगों, विशेषतया न्यूरोडीजेनेरेटिव विकारों और कैंसर आदि में प्रेरक एजेंट के रूप में जाना जाता है इसलिए इस मार्कर की अत्यधिक उपयोगिता चिकित्सा विज्ञान में भी है। माइक्रोसैटेलाइट्स जिन्हें अक्सर एसएसआर (सिंपल सीक्वेन्स रिपीट्स) भी कहा जाता है अन्य आणविक मार्करों की तुलना में बहुरूपता के ऊंचे स्तर के साथ सभी जीनोम में फैले और भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं।

आणविक मार्कर का जलकृषि में अनुप्रयोग

आणविक मार्करों का मुख्य रूप से जलीय कृषि में व्यापक अनुप्रयोग है जैसे आनुवंशिक पहचान और हैचरी स्टॉक के विभेदीकरण करना, इनब्रीडिंग घटनाओं का पता लगाना, आनुवंशिक टैग का उपयोग करके माता–पिता को संतान से सम्बन्ध पता करना, मात्रात्मक विशेषता लोसाई (क्यूटीएल) का पता लगाना, चयनात्मक प्रजनन परीक्षणों के लिए मार्कर सहायता चयन और पॉलीप्लोइडी इंडक्शन और गाइनोजेनेसिस के प्रभाव का आकलन करना आदि। आणविक मार्करों का उपयोग करके स्टॉक के बीच और भीतर आनुवंशिक परिवर्तनशीलता का भी आकलन किया जा सकता है। वे सामूहिक स्पॉनिंग आयोजनों में संभावित माता–पिता के योगदान को निर्धारित करने में भी उपयोगी हैं। जीनोम मैपिंग और मात्रात्मक लक्षण लोसाई (क्यूटीएल), (व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण मात्रात्मक लक्षणों के स्थान) की पहचान भी संभव है। क्यूटीएल प्रजनन कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण हैं और लिंक किए गए मार्कर मानचित्रों के साथ फीनोटाइप का विश्लेषण कर क्यूटीएल से संबंधित मार्करों की पहचान से कुलों के बीच सम्बन्ध के बारे में जानकारी मिल सकती है और यह ज्ञान उत्पादन संबंधी लक्षणों में सुधार के लिए मार्कर–असिस्टेड कार्यक्रमों में उपयोगी है। रोग निदान एक अन्य प्रमुख क्षेत्र है जहां आणविक मार्करों के लाभों का सफलतापूर्वक उपयोग किया जा सकता है। कई नैदानिक प्रयोगशालाओं में विभिन्न रोगजनकों के लिए पीसीआर परीक्षण सस्ते, सुरक्षित और उपयोगकर्ता के अनुकूल हो गए हैं। व्हाइट स्पॉट सिंड्रोम वायरस (डब्ल्यूएसएसवी), चैनल कैटफ़िश वायरस (सीसीवी), संक्रामक हेमटोपोइएटिक नेक्रोसिस वायरस (आईएचएनवी),

संक्रामक अग्नाशय नेक्रोसिस वायरस (आईपीएनवी), वायरल हेमोरेजिक सेप्टिसीमिया वायरस (वीएचएसवी), वायरल नर्वस नेक्रोसिस वायरस (वीएनएनवी) और कई अन्य बीमारियों के रोगजनकों के लिए कई पीसीआर आधारित रोग निदान विधियां विकसित की गई हैं। ऐसे जीन जो रोगज़नक़ों के प्रति प्रतिरोधी हैं, जैसे कि मेजर हिस्टो कम्पैटिबिलिटी जीन (एमएचसी) की पहचान की जा सकती है और फिन या शेल मछलियों के रोग प्रतिरोधी उपभेदों का उत्पादन करने के लिए चयन कार्यक्रमों के लिए उपयोग किया जा सकता है।

मार्कर–असिस्टेड सिलेक्शन (एमएएस)

मार्कर–असिस्टेड सिलेक्शन (एमएएस) फसल प्रजनन में कृषि रूप से महत्वपूर्ण लक्षणों के चयन के लिए अप्रत्यक्ष चयन मानदंड के रूप में रूपात्मक, जैव रासायनिक, या डीएनए मार्करों का उपयोग करने की प्रक्रिया है। कृषि उपयोगी पादपों व जीवों के वांछित लक्षणों के चयन के लिए आणविक आनुवंशिक मार्करों की सहायता ली जाती है जिसे मार्कर–असिस्टेड सिलेक्शन (एमएएस) कहा जाता है, यह एक अप्रत्यक्ष चयन प्रक्रिया है जहाँ जैव प्रौद्योगिकी आणविक आनुवंशिक का उपयोग कर लाभदायक गुणों से सम्बंधित मार्कर (जीन) की पहचान कर जनसँख्या में जीनोटाइपिंग द्वारा उनको चयनात्मक प्रजनन प्रक्रिया में लाकर उनसे गुणवत्तायुक्त बीज उत्पादित कर समग्र उत्पादन बढ़ाने में योगदान किया जाता है। एमएएस एक बहुत लोकप्रिय तरीका बन गया है जिसमें वृद्धि एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता सम्बन्धी गुणों से युक्त प्रजातियों का विकास करना संभव हुआ है। जलीय कृषि जीनोमिक्स द्वारा अनेक गुणों से संबद्ध क्वांटिटेटिव ट्रेट लोसाई (क्यूटीएल) की पहचान की गयी है जिन्हें चनात्मक प्रजनन कार्यक्रम में व्यापक रूप से स्वीकार किया जा रहा है।

निष्कर्ष

इस प्रकार आणविक मार्करों का क्षेत्र काफी विस्तृत है जो मात्स्यिकी एवं कृषि विज्ञान में प्रजातियों द्वारा बदलती जलवायु परिस्थितियों में संरचनात्मक व व्यवहार परिवर्तनों के माध्यम से पर्यावरणीय अनुकूलन, चयनात्मक प्रजनन द्वारा उन्नतशील बीजों के उत्पादन, रोगों की पहचान व निदान, प्रजातियों की सटीक पहचान के द्वारा उनका संरक्षण प्रबंधन तथा आनुवंशिक रूप से भिन्न नवीन प्रजातियों की खोज द्वारा प्रजाति–समृधि में वृद्धि करने जैसे अति महत्त्वपूर्ण कार्यों में उपयोगी हैं, और विश्व भर का वैज्ञानिक समुदाय निरंतर नए नए आणविक मार्करों के विकास द्वारा इस क्षेत्र को और अधिक व्यापक बनाने की दिशा में तत्परता से लगा है। वर्तमान में जल कृषि अर्थात (एक्वाकल्चर) जिसमें मत्स्य किसानों द्वारा व्यापक एवं व्यावसायिक स्तर पर अपनाये जा रहे मत्स्य पालन तथा अन्य जलजीव पालन को सफल एवं लाभकारी बनाने में आणविक मार्करों का भारी योगदान होगा जिससे न केवल मत्स्य किसानों का जीवन स्तर सुधारेगा बल्कि देश की आर्थिक प्रगति में सहायता मिलेगी।

मत्स्य एवं जलीय कृषि का योगदान और सतत भविष्य के लिए एक दृष्टिकोण

वीरेंद्र कुमार, सत्यवीर, राजीव कुमार सिंह एवं उत्तम कुमार सरकार
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

परिचय

विकसित भारत–2047 वर्तमान सरकार का रोडमैप है जो उसकी आजादी के 100वें वर्ष तक एक पूरी तरह से विकसित राष्ट्र बनाने के लिए तैयार करना है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने इसके विजन के मूल उद्देश्य को सभी नागरिकों के बीच समावेशी आर्थिक भागीदारी को बढ़ावा देने में रखा है इसके तहत विभिन्न क्षेत्रों में विकास की दिशा में कई मुख्य लक्ष्य हैं, जैसे कि शिक्षा, स्वास्थ्य, अर्थव्यवस्था, जलवायु परिवर्तन, और तकनीकी उन्नति। इसके अंतर्गत सभी नागरिकों के बीच समावेशी आर्थिक भागीदारी को बढ़ावा देने का भी मकसद है विकसित भारत, प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी का विजन है न कि केवल एक नारा। और यह देश की समृद्धि के लिए एक संपूर्ण खाका प्रस्तुत करता है, यह विजन अमृत काल में भारत के लिए एक मार्गदर्शक सिद्धांत होगा। सामाजिक परिवर्तन, तकनीकी नवाचारों और आर्थिक सुधारों के संयोजन के साथ, प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी वैश्विक स्तर पर भारत की स्थिति को ऊपर उठाने की उम्मीद करते हैं। इस विजन में आर्थिक विकास से लेकर सर्व समावेशी विकास और तकनीकी नवाचार को आत्मसात करने तक कई घटक हैं। प्रधानमंत्री आवास योजना, प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना, भारतमाला, सागरमाला परियोजना और स्मार्ट सिटीज मिशन जैसी परियोजनाएं, सतत विकास शहरों के निर्माण, कनेक्टिविटी बढ़ाने और सभी को रहने योग्य किफायती आवास उपलब्ध कराने के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता को दिखाता हैं।

विकसित भारत–2047 का शुभारंभ

विकसित भारत–2047: युवाओं की आवाज का शुभारंभ 11 दिसंबर, 2023 को प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी द्वारा वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से किया गया था। इस कार्यक्रम के दौरान, प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने राजभवनों में आयोजित कार्यशालाओं में विश्वविद्यालयों के कुलपति, संस्थानों के प्रमुखों और शिक्षकों को संबोधित किया और कहा कि आज हर संस्था और हर व्यक्ति को इस संकल्प के साथ चलना चाहिए कि हर प्रयास और हर कार्य विकसित भारत के लिए होगा। उन्होंने युवाओं के विकास में शैक्षिक संस्थानों की भूमिका को बढ़ावा देने की महत्वपूर्ण भूमिका को उजागर किया और विकसित भारत–2047 के लक्ष्य को पूरा करने में युवाओं के मार्गदर्शन की जिम्मेदारी वाले सभी हितधारकों को एक साथ लाने के योगदान की सराहना की प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने आगे कहा कि आपके लक्ष्यों, आपके संकल्पों का उद्देश्य केवल विकसित भारत होना चाहिए।

विकसित भारत–2047 का प्रमुख उद्देश्य

विकसित भारत का मुख्य उद्देश्य भारत को अनुमानित 1.65 अरब जनसंख्या के लिए लगभग दो दशकों में 30 ट्रिलियन डॉलर की विकसित अर्थव्यवस्था में बदलना एवं अर्थव्यवस्था में भाग लेने में सक्षम बनाना है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जिस अर्थव्यवस्था की कल्पना करते हैं, वह मजबूत, समावेशी और नौकरी और उद्यमशीलता के अवसरों से भरपूर है। इसमें निवेश को प्रोत्साहित करने, आर्थिक विकास को आगे बढ़ाने और विभिन्न उद्योगों में नवाचार को बढ़ावा देने के लिए नीतियों को लागू करना शामिल है। व्यापार विस्तार और रोजगार सृजन के लिए अनुकूल माहौल बनाने के लिए सरकार का समर्पण मेड इन इंडिया, डिजिटल इंडिया और स्टार्टअप इंडिया जैसे कार्यक्रमों पर ध्यान केंद्रित करके प्रदर्शित होता है। डिजिटलीकरण, घरेलू विनिर्माण और एक संपन्न स्टार्टअप समुदाय के समर्थन से, प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी को उम्मीद है कि वे लाखों लोगों को गरीबी से बाहर निकालेंगे और देश की पूरी आर्थिक क्षमता का उपयोग करेंगे। विकसित भारत के दृष्टिकोण का एक अन्य महत्वपूर्ण घटक सतत विकास को बढ़ावा देने और सभी के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए विश्व स्तरीय बुनियादी ढांचे का विकास करना है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी का विकसित भारत का विजन भारत की पूरी क्षमता को प्राप्त करने और देश को अभूतपूर्व विकास और समृद्धि की ओर ले जाने की महत्वाकांक्षी और अभूतपूर्व योजना पर आधारित है। एक अधिक लचीला और समावेशी समाज स्थापित करना, जहाँ जनभागीदारी राष्ट्र की सफलता की

कहानी का आधार हो। इसके अलावा, सरकार बुनियादी ढाँचे के विकास, सामाजिक कल्याण, आर्थिक सशक्तिकरण और पर्यावरणीय स्थिरता पर ध्यान केंद्रित करती है।

विकसित भारत–2047 के लिए अंतरिम बजट 2024

अंतरिम बजट 2024 पेश करते हुए केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने 1 फरवरी, 2024 को 'विकसित भारत' का उल्लेख किया था। सीतारमण ने 1 फरवरी 2024 को अंतरिम बजट पेश करते हुए कहा कि 'विकसित भारत' के लिए सरकार का विजन "प्रकृति के साथ सामंजस्य, आधुनिक बुनियादी ढांचे के साथ एक समृद्ध भारत और सभी नागरिकों और सभी क्षेत्रों को अपनी क्षमता तक पहुंचने के अवसर प्रदान करना" है।

भारत का मत्स्य पालन और जलीय कृषि क्षेत्र

मत्स्य पालन और जलीय कृषि प्राथमिक स्तर पर लगभग 28 मिलियन मछुआरों और मछली किसानों के लिए भोजन, पोषण, आय और आजीविका का एक महत्वपूर्ण स्रोत बना हुआ है और मूल्य श्रृंखला के साथ लगभग दोगुनी संख्या है। मछली जीव प्रोटीन का एक किफायती और अच्छा स्रोत है, जो देश में भूख और कुपोषण को कम करने का एक अच्छा विकल्प है। भारतीय मत्स्य पालन क्षेत्र पिछले कुछ वर्षों में धीरे–धीरे विकसित हुआ और राष्ट्र के लिए एक महत्वपूर्ण सामाजिक–आर्थिक विशेषता बन गया। भारत दुनिया में तीसरा सबसे बड़ा मछली उत्पादक और जलीय कृषि उत्पादन में चीन के बाद दूसरे स्थान पर है और कुल ताजे जल के मछली उत्पादन का लगभग 16 प्रतिशत और कुल वैश्विक समुद्री मछली उत्पादन का 5 प्रतिशत हिस्सा है।

भारत में मछली उत्पादन वित्त वर्ष 2022–23 के दौरान 175.45 लाख टन के सर्वकालिक उच्च स्तर पर पहुंच गया है, जिसमें 44.32 लाख टन समुद्री और ताजे जल से 131.13 लाख टन उत्पादन शामिल है। आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक जैसे राज्य/केंद्र शासित प्रदेश 2022–23 के दौरान भारत में तीन प्रमुख मछली उत्पादक राज्य बन गए हैं। मछली को पकड़ने के बाद उनकी खपत में अनेक प्रकार की गतिविधियां शामिल हैं जैसे कि ताजी मछलियों को बेचना, बर्फ में लगाकर एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाकर बेचना, विभिन्न प्रकार के मछली से उत्पाद तैयार करना और सुखाकर अचार के रूप में आदि। ताजा मछली को बाजार में ले जाकर बेचना सबसे अधिक प्रचलित गतिविधि है। भारत 2013–2023 के दौरान मछली पकड़ने के सम्बंध में लगातार वृद्धि कर रहा है। वर्ष 2022–23 में आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल और कर्नाटक में मछली पकड़ने की उत्पादकता सबसे अधिक है।

भारत दुनिया के शीर्ष 5 मछली निर्यातक देशों में से एक है, जो चीन और इंडोनेशिया से तीसरे स्थान पर है। भारतीय अर्थव्यवस्था में मत्स्य पालन क्षेत्र का लगभग 1.1 प्रतिशत योगदान है और कृषि का लगभग 6.72 प्रतिशत योगदान है। 2022–23 में, देश ने 8.09 बिलियन अमेरिकी डॉलर मूल्य के 1.73 मिलियन मीट्रिक टन समुद्री खाद्य का निर्यात किया, जो मूल्य के हिसाब से अब तक का सबसे अधिक निर्यात है।

भारत के मत्स्य पालन और जल कृषि के लिए संसाधन

अगर हम भारत के समुद्री जलस्रोतों की बात करें तो 8129 किलोमीटर लम्बी समुद्री तट रेखा, 2.02 मिलियन वर्ग किलोमीटर विशेष आर्थिक क्षेत्र और 0.53 मिलियन वर्ग किलोमीटर महाद्वीपीय जलसीमा है। ताजे जल के जलस्रोत के रूप में 339045.37 किलोमीटर नदी और नहरें, 1922.76 हेक्टेयर रेसवे, छोटे आकार के 650600.38 हेक्टेयर जलाशय, मध्यम और बड़े आकार के 2110563.42 हेक्टेयर जलाशय, टैंक और तालाब 2757621.34 हेक्टेयर, खारा पानी 606976.76 हेक्टेयर और बील्स और ऑक्सबो झील 1445796.91 हेक्टेयर है।

मत्स्य पालन और जल कृषि क्षेत्र का महत्व

मत्स्य पालन क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह राष्ट्रीय आय, निर्यात, खाद्य और पोषण सुरक्षा के साथ–साथ रोजगार सृजन में भी योगदान देता है। मत्स्य पालन क्षेत्र को 'सूर्योदय क्षेत्र' के रूप में मान्यता प्राप्त है और यह भारत में लगभग 30 मिलियन लोगों की विशेष रूप से हाशिए पर पड़े और कमजोर समुदायों के लोगों की आजीविका को बनाए रखने में सहायक है। वित्त वर्ष 2022–23 में 175.45 लाख टन के रिकॉर्ड मछली उत्पादन के साथ, भारत दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा मछली उत्पादक देश है, जो वैश्विक उत्पादन का 8 प्रतिशत हिस्सा है और देश के सकल मूल्य वर्धित में लगभग 1.09 प्रतिशत और कृषि सकल मूल्य वर्धित में 6.724 प्रतिशत से अधिक का योगदान देता है। इस क्षेत्र में विकास की अपार संभावनाएं हैं, इसलिए टिकाऊ, जिम्मेदार, समावेशी और न्यायसंगत विकास के लिए नीति और वित्तीय सहायता के माध्यम से इस पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के 17 सतत विकास लक्ष्य 2030 में से सतत विकास लक्ष्य 1 (निर्धनता मिटाना), 2 (शून्य भुखमरी),

3 (अच्छा स्वास्थ्य और खुशहाली), 5 (लैंगिक समानता), 12 (जिम्मेदारी के साथ उपभोग और उत्पादन) और 14 (पानी के नीचे जीवन) को हासिल करने में मदद करता है जो कि देश को विकसित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आद्रभूमि, झीले, नदियाँ और महासागर जलवायु परिवर्तन (सतत विकास लक्ष्य 13) में मुख्य भूमिका निभाते हैं।

मत्स्य पालन और जलीय कृषि की प्रमुख परियोजनाये जो विकसित भारत में सहायक हो सकती है।

1. सागरमाला परियोजना

सागरमाला कार्यक्रम, देश के बंदरगाह, नौवहन और जलमार्ग मंत्रालय की प्रमुख पहल समुद्री क्षेत्र को बदलने के लिए भारत सरकार द्वारा एक दूरदर्शी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है। भारत की विस्तृत तटरेखा, नौगम्य जलमार्ग और रणनीतिक समुद्री व्यापार मार्गों के साथ, सागरमाला का उद्देश्य बंदरगाह आधारित विकास और तटीय समुदाय के उत्थान के लिए इन संसाधनों की अप्रयुक्त क्षमता को खोलना है। भारत में समुद्री क्षेत्र देश के व्यापार की रीढ़ रहा है और पिछले कुछ वर्षों में इसमें कई गुना वृद्धि हुई है। भारत की 8118 किलोमीटर लंबी तटरेखा, 14,500 किलोमीटर संभावित नौगम्य जलमार्ग और प्रमुख अंतरराष्ट्रीय समुद्री व्यापार मार्गों पर रणनीतिक स्थान का लाभ उठाने के लिए, भारत सरकार ने महत्वाकांक्षी सागरमाला कार्यक्रम शुरू किया है जिसका उद्देश्य देश में बंदरगाह आधारित विकास को बढ़ावा देना है। सागरमाला की अवधारणा को 25 मार्च 2015 को केंद्रीय मंत्रिमंडल द्व ारा अनुमोदित किया गया था। कार्यक्रम के हिस्से के रूप में, भारत के तटरेखा और समुद्री क्षेत्र के व्यापक विकास के लिए एक राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य योजना (एनपीपी) तैयार की गई है जिसे माननीय प्रधानमंत्री द्वारा 14 अप्रैल, 2016 को मैरीटाइम इंडिया समिट 2016 में जारी किया गया था।

2. प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना

मत्स्य पालन, पशुपालन और डेयरी मंत्रालय के मत्स्य पालन विभाग ने 2020–21 के दौरान सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में पांच वर्षों की अवधि यानी 2020–21 से 2024–25 के दौरान कार्यान्वयन के लिए मत्स्य पालन क्षेत्र में 20050 करोड़ रुपये के अब तक के उच्चतम निवेश के साथ एक प्रमुख योजना "प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना शुरू की है। पीएमएमएसवाई का उद्देश्य मछली उत्पादन, उत्पादकता, गुणवत्ता, प्रौद्योगिकी, कटाई के बाद के बुनियादी ढांचे और प्रबंधन, मूल्य श्रृंखला के आधुनिकीकरण और सुदृढ़ीकरण, कटाई के बाद के नुकसानों में कमी, पता लगाने आदि में महत्वपूर्ण अंतराल को दूर करना है। मत्स्य पालन क्षेत्र की वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाने के लिए, पीएमएमएसवाई गुणवत्ता वाले मछली उत्पादन, प्रजातियों के विविधीकरण, निर्यात–उन्मुख प्रजातियों को बढ़ावा देने, ब्रांडिंग, मानकों और प्रमाणन, प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण, निर्बाध कोल्ड चेन पर जोर देने के साथ कटाई के बाद के बुनियादी ढांचे का निर्माण और आधुनिक मछली पकड़ने के बंदरगाहों और मछली लैंडिंग केंद्रों का विकास आदि का समर्थन करता है। इसके अलावा, मत्स्य पालन और जलीय कृषि क्षेत्र की महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचे की आवश्यकता को पूरा करने के लिए, मत्स्य पालन विभाग, भारत सरकार ने 2018–19 के दौरान राज्यों/केंद्रशासित प्रदेश और निजी क्षेत्र को रियायती वित्त प्रदान करने के लिए 7522.48 करोड़ रुपये के कुल फंड आकार के साथ मत्स्य पालन और जलीय कृषि बुनियादी ढांचा विकास निधि (एफआईडीएफ) बनाया है। पीएमएमएसवाई का उद्देश्य मछली उत्पादन, उत्पादकता, गुणवत्ता, प्रौद्योगिकी, मछली पकडने के बाद के बुनियादी ढांचे और प्रबंधन में महत्वपूर्ण अंतराल को दूर करना है।

3. मत्स्य पालन और जलीय कृषि बुनियादी ढांचा विकास निधि (एफआईडीएफ)

मत्स्य पालन क्षेत्र के लिए बुनियादी ढांचे की आवश्यकता को पूरा करने के लिए, भारत सरकार के मत्स्य पालन विभाग ने 2018–19 के दौरान मत्स्य पालन और जलीय कृषि बुनियादी ढांचा विकास निधि (एफआईडीएफ) नामक समर्पित निधि बनाई, जिसका कुल निधि आकार 7,522.48 करोड़ रुपये है। एफआईडीएफ नोडल ऋण देने वाली संस्थाओं अर्थात् राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड), राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एनसीडीसी) और सभी अनुसूचित बैंकों के माध्यम से पहचान की गई। मत्स्य पालन बुनियादी ढांचे की सुविधाओं के विकास के लिए राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों और राज्य संस्थाओं सहित पात्र संस्थाओं को रियायती वित्त प्रदान करता है। एफआईडीएफ के तहत, मत्स्य पालन विभाग नोडल ऋण देने वाली संस्थाओं द्वारा रियायती वित्त प्रदान करने के लिए 5 प्रतिशत प्रति वर्ष से कम ब्याज दर पर 3 प्रतिशत प्रति वर्ष तक ब्याज सहायता प्रदान करता है। एफआईडीएफ के तहत ऋण देने की अवधि 2018–19 से 2022–23 तक पांच वर्ष है और मूलधन के पुनर्भुगतान पर 2 वर्ष की मोहलत सहित अधिकतम पुनर्भुगतान अवधि 12 वर्ष है। 3738.19 करोड़ रुपये के ब्याज अनुदान के लिए प्रतिबंधित

परियोजना लागत के साथ 5588.63 करोड़ रुपये के 121 प्रस्तावों की सिफारिश विभिन्न राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों को की गई है, जिसमें निजी लाभार्थियों के प्रस्ताव भी शामिल हैं। ये प्रस्ताव कुल 18 राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों अर्थात् आंध्र प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, असम, गोवा, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, मणिपुर, मिजोरम, ओडिशा, तमिलनाडु, तेलंगाना, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल से प्राप्त हुए हैं।

4. किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी)

किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) योजना को भारत सरकार द्वारा 2018–19 में मत्स्य पालन और पशुपालन किसानों के लिए विस्तारित किया गया था ताकि उन्हें अपनी कार्यशील पूंजी आवश्यकताओं को पूरा करने में मदद मिल सके। भारतीय रिजर्व बैंक ने 4 फरवरी 2019 को मछुआरों और मछली किसानों को केसीसी पर दिशानिर्देश जारी किए। इसके बाद, पशुपालन और मत्स्य पालन किसानों को केसीसी के माध्यम से ऋण वितरण की प्रक्रिया को कारगर बनाने के लिए, पशुपालन, डेयरी और मत्स्यपालन मंत्रालय, आरबीआई, राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) और भारतीय बैंक संघ सहित हितधारकों के परामर्श से एक मानक संचालन प्रक्रिया/दिशानिर्देश जारी किए गए। कृषि और ग्रामीण विकास विभाग द्वारा 1 जून से 31 दिसंबर 2020 तक केसीसी आवेदन जुटाने के लिए एक विशेष अभियान चलाया गया। इसके बाद 15 नवंबर 2021 से 31 जुलाई 2022 तक पशुपालन, डेयरी और मत्स्य पालन मंत्री के नेतृत्व में एक राष्ट्रव्यापी अभियान शुरू किया गया था। "राष्ट्रव्यापी अभियान" 15 सितंबर 2022 से 15 मार्च 2023 तक फिर से शुरू किया गया और अब 1 मई 2023 से 31 मार्च 2024 तक जारी रहा। तटीय जिलों में सागर परिक्रमा कार्यक्रम के दौरान विशेष अभियान भी आयोजित किए गए। इसके अतिरिक्त, पूरे भारत में विकसित भारत संकल्प यात्रा के तहत किसान ऋण पोर्टल पर प्रगति की निगरानी की जा रही है। इन निरंतर प्रयासों के माध्यम से कुल 3,24,404 आवेदन प्राप्त हुए हैं, जिनमें से 1,70,647 जारी किए जा चुके हैं।

5. तमिलनाडु में समुद्री शैवाल पार्क की घोषणा (2022–23)

प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना के तहत 127. 71 करोड़ रुपये के कुल निवेश के साथ तमिलनाडु में बहुउद्देशीय समुद्री शैवाल पार्क की स्थापना पर विस्तृत परियोजना रिपोर्ट (डीपीआर) को मंजूरी दे दी गई है। इस परियोजना की योजना हब और स्पोक मॉडल में बनाई गई है, जिसका उद्देश्य समुद्री शैवाल किसानों को उच्च गुणवत्ता वाली समुद्री शैवाल रोपण सामग्री की आपूर्ति करना, नई उत्पाद लाइनें विकसित करने के लिए उत्पाद नवाचार प्रयोगशाला, पानी और समुद्री शैवाल उत्पादों की गुणवत्ता परीक्षण के लिए परीक्षण सुविधा, साथ ही उद्यमियों और प्रसंस्करणकर्ताओं के लिए एकल खिड़की समर्थन प्रदान करना है।

6. आर्थिक गतिविधियों के केंद्र के रूप में 5 प्रमुख मछली पकड़ने के बंदरगाहों के विकास की घोषणा (2021–22)

वित्त वर्ष 2021–22 में केंद्रीय बजट घोषणा के अनुसार, 5 प्रमुख मछली पकड़ने के बंदरगाहों चेन्नई (तमिलनाडु), कोच्चि (केरल), पारादीप (उडीसा), पेटुआघाट (पश्चिम बंगाल), और विशाखापत्तनम (आंध्र प्रदेश) का विकास 518.68 करोड़ रुपये की कुल लागत से किया जा रहा है, जिसमें केंद्र का हिस्सा 199.75 करोड़ रुपये है।

7. प्रधानमंत्री मत्स्य किसान समृद्धि सह–योजना (पीएम–एमकेएसएसवाई, 2023–24) नामक नई उप–योजना की घोषणा

प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना के अंतर्गत 6,000 करोड़ रुपये के लक्षित निवेश के साथ केंद्रीय क्षेत्र की उप–योजना शुरू की गई है, ताकि मछुआरों, मछली विक्रेताओं और सूक्ष्म एवं लघु उद्यमों के लिए गतिविधियों को और अधिक सक्षम बनाया जा सके। प्रधानमंत्री मत्स्य किसान समृद्धि सह–योजना में असंगठित मत्स्य पालन क्षेत्र के क्रमिक औपचारिकीकरण पर ध्यान केंद्रित करने की परिकल्पना की गई है, जिसमें डिजिटल समावेशन, संस्थागत वित्तपोषण विशेष रूप से कार्यशील पूंजी तक पहुंच को सुगम बनाना, जलीय कृषि बीमा चुनने के लिए लाभार्थियों को एकमुश्त प्रोत्साहन प्रदान करना, मत्स्य पालन क्षेत्र की मूल्य–श्रृंखला दक्षताओं के लिए मत्स्य पालन और जलीय कृषि सूक्ष्म उद्यमों को प्रोत्साहित करना, उपभोक्ताओं को सुरक्षित मछली उत्पादों की आपूर्ति श्रृंखलाओं की स्थापना के लिए सूक्ष्म और लघु उद्यमों को प्रोत्साहित करना, मत्स्य पालन क्षेत्र में महिलाओं के लिए नौकरियों के सृजन और रखरखाव के लिए आवेदकों को अतिरिक्त प्रोत्साहन आदि शामिल हैं।

8. मत्स्य पालन और जलकृषि क्षेत्र विकसित भारत के निर्माण में कैसे सहायक हो सकता है ?

भारत में मत्स्य पालन क्षेत्र में विविध प्रकार की गतिविधियाँ शामिल हैं, जिनमें समुद्री, अंतर्देशीय और जलीय कृषि मछली पकड़ना शामिल है, जो देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह तटीय और ग्रामीण समुदायों में खाद्य सुरक्षा प्रदान करने, रोजगार पैदा करने और आजीविका का समर्थन करने में महत्वपूर्ण है। मत्स्य पालन और जलीय कृषि भारत में खाद्य उत्पादन, पोषण सुरक्षा, रोजगार और आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। मत्स्य पालन क्षेत्र 20 मिलियन से अधिक मछुआरों और मछली किसानों के लिए आजीविका का प्रत्यक्ष स्रोत है, भारत की अर्थव्यवस्था में सकल मूल्य वर्धन में सालाना 1.75 लाख करोड़ रुपये का योगदान देता है और यह एक प्रमुख निर्यात आय स्रोत है, जिसमें मछली भारत से निर्यात की जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण कृषि वस्तुओं में से एक है।

मत्स्य उद्योग के सामाजिक व आर्थिक प्रभाव

- मत्स्य आर्थिकी से मत्स्य उद्योग समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन की असीम संभावनाएं हैं।
- मत्स्य आर्थिकी से जहां मत्स्य व्यापार में लगे लोगों का आर्थिक स्तर सुधरा है वहीं इस वर्ग के लोगों को समाज में प्रतिष्ठित स्थान बनाने का सुअवसर भी प्राप्त हुआ है।
- ग्रामीण क्षेत्र के मत्स्य कृषकों ने विभिन्न माध्यमों से मत्स्य उद्योग में संलग्न होकर जहां अपना आर्थिक स्तर सुधारा है वहीं दूसरी ओर बाहरी परिवेश में रहकर समाज में फैली कुरीतियों को नष्ट कर अपने सामाजिक स्तर में काफी सुधार किया है।
- वर्तमान परिवेश में महिलाओं की भागीदारी ने समाज में कुंठित जीवन जीने से बाहर निकलकर उच्च सामाजिक जीवन जीने में काफी सराहनीय प्रगति की है।
- महिलाओं द्वारा स्वयं सहायता समूहों का गठन कर विभिन्न रोजगार अपनाकर एक–दूसरे के सहयोग से कार्य कर अपना आर्थिक स्तर तो सुधारा ही है तथा समाज को एक सूत्र में बांधने में काफी सफलता हासिल की है।
- पूर्व के दशकों में इन परिवारों की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी तथा समाज के बंधनों के कारण घर की चारदीवारी से निकलना नामुमकिन था। परन्तु वर्तमान परिवेश में सामाजिक बंधनों को अनदेखा करते हुए अपने आर्थिक एवं सामाजिक स्तर को सुधारने के लिए सराहनीय कदम उठाए हैं।
- आज उद्यमी पुरुष एवं महिलाओं का समाज में उत्कृष्ट स्थान है। इनके द्वारा अपने बच्चों को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में लाकर उनके भविष्य को संवारने एवं उच्च स्थान दिलाने के लिए एक सराहनीय कदम है। शिक्षा को समाज का एक मुख्य अंग बनाया गया है क्योंकि शिक्षित समाज ही एक उन्नत समाज बना सकता है तथा शिक्षित व्यक्ति ही अपने घर तथा समाज के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।
- यह उद्योग रोजगार तथा खाद्य समस्या के समाधान में सहायक है। श्रम प्रधान उद्योग होने के कारण बड़ी संख्या में समाज के गरीब वर्गों को लाभदायक रोजगार प्रदान होता है जिससे इनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है। मत्स्य उद्योग के साथ–साथ कृषि व्यवसाय एवं अन्य व्यवसाय में जुड़े होने के कारण मछुआरों की प्रति व्यक्ति आय एवं कुल आय में भी वृद्धि होती है। मत्स्य उद्योग का सबसे बड़ा लाभ औषधियों के महत्व के रूप में है। इसका उपयोग अनेक दवाईयों के बनाने में किया जाता है। साथ ही मत्स्य में निहित प्रोटीन स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभदायक होता है। मत्स्य जल शुद्धिकरण जल आपूर्ति में वृद्धि के लिए सहायक है। हमारे देश में भू–क्षेत्रफल का एक बड़ा हिस्सा ऐसा है जो नदियों, समुद्र व अन्य जल स्रोतों से ढका हुआ है और फसलोत्पादन के लिए उपलब्ध नहीं है, वहां मत्स्य पालन को बढ़ावा देकर अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है। इस उद्योग के माध्यम से अन्य सहायक उद्योग को विकसित करके लाभ प्राप्त किया जा सकता है। यह उद्योग विदेशी मुद्रा अर्जित करने का प्रमुख साधन है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष के तौर पर, 2047 तक, विकसित भारत में मत्स्य पालन और जलीय कृषि क्षेत्र अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण स्तंभ बन जाएंगे, जो सकल घरेलू उत्पाद, रोजगार और खाद्य सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान देंगे। संधारणीय प्रथाओं और उन्नत प्रौद्योगिकियों को अपनाने के माध्यम से, ये क्षेत्र पर्यावरण संरक्षण सुनिश्चित करते हुए उत्पादकता बढ़ा सकते हैं। समुदायों, विशेष रूप से महिलाओं का सशक्तिकरण, सामाजिक समानता को बढ़ावा देगा और आजीविका में सुधार करेगा। कुल मिलाकर, मत्स्य पालन और जलीय कृषि का विकास न केवल वैश्विक बाजारों में भारत की स्थिति को मजबूत करेगा, बल्कि आर्थिक समृद्धि

और पर्यावरण संरक्षण के लिए एक संतुलित दृष्टिकोण को बढ़ावा देते हुए संधारणीय विकास के लिए एक मॉडल के रूप में भी काम करेगा।

संदर्भ

Department of Fisheries, 2023. Year End Review 2023: Department of Fisheries (Ministry of Fisheries, Animal Husbandry and Dairying). Available at: Press Release: Press Information Bureau (pib.gov.in)

Handbook of Fisheries Statistics 2023. Department of Fisheries, Ministry of Fisheries, Animal Husbandry and Dairying, Government of India. Available at: Handbook Fisheries Statistics 19012023 | PDF (scribd.com)

Ministry of Fisheries, Animal Husbandry & Dairying, 2023. Fisheries sector plays a significant role in Indian economy. Available at: Press Release: Press Information Bureau (pib.gov.in)

Ministry of Ports, Shipping and Waterways, 2024. Sagarmala. Available at: SAGARMALA | Ministry of Ports,Shipping and Waterways (shipmin.gov.in)

तीस्ता नदी में आई बाढ़ का मछलियों पर प्रभाव

अमित सिंह बिष्ट, रजनी चंद्रन, कांताराजन जी., ललित कुमार त्यागी एवं उत्तम कुमार सरकार

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

तीस्ता नदी पूर्वोत्तर भारत और बांग्लादेश की एक प्रमुख नदी है, जो प्राकृतिक संसाधनों, सांस्कृतिक धरोहर और पारिस्थितिकी के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है। यह नदी भारत के सिक्किम राज्य से निकलती है और पश्चिम बंगाल से होते हुए बांग्लादेश में प्रवेश करती है। तीस्ता नदी जलवायु, वनस्पति और जनजीवन पर गहरा प्रभाव डालती है। तीस्ता नदी का उद्गम सिक्किम राज्य के उत्तरी भाग में हिमालय पर्वतमाला में स्थित है। यह नदी त्सोंगमो झील और लाचेन से होकर बहती है और दार्जिलिंग जिले के विभिन्न हिस्सों से गुजरते हुए दक्षिण दिशा की ओर बढ़ती है। इसके बाद यह पश्चिम बंगाल के मैदानों में प्रवेश करती है और बांग्लादेश में ब्रह्मपुत्र नदी से मिलती है। कुल मिलाकर, तीस्ता नदी की लंबाई लगभग 315 किलोमीटर है। इसका जल संग्रहण क्षेत्र विविध है, जिसमें पहाड़ी इलाकों से लेकर मैदानी भाग तक का समावेश है। सिक्किम और दार्जिलिंग क्षेत्र में बहती हुई यह नदी अपने साथ बर्फ और पहाड़ी पानी का मिश्रण लेकर चलती है, जो इसे खास बनाता है। तीस्ता नदी की घाटी और जलग्रहण क्षेत्र अत्यधिक उपजाऊ हैं, जिससे कृषि और अन्य गतिविधियों को बढ़ावा मिलता है।

तीस्ता नदी

तीस्ता नदी का पारिस्थितिकी तंत्र

तीस्ता नदी का पारिस्थितिकी तंत्र विविधता और समृद्धता से भरा हुआ है। यह क्षेत्र अनेक प्रकार की वनस्पतियों और जीवों के लिए आवास प्रदान करता है। सिक्किम और दार्जिलिंग के जंगलों में बांस, फर, चीड़ आदि के पेड़ और कई तरह के फूलों की प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इसके साथ ही यह क्षेत्र बाघ, हिम तेंदुआ, लाल पांडा, और विभिन्न प्रकार के पक्षियों का घर है। पश्चिम बंगाल के मैदानी भाग में प्रवेश करने के बाद, तीस्ता नदी का बहाव धीमा हो जाता है और यहाँ यह मछलियों, कछुओं, और अन्य जलीय जीवों की कई प्रजातियों के लिए एक महत्वपूर्ण आवास बन जाती है। तीस्ता नदी की घाटी अनेक प्रकार की जैव विविधताओं का समर्थन करती है और यह पारिस्थितिकी संतुलन बनाए रखने में अहम भूमिका निभाती है।

आर्थिक महत्त्व

तीस्ता नदी सिक्किम, पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश की अर्थव्यवस्था में अहम भूमिका निभाती है। इसका जल कृषि, मछलीपालन, जलविद्युत उत्पादन और औद्योगिक गतिविधियों के लिए अत्यंत उपयोगी है।

सिक्किम राज्य में मत्स्य क्षेत्र से जुड़े स्थानीय लोग

कृषि: तीस्ता नदी के मैदानों की उपजाऊ भूमि में चावल, जूट, गन्ना, मक्का और अन्य फसलों की खेती होती है। इस नदी का पानी सिंचाई के लिए प्रमुख स्रोत है, खासकर पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश के क्षेत्रों में, जहाँ यह खाद्यान्न उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है।

जलविद्युत उत्पादन: सिक्किम और पश्चिम बंगाल के पर्वतीय क्षेत्र जलविद्युत उत्पादन के लिए अनुकूल हैं। तीस्ता नदी पर बने जलविद्युत परियोजनाएँ जैसे तीस्ता चरण 5 और चरण 6, जलविद्युत उत्पादन में अहम योगदान देती हैं। ये परियोजनाएँ बिजली की बढ़ती मांग को पूरा करने में सहायक हैं और स्थानीय अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करती हैं।

मछलीपालन: तीस्ता नदी मछलीपालन के लिए एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है, जहाँ विभिन्न प्रकार की मछलियाँ पाई जाती हैं। पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश में लोग मछलीपालन को आजीविका का साधन बनाते हैं। यह नदी मछली पकड़ने के व्यवसाय को बढ़ावा देती है और स्थानीय बाजारों में मछलियों की आपूर्ति करती है।

तीस्ता जल विवाद

तीस्ता नदी पर जल वितरण को लेकर भारत और बांग्लादेश के बीच लंबे समय से विवाद चला आ रहा है। यह विवाद मुख्य रूप से दोनों देशों की जल की आवश्यकताओं और उसके सही बंटवारे से संबंधित है। भारत का पश्चिम बंगाल और सिक्किम राज्य इस जल का उपयोग सिंचाई, पेयजल और जलविद्युत उत्पादन के लिए करता है, जबकि बांग्लादेश को इस नदी से जल की आपूर्ति धान की फसल और अन्य कृषि कार्यों के लिए जरूरी है।

जल वितरण का मुद्दा: भारत और बांग्लादेश के बीच जल वितरण के मसले पर 1983 में एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए थे, परंतु यह समझौता अस्थायी साबित हुआ। दोनों देशों के बीच पानी की मात्रा के बंटवारे को लेकर बार-बार बातचीत हुई, लेकिन अब तक स्थायी समाधान नहीं निकल पाया है। भारत, विशेष रूप से पश्चिम बंगाल राज्य, में इस पानी का महत्वपूर्ण हिस्सा उपयोग में लाने की योजना रही है, जबकि बांग्लादेश में शुष्क मौसम के दौरान इस पानी की बेहद आवश्यकता होती है।

हाल की प्रगति: भारत और बांग्लादेश के बीच कई उच्च स्तरीय बैठकें और वार्ता हुई हैं, लेकिन तीस्ता जल बंटवारा विवाद पर कोई अंतिम समझौता नहीं हो पाया है। हालांकि दोनों देशों के बीच राजनयिक संबंध मजबूत हैं, फिर भी इस विवाद को सुलझाने में और समय लग सकता है।

तीस्ता नदी का सांस्कृतिक महत्व

तीस्ता नदी केवल एक जलस्रोत नहीं है, बल्कि यह सिक्किम, पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश के लोगों के लिए एक सांस्कृतिक धरोहर भी है। इस नदी के किनारे बसे गांवों में कई पर्व-त्योहार और मेले आयोजित होते हैं। तीस्ता नदी घाटी में बसने वाले लोगों की आजीविका भी नदी से जुड़ी हुई है, और उनकी परंपराएं, रीति-रिवाज और सांस्कृतिक गतिविधियाँ भी इस नदी से प्रभावित होती हैं।

लोककथाएं और मान्यताएं: तीस्ता नदी से जुड़ी कई लोककथाएं और मान्यताएं प्रचलित हैं। सिक्किम और पश्चिम बंगाल में यह नदी धार्मिक और सांस्कृतिक महत्त्व रखती है, जहाँ इसके जल को पवित्र माना जाता है। यहां के लोगों का मानना है कि तीस्ता के जल में स्नान करने से सारे पाप धुल जाते हैं और यह नदी उनके लिए आस्था का प्रतीक है।

पारिस्थितिकी पर चुनौतियाँ और संरक्षण की आवश्यकता

पिछले कुछ दशकों में तीस्ता नदी पर बढ़ते मानवीय दबाव और जलवायु परिवर्तन के कारण इसके पारिस्थितिकी तंत्र पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। जलवायु परिवर्तन की वजह से जल की मात्रा में उतार-चढ़ाव देखा गया है, जो कृषि और जलविद्युत उत्पादन के लिए चुनौतीपूर्ण है। इसके अलावा, अतिक्रमण, प्रदूषण, और जलविद्युत परियोजनाओं के निर्माण से नदी के पारिस्थितिकी पर भी खतरा पैदा हुआ है।

संरक्षण की दिशा में प्रयास: तीस्ता नदी के संरक्षण के लिए सरकार और गैर-सरकारी संगठन प्रयासरत हैं। जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए, पेड़ों के रोपण और जैव विविधता की सुरक्षा की दिशा में कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। इसके अलावा, सरकार ने नदी को स्वच्छ रखने और उसके जल को प्रदूषण से बचाने के लिए कई कदम उठाए हैं।

तीस्ता नदी भारत और बांग्लादेश दोनों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह न केवल जल संसाधन के रूप में काम करती है बल्कि दोनों देशों की अर्थव्यवस्था, संस्कृति और पारिस्थितिकी के लिए भी अत्यधिक मूल्यवान है। हालांकि, इसके संरक्षण और जल बंटवारा विवाद का समाधान निकट भविष्य में आवश्यक है। तीस्ता नदी की सुरक्षा और समृद्धि के लिए सही योजनाएं और सामूहिक प्रयास महत्वपूर्ण हैं

ताकि आने वाली पीढ़ियाँ भी इसके फायदों का लाभ उठा सकें।

तीस्ता नदी में विभिन्न प्रकार की मछलियाँ पाई जाती हैं, जो इसके समृद्ध जैव विविधता को दर्शाती हैं। यहाँ तीस्ता नदी में पाई जाने वाली कुछ प्रमुख मछलियों की प्रजातिया हैः

1. महसीर (Mahseer) - *Tor putitora, Tor tor*
2. रोहू (Rohu) - *Labeo rohita*
3. कतला (Catla) - *Catla catla*
4. मृगल (Mrigal) - *Cirrhinus mrigala*
5. रिटा (Rita catfish) - *Rita rita*
6. सिल्वर कार्प (Silver Carp) - *Hypophthalmichthys molitrix*
7. ग्रास कार्प (Grass Carp) - *Ctenopharyngodon idella*
8. कॉमन कार्प (Common Carp) - *Cyprinus carpio*
9. गोनच (Goonch Catfish) - *Bagarius bagarius*
10. स्नेकहेड (Snakehead) - *Channa striata*
11. मगुर (Walking Catfish) - *Clarias batrachus*
12. सिंध पाबदा (Sindh Pabda) - *Ompok pabda*
13. बटर कैटफिश (Butter Catfish) - *Ompok bimaculatus*
14. नैनी (Naini) - *Cirrhinus reba*
15. ब्रीडर फिश (Breeder Fish) - *Puntius spp.*

रेनबो ट्राउट फिश

इन मछलियों में से कई प्रजातियाँ आर्थिक और पारिस्थितिक रूप से महत्वपूर्ण हैं, और कुछ स्थानीय मछली पालन व्यवसाय के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। तीस्ता नदी की जैव विविधता इसे मछली पालन और प्राकृतिक मछली पकड़ने के लिए एक महत्वपूर्ण स्थान बनाती है।

तीस्ता नदी में आई बाढ़ का मछलियों पर प्रभाव

तीस्ता नदी में आई बाढ़ ने सिक्किम और पश्चिम बंगाल के कई क्षेत्रों में भारी तबाही मचाई। इस बाढ़ ने न केवल मानव जीवन और बुनियादी ढाँचे को प्रभावित किया, बल्कि नदी के पारिस्थितिकी तंत्र पर भी गंभीर असर डाला। विशेष रूप से, बाढ़ के कारण मछलियों की आबादी और उनके आवासों को गंभीर नुकसान पहुँचा।

तीस्ता नदी पर बाढ़ से हुई तबाही का एक दृश्य

1. मछलियों के आवास और पारिस्थितिकी तंत्र पर असर

प्राकृतिक आवास की क्षतिः तीस्ता नदी की बाढ़ ने मछलियों के आवासों को व्यापक रूप से प्रभावित किया। नदी का जलस्तर बढ़ने से कई स्थानों पर जल का बहाव अत्यधिक तेज हो गया, जिससे मछलियों के प्राकृतिक आवास, जैसे कि जलपोत (अंडरवाटर शेल्टर्स), घास और वनस्पतियाँ बह गईं। बाढ़ के पानी ने नदी के किनारों और तल को क्षतिग्रस्त कर दिया, जिससे मछलियों को छिपने और प्रजनन करने के स्थान नहीं मिले।

मिट्टी और कचरे की अधिकताः बाढ़ के कारण नदी में बड़ी मात्रा में मिट्टी, रेत, और अन्य कचरा बहकर आ गया। इससे नदी के पानी की गुणवत्ता में गिरावट आई, जिससे मछलियों के लिए जीवित रहना मुश्किल हो गया। पानी में घुले हुए कचरे ने ऑक्सीजन की मात्रा को कम कर दिया, जिससे मछलियों को साँस लेने में परेशानी हुई।

2. मछलियों की आबादी पर बाढ़ का असर

मछलियों की मृत्यु और विस्थापनः तीस्ता नदी की बाढ़ के कारण कई मछलियाँ मर गईं। बाढ़ के तेज बहाव के कारण मछलियाँ अपनी पारंपरिक आवासों से बाहर निकल गईं और बहकर दूसरी जगहों पर चली गईं, जहाँ उनके लिए जीना मुश्किल था। इसके अलावा, कई मछलियाँ बाढ़ के कारण समुद्र में बहकर चली गईं या किनारे पर फँसकर मर गईं।

प्रजनन और विकास पर प्रभावः बाढ़ का समय मछलियों के प्रजनन के महत्वपूर्ण समय के साथ मेल खाता था। बाढ़ के कारण मछलियों के अंडों और छोटे बच्चों (लार्वा) का बड़े पैमाने पर नुकसान हुआ, जिससे उनकी आबादी में कमी आई। प्रजनन के समय में जल के तेज बहाव ने मछलियों को सुरक्षित रूप से प्रजनन करने से रोका, जिससे भविष्य में उनकी संख्या पर गंभीर असर पड़ सकता है।

3. आर्थिक प्रभाव और मछली पालन पर असर

मछली पालन उद्योग को नुकसानः तीस्ता नदी के किनारे बसे कई लोग मछली पालन पर निर्भर हैं। बाढ़ के कारण मछली पालकों को भारी नुकसान हुआ क्योंकि उनके तालाब बह गए और मछलियाँ नदी में बह गईं। इसके अलावा, कई मछलियाँ बाढ़ के पानी में घुले हुए प्रदूषकों के कारण बीमार हो गईं, जिससे उनके उत्पादन और गुणवत्ता पर भी असर पड़ा।

स्थानीय आजीविका पर असरः मछली पालन सिक्किम और पश्चिम बंगाल के कई लोगों के लिए मुख्य आजीविका का स्रोत है। बाढ़ के कारण मछली पालकों को न केवल आर्थिक नुकसान हुआ, बल्कि उनके लिए अपनी आजीविका चलाना भी मुश्किल हो गया। बाढ़ के बाद, कई मछली पालक अपने व्यापार को फिर से स्थापित करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

4. पारिस्थितिकी तंत्र में बदलाव

भोजन की उपलब्धता पर प्रभावः बाढ़ के बाद, नदी के पारिस्थितिकी तंत्र में भी बदलाव देखने को मिला। मछलियाँ खाद्य श्रृंखला में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं और उनके प्रभावित होने से नदी के अन्य जीवों पर भी असर पड़ा। बाढ़ के कारण मछलियों की संख्या कम होने से उन पर निर्भर पक्षियों और जलीय जीवों के लिए भोजन की कमी हो गई।

जल की गुणवत्ता में गिरावटः बाढ़ के कारण नदी में गंदगी, रासायनिक कचरा और अन्य प्रदूषक घुल गए, जिससे पानी की गुणवत्ता बुरी तरह खराब हो गई। यह प्रदूषण मछलियों और अन्य जलीय जीवों के लिए विषैला साबित हुआ, जिससे उनकी आबादी और स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा।

5. मछलियों के संरक्षण के उपाय

तीस्ता बाढ़ ने मछलियों की आबादी और उनके आवासों पर गंभीर प्रभाव डाला, जिसे सुधारने के लिए तत्काल कदम उठाए जाने की जरूरत है। कुछ उपाय जो मछलियों के संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं:

प्राकृतिक आवासों का पुनर्वासः बाढ़ के बाद नदी के पारिस्थितिक तंत्र को पुनर्स्थापित करना महत्वपूर्ण है। इसके लिए नदी के किनारे पर वनस्पतियों को पुनः उगाना, जल के प्रवाह को नियंत्रित करना, और मछलियों के प्राकृतिक आवासों को फिर से बहाल करना शामिल है।

बाढ़ से उत्पन्न मलबे में दबा एक ट्रक

सिक्किम में बाढ़ के बाद सड़क मार्ग का एक दृश्य

जल की गुणवत्ता की निगरानीः नदी के पानी की गुणवत्ता को सुधारने और बनाए रखने के लिए नियमित निगरानी और जल शुद्धिकरण उपायों को लागू किया जाना चाहिए। इससे मछलियों के लिए स्वस्थ वातावरण बनाया जा सकेगा।

स्थानीय समुदाय की भागीदारीः मछलियों के संरक्षण में स्थानीय मछली पालकों और समुदाय की भूमिका महत्वपूर्ण है। उन्हें इस दिशा में जागरूक करना और संरक्षण के उपायों के प्रति प्रशिक्षित करना आवश्यक है ताकि वे मछलियों के आवासों की रक्षा कर सकें और अपने व्यवसाय को सुरक्षित रूप से आगे बढ़ा सकें।

निष्कर्ष

तीस्ता नदी में आई बाढ़ ने मछलियों पर गहरा प्रभाव डाला, जिससे उनके आवास, आबादी, और प्रजनन पर नकारात्मक असर पड़ा। इस आपदा ने यह स्पष्ट किया कि जलवायु परिवर्तन और मानवजनित गतिविधियों के कारण ऐसी घटनाएँ बार–बार हो सकती हैं। भविष्य में मछलियों की सुरक्षा और उनके आवासों के संरक्षण के लिए दीर्घकालिक योजनाओं और सामुदायिक भागीदारी पर ध्यान देना जरूरी है। इससे न केवल मछलियों का संरक्षण होगा, बल्कि स्थानीय मछली पालन उद्योग और पारिस्थितिकी तंत्र को भी मजबूती मिलेगी।

मखाना की खेतीः किसानों की आजीविका उत्थान के लिए अत्यंत लाभकारी जलीय उत्पाद

डॉ. कुलदीप कुमार
प्रधान वैज्ञानिक (रिटायर्ड)
डी–31, सेक्टर के, अलीगंज, लखनऊ

बादाम, पिस्ता, काजू, अखरोट, चिलगोज़ा की तरह मखाना भी एक मेवा है। लेकिन बहुत कम लोगों को मालूम है यह एक जलीय उत्पाद है। इस सूखे फल को धार्मिक अनुष्ठानों में पूजा, प्रसाद, हवन में प्रयोग किया जाता है और इसे मन्दिरों में प्रसाद के रूप में चढ़ाया जाता है। इसका उपयोग अनेक प्रकार के व्यंजन जैसे खीर, पनीर मखाना, हलवा, मिठाइयों, दाल मखानी, घी में फ्राई करके स्नैक्स के रूप में इत्यादि में अनेक प्रकार से करते हैं। वास्तव में यह एक बहुत स्वादिष्ट सूखाफल है जो पौष्टिक गुणों से भरपूर है। एक आकलन के अनुसार प्रत्येक 100 ग्राम मखाने में :–

प्रोटीन	9.7 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	77.0 ग्राम
वसा	0.1 ग्राम
फाईबर	14.5 ग्राम
पोटेषियम	500 मिलीग्राम
कैलशियम	60 मिलीग्राम
आइरन	1.4 मिलीग्राम
फास्फोरस	200 मिलीग्राम
सोडियम	200 मिलीग्राम
मैग्नीशियम	67.2 मिलीग्राम

(सी. एस. आई. आर. रिपोर्ट)

प्रत्येक 100 ग्राम मखाने में करीब 347 कैलोरीज होती हैं।

भारतवर्ष में पारंपरिक रूप से मखाने की खेती उत्तरी बिहार, पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा, मणिपुर एवं मध्य प्रदेश के कुछ स्थान में होती है। उत्तरी बिहार के कुछ जिलों जैसे दरभंगा, माधेपुरा, सुपौल, मधुबनी, कटिहार, सहरसा के साथ थोड़ी बहुत जगह जैसे चम्पारण, सीतामढ़ी, समस्तीपुर में यह व्यवसायिक रूप में होती है।

वर्तमान में भारतवर्ष में मखाने की खेती 15,000 हेक्टेयर जलक्षेत्रों में की जाती है। इससे सालाना 1,20,000 मैट्रिक टन मखाने का बीज तथा 40,000 मैट्रिक टन फूला हुआ मखाना प्राप्त होता है। इस उत्पादन का 85 प्रतिशत भाग उत्तरी बिहार में मिलता है। विदेशों में भी आजकल मखाने की मांग है और कुल उत्पादन का 2 प्रतिशत भाग, हाँलाकि यह बहुत कम है, कुछ देशों जैसे अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, सिंगापुर, मिडिल ईस्ट एवं ऑस्ट्रेलिया इत्यादि में निर्यात किया जाता है। विदेशों में मखाने की कुल मांग का 90 प्रतिषत भाग भारत वर्ष पूरा करता है। वर्ष 2023–24 में 25130 कार्गो की खेप निर्यात हुई थी। ऐसी उम्मीद की जाती है कि वर्ष 2032 तक इसकी अंतर्राष्ट्रीय बाजार में इसकी कीमत 254 बिलियन रुपए के करीब पहुंच जाएगी।

मखाने से जुड़ी हुई संभावनाये आने वाले दिनों में बहुत हैं। यदि हम इसकी कृषि पर एक नजर डालें तो हमें ज्ञात होगा कि यह बहुत जटिल एवं श्रमोन्मुख कार्य है पर अन्त में सुखदायी फल की प्राप्ति होती है। आइए एक नजर हम इसकी खेती पर डालते हैं।

मखाने का पौधा निम्फिेयसी फैमिली का एक वार्षिक जलीय पौधा है। इसे यूरेल फॉक्स के नाम से जाना जाता है। इस पौधे में काँटे होते हैं, जड़ें गुच्छे के रूप में होती हैं। इस पौधे में फूल लगने के बाद फल आते हैं एवं इन फलों के सड़ने के बाद बीज बाहर निकलते हैं। यह शुरू में तो पानी की सतह पर तैरते हैं पर बाद में यह पानी की तलहटी में बैठ जाते हैं। यहाँ से इन्हें एकत्र किया जाता

मखाना – एक पौष्टिक मेवा

है। मखाने के पौधे के पत्ते अपने ही परिवार के अन्य पौधे की तुलना में काफी बड़े एवं काँटेदार होते हैं।

मखाने की खेती

मखाने की खेती के लिए ऐसे तालाबों का चयन किया जाता है जिनकी गहराई एक से सवा मीटर के करीब हो, तलहटी में हयूमस की अच्छी मात्रा हो साथ ही पानी स्थिर हो। बहते हुए पानी में इसकी खेती नहीं की जा सकती है। यह ऐसे तालाब होते हैं जिनमें कार्प मछलियों का पालन नहीं किया जा सकता है। हयूमस, मिट्टी में पाया जाने वाला एक कार्बनिक पदार्थ है जो पेड़ पौधों एवं जीव जन्तुओं के सड़ने से बनता है। इसमें पोषक तत्वों की प्रचुर मात्रा होती है। (करीब 60 प्रतिशत कार्बन, 6 प्रतिशत नाइट्रोजन एवं अल्प मात्रा में फास्फोरस एवं सल्फर) जो पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देते हैं। हयूमस मिट्टी को छिद्रयुक्त बनाता है जिनसे पोषक तत्वों का पेड़ों में प्रवाह बना रहता है।

परम्परागत विधि में नवम्बर से दिसम्बर तक मखाने के बीज की बुआई की जाती है। 10,000 वर्ग मीटर जल क्षेत्र के लिए करीब 100 किलोग्राम बीज की आवश्यकता है जिसे स्थानीय बोल–चाल में गुर्री कहा जाता है। जल क्षेत्र के अनुसार इसकी मात्रा निर्धारित करके बुआई से एक सप्ताह पूर्व बोरों में भर के छाया में रखते हैं और बीच–बीच में इस पर पानी के छिड़काव करते हैं। ऐसे करने से इस बीज में अंकुरित होने की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है। इसके पश्चात् इन बीजों को बोया जाता है। मखाने का पौधा करीब करीब एक से सवा वर्ग मीटर की जगह घेरता है अतः बीज की बुआई करते समय में बीज को एक एक मीटर की दूरी पर तलहटी में थोड़ा गहराई में बोते हैं। बुआई के बाद छोटे ट्रैक्टर या हल द्वारा पूरे खेत में पाटा चलाया जाता है जिससे बीज ठीक जगह पर रह जाये और बाहर न निकले। बुआई के एक से डेढ़ महीने में नये अंकुरित पौधे धीरे–धीरे बाहर आने लगते हैं।

उन्नत तकनीक में यह बुआई ठीक प्रकार से तैयार की गई नर्सरी तालाबों में की जाती है। अंकुरित होने के बाद इनको बड़े खेतों में स्थानान्तरित कर देते हैं। एक हेक्टर जल क्षेत्र के लिए करीब 500 वर्ग मीटर क्षेत्र की नर्सरी तालाब की आवश्यकता होती है। तालाब के बांधों को एक फिट तक ऊँचा करते हैं। फिर इसमें 2–3 बार गहरी जुताई की जाती है। इन तालाबों के लिए दोमट चिकनी मिट्टी अच्छी रहती है। बीज के अंकुरण एवं विकास के लिए अच्छे पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इसलिये रासायनिक खाद जिसमें नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश 100:60:40 क्रमशः किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से डालते हैं। इन नर्सरी तालाब में करीब डेढ़ फिट पानी भरा रहना चाहिये। बुआई के बाद इन नर्सरी तालाबों में पाटा चलाते हैं जिससे गुर्री तलहटी में ठीक से दब जाये और बाहर न आये। नर्सरी तालाब में करीब 20 किलोग्राम बीज बोया जाता है। इससे प्राप्त पौधे एक हेक्टेयर जल क्षेत्र के लिए पर्याप्त होती है। इस बुआई को नवम्बर–दिसम्बर तक पूरा कर लेना चाहिए। 30 से 40 दिनो में यह भी अंकुरित होने लगते हैं और इनकी पत्तियां पानी की सतह पर देखने लगती हैं। इस अंकुरण के समय कभी–कभी एफिड का प्रकोप बना रहता है। इसकी रोकथाम के लिए 0.2 प्रतिशत इन्डोसुल्फान का इस्तेमाल किया जाता है। यह कीटनाशक बड़ी आसानी से विक्रेताओं के पास उपलब्ध रहता है।

पूर्णरूप से विकसित मखाने के पौधों को बड़े तालाबों में स्थानान्तरित किया जाता है। इन तालाबों को ठीक प्रकार से तैयार किया जाता है। 2–3 गहरी जुताई के बाद पाटा चला कर समतल किया जाता है। खेत की मेड़ो को ऊंचा करके तैयार कर लेते हैं। मखाने के पेड़ स्वस्थ रहें और इनका विकास ठीक हो इसलिए रासायनिक एवं कार्बनिक खाद का उपयोग भी किया जाता है। 100 किलो नाइट्रोजन, 60 किलो फास्फोरस एवं 40 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर एवं 15000 किलो कार्बनिक खाद की आवश्यकता होती है। नर्सरी तालाबों में फरवरी मास के अन्त तक पौध तैयार हो जाती है। इनको वहाँ से निकाल कर तैयार खेतों में स्थानान्तरित किया जाता है। मखाने के पेड़ काफी जगह लेते हैं अतः इन्हें एक दूसरे से सवा मीटर की दूरी पर एक लाइन में लगाया जाता है। एक पौध दूसरे से एक से सवा मीटर की दूरी पर होती है। क्रम पौधे लगाने से इनकी वृद्धि एवं विकास अच्छा होता है। जड़े गुच्छे में होती है और तलहटी में काफी गहराई तक फैली रहती हैं। पत्तों का आकार काफी बड़ा होता है जो 3 से 5 फीट डंठल पर टिके रहते हैं।

इनकी फसल के दौरान कभी–कभी रोगों के होने की सम्भावना भी रहती है। इन रोगों की रोकथाम अच्छी उपज पाने के लिए अति आवश्यक है :–

रोगों से रोकथाम

1. जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि मखाने की नवजात पौधों में एफिड मुलायम पत्तों की काफी नुकसान पहुँचता है। इसे स्थानीय भाषा में लाही कीड़ा बोलते हैं।
2. केसवर्म या पत्र लपेटक (*इलोफिला डिपंकटैलिस* एवं

इलोफिला क्रिसोनेलिस) तापमान बढ़ने के साथ मार्च से मई के महीने में मखाने के पत्तों को कुतर कर अपने ऊपर एक आवरण बना लेते हैं।

3. डोनेसिया डेले सेटी जिसे आमतौर पर रूटबोरर के नाम से जाना जाता है मखाने के जड़ों को नष्ट करता है। पीले रंग के कीड़े से घिरे इसके पियोपों के झुंड मखाने के पेड़ों की जड़ों में देखे जा सकते हैं।
4. प्लिया लिटआटा जो लीफ सकिंग बग के नाम से जाना जाता है, इसके निम्फ एवं वयस्क कोमल तनों और जड़ों का रस चूसते हैं और नष्ट करते हैं।
5. फ्लावर थ्रिप्स कीड़े के निम्फ एवं वयस्क फूल एवं कली को नष्ट करते हैं।

इन सबसे छुटकारा पाने के लिए ज्यादातर किसान बी. एच. सी. फ्यूराडेन, एल्ड्रिन, सेविडॉन का उपयोग करते हैं जो कीटनाशक दवाओं के विक्रेताओं के पास आसानी से उपलब्ध रहता है।

अवांछित खर पतवार का उन्मूलन

मखाने के खेतों में मखाने की रोपाई के बाद काफी संख्या में अवांछित जलीय खरपतवार निकल आती है जिसका उन्मूलन अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि यह तालाब में उपलब्ध पोषक तत्वों का शोषण करते हैं जिसके कारण इन तत्वों की उपलब्धता मखाने के पौधों के लिये कम हो जाती है जिसके कारण उनकी बढ़वार पर बहुत असर पड़ता है। हर महीने के अन्तराल पर 7–8 किसान (जल क्षेत्र के अनुसार) तालाबों से इन्हें बाहर निकाल देते हैं। यह क्रिया मखाने की फसल के दौरान लगातार करनी चाहिए जिससे अच्छी फसल प्राप्त हो।

मखाने के खेतों में पानी के स्तर पर एक नजर रखना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि पूरी फसल उसी पर निर्भर करती है। 3–4 फीट पानी तालाब में होना अति आवश्यक है।

पुष्पण एवं फलों का लगना

मखाने के पौधों में फूल अप्रैल/मई से लगने शुरू होते हैं। इस फसल की खास बात यह है कि यह एक साथ पूरी फसल में नहीं आते हैं। अप्रैल/मई के महीने से शुरू होकर यह कार्यक्रम अक्टूबर/नवम्बर तक चलता रहता है। फूल बैगनी–नीले रंग के होते हैं जो दो–तीन दिन के बाद पानी के अन्दर चला जाता है। मखाने का फल कटीला एवं हरे रंग का होता है जो पकने के बाद यह केले के फूल जैसा गहरा लाल रंग का होता है। पकने के उपरान्त यह जून महीने से पककर फटने लगते हैं और बीज बाहर निकाल कर पानी की सतह पर तैरने लगते हैं। बीज वायुयुक्त सुनहरे आवरण से ढके हुए होते हैं। यह एक–दो दिन तक की पानी की सतह पर तैरने के उपरान्त तलहटी में बैठ जाते हैं। एक फल में 30–40 बीज तक होते हैं।

बीज एकत्रीकरण

बीज एकत्रीकरण मखाने की खेती में मखाने के फल फटने के साथ शुरू होता है और अक्टूबर के अन्त तक चलता रहता है। जैसे–जैसे मखाने के खेतों में पानी का स्तर कम होता जाता है एकत्रीकरण का कार्य बढ़ता जाता है। यह कार्य सुबह से दोपहर तक चलता है। किसान 5–6 के समूह में यह कार्य करते हैं। पेड़ों के पत्ते गलने लगते हैं। सुविधा के लिए मखाने के पेड़ों की जड़ से उखाड़ दिया जाता है। किसान यह कार्यक्रम एक क्रम में करते हैं और बाँस गाड़ कर उसे पकड़ कर और गोता लगाकर बीजों का एकत्रीकरण करते हैं। यह कार्य हाथ से किया जाता है। बाँस की तीलियों से बने हुए आंक में यह बीजों का एकत्र करते हैं। फिर इन्हें एक जगह एकत्र करके साफ करते हैं। किसान बीज के ढेरो को पैर से मसलते हैं जिससे इनके ऊपर के आवरण टूट जाते हैं और बीज भी साफ हो जाते हैं। इसके पश्चात् इन्हें आक में भरकर पानी में हिला हिला कर ठीक प्रकार से धो लेते हैं। बाद में बोरों में भरकर रखा जाता है। उन्नत तरीके से की गयी मखाने की खेती के करीब 2500 से 3000 किलोग्राम बीज का उत्पादन होता है जबकि परम्परागत तरीके से की गई खेती में 1500 से 2000 किलोग्राम का उत्पादन मिल पाता है।

प्रसंस्करण

बोरों में भरकर तालाबों से लाये गये मखाने के बीजों में काफी नमी रहती है जिससे निजात पाना आवश्यक है। इसलिये इन्हें खोल पर चटाई या फर्श पर डालकर 3–4 घंटे सुखाया जाता है। इस प्रक्रिया से नमी की मात्रा लगभग 20 से 25 प्रतिशत तक रह जाती है। यह बहुत महत्वपूर्ण क्रिया होती है। इसके पश्चात् मखाने के बीजों को श्रेणियों में व्यवस्थित किया जाता है। इस क्रिया के लिए इन्हें क्रमबद्ध तरीके से छलनी में छानते हैं। इनकी संख्या सात होती है जिसमें उसका नम्बर अंकित रहता है। छलनी नम्बर एक से 1.2 से.मी. का बीज बाहर आता है जबकि सात से 0.4 से.मी. का बीज बाहर रह जाता है। हमारे यहाँ यह क्रिया हाथों द्वारा की जाती है। तत्पश्चात् इन्हें अलग–अलग बोरों में श्रेणीनुसार आगे के कार्य के लिए रखते हैं।

लावा या मखाना निकालना

यह क्रिया तीन हिस्सों में बंटी रहती है। पहली क्रिया में धूप में सूखे हुये मखाने के बीजों को एक बड़े मिट्टी या कास्ट आयरन के बर्तन में जिसके नीचे आग जल रही होती है लगातार चलाते हुए गर्म करते हैं। इस क्रिया में तापक्रम करीब 250 से 300^{0}C डिग्री सेल्सियस रहता है। यह कार्य 5–6 मिनट तक किया जाता है जिससे मखाने के बीज की नमी में कमी आती है और यह घटकर 20 प्रतिशत के करीब पहुंच जाती है।

दूसरी क्रिया में गर्म किये गये बीजों को 2–3 दिन तक रख कर छोड़ देते हैं। ऐसा करने से मखाने के कवच के अन्दर का दाना अलग हो जाता है।

तीसरी क्रिया में बीज से लावा बाहर निकाला जाता है। इसे कास्ट आयरन के बर्तन को भट्टी पर रखते हैं। जब तापक्रम 300 से 350^{0}C तक पहुंच जाता है तब 250–250 ग्राम मखाने के बीज, जिन्हें गर्म करके ठंडा किया था वह डाल कर डेढ़–दो मिनट लगातार चलाते हुए भूनते हैं जब तक कि उसमें से चटकने की आवाज न आने लगे। यह क्रिया यह दर्शाती है कि मखाने का बीज पूरी तरह भुन चुका है। तुरन्त ही थोड़े–थोड़े दाने किसी समतल जगह पर डालकर लकड़ी के हथौड़े से पीटते हैं। इससे मखाने के बीज की ऊपरी परत टूट जाता है और लावा बाहर आ जाता है। बाहर आये लावा पर एक लाल रंग की झिल्लीदार परत होती है जिसे रगड़कर साफ किया जाता है। यह कार्य तुरन्त किया जाता है क्योंकि ठन्डा होने पर लावा नमी सोख लेता है और झिल्ली निकलना मुश्किल हो जाता है।

लावा प्राप्त हो जाने के उपरान्त बिक्री के लिए गनी बैग्स या पॉलीथीन के बैग में बन्द करके इसका भंडारण करते हैं और बिक्री के लिए आगे का कार्य करते हैं।

मखाने के खेतों में मत्स्य संवर्धन

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि मखाने के खेतों में पानी भरते समय बहुत सारी मछलियाँ आ जाती हैं जो मखाने की खेती के दौरान उसमें पलती रहती हैं। मखाने के खेतों में पोषक तत्वों की भरमार रहती है। सुनियोजित तरीके से किये गये मखाना कल्टीवेशन में पोषकता बनाए रखने के लिये उसमें कार्बनिक और अकार्बनिक खाद का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में होता है साथ ही इन तालाबों में हयूमस की भी अच्छी मात्रा रहती है। अतः यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि ऐसे तालाबों में विशेष किस्म की मछलियाँ पाली जा सकती हैं, पर इस बात का भी ध्यान रखना अति आवश्यक है कि मखाने के तालाबों में कार्प जाति की मछलियाँ जैसे रोहू, कतला, नैन, सिल्वरकार्प इत्यादि का संवर्धन नहीं किया जा सकता है क्योंकि मखाने के पूरे खेत पत्तों से ढके होने के कारण प्रकाश संश्लेषण न होने के कारण ऑक्सीजन की कमी हो जाती है और इस प्रजाति की मछलियाँ मर जाती हैं। मखाने के साथ–साथ मछली संवर्धन के लिए कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है :–

- मखाना एवं मछली संवर्धन केवल बारहमासी तालाबों में ही किया जा सकता है।
- मखाने की खेती के लिए उष्ण कटिबंध जलवायु वाले क्षेत्र ही उपयुक्त होते हैं और ऐसा ही वातावरण मछलियों के लिए भी उपयुक्त होता है।
- अधिक गहराई वाले तालाब मखाने की खेती के लिए अनुपयुक्त होते हैं अतः दोनों के साथ में संवर्धन के लिए करीब एक से सवा मीटर गहराई वाले तालाब उपयुक्त होते हैं।
- दोमट मिट्टी वाले तालाब इस कार्य के लिए अच्छे हैं।
- मखाने के साथ मछली संवर्धन के लिए तालाबों के बंधे ऊँचे होने चाहिए।
- तालाबों में बार–बार जाल चलाकर अवांछित मछलियाँ, खरपतवार, कीड़े मकोड़े को बाहर निकाल देना चाहिए।
- टूटे–फूटे बन्धों की मरम्मत एक जरूरी कदम है।
- यदि तालाब की मिट्टी अम्लीय हो तो अम्लीयता के आधार पर चूने का प्रयोग करना चाहिए।

मखाने के लिए तैयार किये तालाबों में मांगुर और कवई मछलियों की प्रजातियाँ उत्कृष्ट हैं। मांगुर (*क्लैरियस बैट्रेकस*) एवं कवई (*एनाबस टेस्टुडीनियम*) बाजारों में जीवित अवस्था में बेची जाती है। अतः इसकी माँग सदा बनी रहती है। यह अपने औषधीय गुणों के कारण 500–600 रुपए प्रति किलोग्राम के मूल्य में बेची जाती है। यह दो प्रकार की मछलियाँ कीड़े मकोड़े बड़े चाव से खाती हैं। मखाने के खेतों में इनकी भरमार रहती है। मखाने की फसल के दौरान इसको कुछ जीवियों के कारण काफी नुकसान होता है। इन मछलियों की उपस्थिति में मखाने के पौधे स्वस्थ रहते हैं क्योंकि नुकसान पहुंचाने वाले जीव जन्तुओं को मछलियाँ खा जाती हैं।

मछलियों के बीज का संचयन

मांगुर (औसतन लम्बाई 10 से.मी.) एवं कवई (5 से. मी.) के लगभग 20000 से 25000 बच्चे संचय किये जाते

मांगुर (*क्लैरियस बैट्रेकस*)

कवई (*एनाबस टेस्टुडीनियम*)

हैं। अधिक वर्षा के कारण इनके बाहर निकलने का डर बना रहता है। अतः ऐसी स्थिति में पम्प द्वारा जल स्तर कम करना उचित रहता है। पम्प के फुट वाल्व को जाली से ढक देना चाहिये जिससे बच्चे बाहर न निकले। वर्षा ऋतु में मांगुर एवं कवई मछलियों को तालाब से बाहर निकलकर घूमने की आदत होती है। अतः वर्षा ऋतु के आगमन से पूर्व तालाबों के बन्धों को बाँस की चटाई से घेर देना चाहिए।

इन तालाबों में यदि उसमें मछलियाँ हो तो किसी भी कीटनाशक का प्रयोग निषेध है।

तालाबों के नितल में मौजूद कीड़े–मकोड़े से इन मछलियों के भोजन की जरूरत एक हद तक पूरी होती रहती है पर वृद्धि में कमी दिखे तो चावल की भूसी एवं सूखी मछलियों का चूरा या बूचड़ खाने का अवशेष यदा कदा एक–एक के अनुपात में डालते रहना चाहिए। साथ ही बाँस के फ्रेम बनाकर मखाने के पत्ते हटाकर रख देना चाहिए और उन पर रात में बिजली के बल्ब द्वारा रोशनी करनी चाहिए। इससे कीड़े वहाँ एकत्र होते हैं जो इन मछलियों का प्रिय भोजन है।

मखाने के बीज निकालने के उपरान्त जल स्तर पम्प द्वारा कम करके इन मछलियों को बाहर निकालते हैं। ऐसी अपेक्षा की जाती है यदि सब कुछ सुचारू रूप से चलता रहे तो करीब 1 वर्ष के संवर्धन के अन्त में करीब 800 से 1000 किलोग्राम मछलियों का उत्पादन प्राप्त होता है जो मखाने के साथ एक अतिरिक्त आय होती है यह मखाने की खेती में जुड़े हुये किसानों के लिए एक अच्छी आय का साधन है।

उपसंहार

मखाना एक अनेक पोषक तत्वों से भरपूर एक पौष्टिक मेवा है। इससे जुड़े किसानों की जीविका के लिये यह एक अच्छी आय का साधन है, हाँलाकि इसमें काफी परिश्रम की आवश्यकता होती है। साथ में वायुष्वासी मछलियों का संवर्धन किसानों को एक अच्छी आय देता है।

मखाने एंटीऑक्सीडेंट का एक अच्छा स्रोत है। इसमें मौजूद पोटेशियम रक्तचाप एवं कार्डियोवैस्कुलर स्वास्थ्य को ठीक रखता है। इसके साथ मखाने के सेवन से स्पीलीन साफ करना, शरीर से ड्रग्स, अल्कोहल को बाहर निकलना एवं किडनी फंक्शन को ठीक प्रकार से रखना इत्यादि इसके गुण हैं। मखाने का निचोड़ शरीर में कोलस्ट्रॉल की मात्रा कम करता है। जिससे हृदय का स्वास्थ्य अच्छा रहता है। यह कहना अति उत्तम होगा कि मखाना बहुत गुणकारी है और इसके उत्पादन को बढ़ावा देना चाहिए। साथ में पाली गई कवई एवं मांगुर मछलियाँ प्रोटीन, विटामिन्स, मिनरल्स ओमेगा–3, फैटी एसिड की प्रचुर मात्रा होती है जो मनुष्यों के स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त गुणकारी है। यह एक गुणकारी एवं लाभकारी कृषि है। इससे जुड़े हुये किसानों को प्रोत्साहन देना चाहिये जिससे यह जल कृषि और अधिक क्षेत्रों में अपनायी जाये।

संदर्भ

Thakur, N.K. (1996) in Darbhanga Makhana cum fish culture may prove a boon. ICAR News 20(1)14.

Thakur, N.K. (1978) Makhana Culture Indian farming 27 (10)23-27.

कुमार, लोकेन्द्र, गुप्ता वी. के., झा, बी. के. सिंह, आई. एस, भट्ट, वी. पी., सिंह, ए. के. (20B) मखाना खेती की उन्नत तकनीक, तकनीकी बुलेटिन पूर्व क्षेत्र के लिये भारतीय अनुसंधान परिषद का अनुसंधान परिसर पटना।

भारत में तुलसी का महत्व एवं खेती

अभिषेक कुमार सिंह[1], ब्रह्म प्रकाश[1], ओम प्रकाश[1] एवं राकेश कुमार सिंह[2]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

[2]कृषि विज्ञान केंद्र, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखीमपुर

तुलसी जिसे अँग्रेजी में होली बेसिल के नाम से जाना जाता है, का वानस्पतिक नाम *ओसिमम बेसिलिकम* है। तुलसी लेमिएसी कुल का सदस्य है जिसकी व्यावसायिक खेती भारत में उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा हरियाणा में गंध तेल के लिए की जाती है। इसकी उत्पत्ति भारत तथा एशिया के अन्य क्षेत्रों में ही हुई थी। तुलसी एक महत्वपूर्ण औषधि एवं सगंध पौधा है जिसको परफ्यूम, सौन्दर्य प्रसाधन, एरोमाथिरेपी उद्योगों के अलावा घर–घर में उपयोग में लाया जाता है। हमारे प्राचीन वेदों तथा पुराणों में भी तुलसी का वर्णन मिलता है। तुलसी को सभी औषधियों एवं जड़ी–बूटियों की रानी माना जाता है। भारत में मुख्यतया तुलसी की तीन किस्में रामा, कृष्णा तथा वन अधिक लोकप्रिय हैं। भारत में हरी पत्तियों वाली रामा तुलसी को अधिकांशतः प्रयोग में लाया जाता है। बैगनी रंग की पत्तियों वाली कृष्णा तुलसी अत्यधिक गुणकारी होती है। अतः सामान्य रूप से इसको ही औषधीय निर्माण में प्रयोग में लाया जाता है। जंगली पत्तियों वाली वन तुलसी जंगलों में उगती है तथा कई आयुर्वेदिक औषधियों के बनाने में इसका प्रयोग होता है। तुलसी कीटों को प्रतिकर्षित करने वाला प्राकृतिक पौधा है। इसके सगंध तेल में एंटीमाइक्रोबियल गुण होते हैं।

भारत में उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा हरियाणा तुलसी के प्रमुख उत्पादक राज्य हैं, जो भारत के कुल तुलसी उत्पादन में 40, 25 तथा 15 प्रतिशत का योगदान देते हैं। उत्तर प्रदेश में संत रविदास नगर (भदोही), वाराणसी, गाजियाबाद, मेरठ तथा आगरा, पंजाब में होशियारपुर, जालंधर, लुधियाना, अमृतसर व पटियाला तथा हरियाणा में करनाल, सोनीपत, रोहतक, झज्जर व अंबाला प्रमुख तुलसी उत्पादक जिले हैं। भारत संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंग्डम, जर्मनी तथा आस्ट्रेलिया को इसका निर्यात करता है। भारत में तुलसी सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, मानव स्वास्थ्य के लिए गुणकारी तथा पर्यावरण के लिए भी अत्यधिक महत्वपूर्ण फसल है।

सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक महत्व

- **पवित्र पौधाः** हिन्दू धर्म में यह एक पवित्र पौधा है तथा भारत तथा दक्षिण एशिया में इसका बहुत ही सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं औषधीय महत्व है। तुलसी हिन्दू धर्म में सबसे पूज्यनीय एवं पवित्र पौधा माना जाता है जो प्रेम, शुद्धता, विश्वास, निष्ठा तथा भक्ति का प्रतीक है।
- **पूज्यनीय पौधाः** कार्तिक माह की देवोत्थान एकादशी पर तुलसी विवाह का पर्व भी मनाया जाता है। कई हिन्दू परिवारों में तुलसी को प्रतिदिन तथा विशेष रूप से धार्मिक संस्कारों एवं रीति–रिवाजों तथा शुभ अवसरों पर पूजा जाता है। तुलसी बुरी आत्माओं से भी बचाती है तथा संपन्नता तथा भविष्य को उज्जवल करने में सहायक मानी जाती है। हिन्दू धर्म की पौराणिक कथाओं में तुलसी को भगवान विष्णु तथा भगवान कृष्ण के साथ भी जोड़ा गया है।
- **शुद्ध करने वाला पौधाः** तुलसी में बहुत सी हीलिंग गुण होते हैं। तुलसी को शरीर, मस्तिष्क एवं आत्मा को शुद्ध करने वाला माना जाता है।

औषधीय गुण

- **एंटीबैक्टीरियल एवं एंटीवायरलः** तुलसी में कई एंटीबैक्टीरियल एवं एंटीवाइरल गुण होने के कारण, यह विभिन्न रोगों के संक्रमण में अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध होती है।
- **तनाव में राहतः** तुलसी विभिन्न प्रकार के ज्वर, सर्दी–जुकाम, तनाव, चिंता तथा उच्च रक्तचाप को कम करने में सहायक होती है। तुलसी यकृत तथा गुर्दों को भी स्वस्थ रखने में सहायक होती है तथा कैंसर के खतरे को भी कम करती है।
- **श्वसन संबंधी समस्याएँः** तुलसी कई श्वसन संबंधी समस्याओं जैसे ब्रोंकाइटिस, अस्थमा तथा ख़ासी जैसे रोगों के उपचार में भी उपयोग में लायी जाती है।
- **पाचन स्वस्थ्यः** तुलसी पेट की गैस संबंधी समस्याओं का निवारण करके भोजन के पाचन में सहायक होती है। तुलसी दस्त तथा कब्ज दोनों में लाभ पहुंचाती है।

मानव स्वास्थ्य के लिए लाभदायक

- **रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधारः** तुलसी के नियमित सेवन से मनुष्यों में विभिन्न रोगों के विरुद्ध रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है।

- **एंटीइनफ़्लेमेट्री गुण:** तुलसी में एंटीइनफ़्लेमेट्री गुण होने के कारण यह सूजन तथा शरीर के किसी भाग में हो रहे दर्द के निवारण में भी उल्लेखनीय भूमिका निभाती है।
- **त्वचा तथा बाल:** तुलसी त्वचा तथा बालों को स्वस्थ रखने में भी मददगार होती है।
- **मुंह की सफाई:** तुलसी मुंह के अल्सर, मसूड़ों की समस्याएँ तथा सांस की बदबू को रोकने के लिए भी उपयोग में लायी जाती है।

पर्यावरण के लिए लाभदायक

- **वायु को शुद्ध करने में सहायक:** तुलसी हमारे पर्यावरण के लिए भी अत्यंत लाभप्रद पौधा है। यह प्रदूषकों को अवशोषित करके वायु को शुद्ध करने में सहायक होती है।
- **कीट प्रतिकर्षक:** तुलसी मच्छरों एवं अन्य कीटों को दूर भगाने में मदद करती है।
- **मृदा संरक्षण में सहायक:** तुलसी की जड़ें मृदा अपरदन रोकने में भी सहायता करती हैं।

तुलसी के सेवन से प्राप्त होने वाले लाभ

तुलसी पर किए गए वैज्ञानिक अनुसंधान में प्राप्त परिणामों के आधार पर तुलसी के सेवन से मनुष्यों को बहुत से लाभ प्राप्त होते हैं। जो तुलसी में पाये जाने वाले निम्नलिखित गुणों के कारण संभव हो पाते हैं:

- एंटीमाइक्रोबियल तथा एंटीऑक्सीडेंट गुण
- एंटीइन्फ़्लेमेट्री तथा एनाल्जेसिक प्रभाव
- कार्डियोवैस्कुलर तथा न्यूरोप्रोटेक्टिव लाभ
- एंटीकैंसर तथा एंटीडायबीटिक क्षमता
- इम्यूनोंमोडुलेट्री तथा तनाव कम करने वाले प्रभाव
- एचआईवी तथा एचएसवी के विरुद्ध एंटीवायरल प्रभाव
- वायरस के बहुगुणन को रोकने में मददगार

तुलसी की रसायनिक संरचना

तुलसी की पत्तियों में ऐसे बहुत से रसायन पाए जाते हैं जिनके कारण तुलसी के सेवन से मनुष्यों को विभिन्न लाभ प्राप्त होते हैं। तुलसी की पत्तियों में निम्नलिखित रसायन प्रमुखता से पाए जाते हैं:

- **यूजीनोल (70–80%):** तुलसी की पत्तियों में यही रसायन सबसे अधिक मात्रा में पाया जाता है। तुलसी की पत्तियों में इसी रसायन की उपस्थिति के कारण तुलसी की पतियों में एंटीमाइक्रोबियल तथा एंटीइन्फ़्लेमेट्री गुण पाए जाते हैं।
- **लिनालूल (10–20%):** तुलसी की पत्तियों में इसी रसायन की उपस्थिति तुलसी को एंटीऑक्सीडेंट तथा तनाव कम करने वाले प्रभाव जैसे गुण दर्शाने में सक्षम बनती है।
- **मिथाइल यूजीनोल:** तुलसी की पत्तियों में इसी रसायन की उपस्थिति के कारण तुलसी में एंटीमाइक्रोबियल तथा एंटीफ़ंगल जैसे गुण प्रदर्शित होते हैं।
- **सिनिओल:** तुलसी की पत्तियों में इसी रसायन की उपस्थिति के कारण तुलसी की पतियों में एंटीमाइक्रोबियल तथा एंटीइन्फ़्लेमेट्री गुण पाए जाते हैं।
- **लिमोनीन:** तुलसी की पत्तियों में इसी रसायन की उपस्थिति के कारण तुलसी में एंटीमाइक्रोबियल तथा एंटीऑक्सीडेंट जैसे गुण प्रदर्शित होते हैं।
- उपरोक्त रसायनों के अतिरिक्त, तुलसी में विटामिन के, कैल्शियम, लौह तथा पोटेशियम जैसे अन्य पोषक तत्व भी पाए जाते हैं।

प्रमुख आयुर्वेदिक तुलसी फार्मूलेशन्स

- **तुलसी स्वरस (जूस):** यह मनुष्यों की पाचन संबंधी समस्याओं एवं ब्रोंकाइटिस का निदान प्रस्तुत करता है।
- **तुलसी अर्क (आसुत जल):** यह त्वचा एवं अस्थमा जैसी श्वसन संबंधी समस्याओं में लाभकारी सिद्ध होता है।
- **तुलसी तेल:** यह त्वचा संबंधी रोगों में मसाज करने के काम आता है तथा खांसी में भी राहत देता है।
- **तुलसी चूर्ण:** तुलसी चूर्ण भी मनुष्यों की डायरिया जैसी पाचन संबंधी समस्याओं का निदान प्रस्तुत करता है।
- **तुलसी वटी:** तुलसी वटी श्वसन संबंधी समस्याओं के साथ–साथ कब्ज में लाभकारी सिद्ध होती है।

आयुर्वेदिक तुलसी रेसिपी

- **तुलसी टी:** उबलते पानी में तुलसी के 10–15 पत्तियाँ डालकर बनाएँ।
- **तुलसी चाय:** तुलसी, अदरक, दालचीनी तथा ब्लैक टी मिलाकर बनाएँ।
- **तुलसी जूस:** तुलसी, नींबू तथा शहद को मिलाकर तुलसी जूस बनाएँ।

- **तुलसी काढ़ाः** पानी में तुलसी, हल्दी तथा अदरक को डालकर उबाल कर बनाएँ।
- **तुलसी मिश्रित तेलः** नारियल तेल में तुलसी को डालकर बनाएँ।

तुलसी आधारित घरेलू नुस्खे

- तनाव से आराम पाने के लिए तुलसी की चाय अत्यंत लाभकारी सिद्ध होती है।
- खांसी में राहत के लिए तुलसी को शहद के साथ सेवन करना चाहिए।
- पाचन संबंधी समस्याओं से राहत पाने के लिए तुलसी को अदरक के साथ सेवन करना लाभ पहुंचाता है।
- एकज़्मा जैसी त्वचा संबंधी समस्याओं के निदान के लिए तुलसी को हल्दी के साथ प्रयोग करना लाभकारी पाया गया है।
- शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए तुलसी को नींबू के साथ सेवन करना चाहिए।

त्वचा संबंधी रोगों का उपचार

- जाड़ों में जब हमारी त्वचा ठंडी हवाओं के कारण नमी के सूखने से सूखने लगती है तो तुलसी को नारियल तेल में मिलाकर मोइश्चराइजर के रूप में प्रयोग करने से त्वचा नर्म एवं मुलायम बनी रहती है।
- मुंह पर मुहाँसे निकल आने पर तुलसी से फेस मास्क बनाकर चेहरे पर लगाने से मुहाँसे समाप्त हो जाते हैं।
- मुंह पर मुहाँसे निकल आने पर तुलसी के साथ नीम का प्रयोग करने से मुहाँसे समाप्त हो जाते हैं।

श्वसन संबंधी समस्याओं का उपचार

- तुलसी को दालचीनी के साथ प्रयोग करने से श्वसन संबंधी समस्याओं में आराम मिलता है।
- तुलसी के साथ हल्दी का सेवन करने से *ब्रोंकाइटिसका* उपचार किया जाता है।
- तुलसी के साथ अश्वगंधा के सेवन करने से अस्थमा में लाभ मिलता है।
- तुलसी के साथ त्रिफला के सेवन से *सीआईपीडी* में राहत मिलती है।
- *न्यूमोनिया* के उपचार में तुलसी के साथ कालमेघ के सेवन लाभकारी सिद्ध होता है।

बालों की समस्या का उपचार

- यदि आपके बालों में रूसी की समस्या है तो आप तुलसी से हेयर मास्क बनाकर बालों पर लगाकर रूसी को समाप्त कर सकते हैं।
- यदि आपके बाल झड़ रहे है तथा इसके कारण आपके सिर पर बाल कम होते जा रहे हैं तो आप तुलसी से बने शैंपू का प्रयोग करके बालों के झड़ने की समस्या से निजात पा सकते हैं।

मानसिक स्वास्थ्य का उपचार

- तुलसी को अश्वगंधा के साथ सेवन करने से चिंता तथा तनाव में राहत मिलती है।
- तुलसी को ब्राह्मी के साथ सेवन करने से अवसाद दूर होता है तथा मूड ठीक होता है।
- ट्रामा के पश्चात स्ट्रेस डिसऑर्डर (पीटीएसडी) में तुलसी का प्रयोग आराम पहुंचाता है।
- शीजोफ्रेनिया नामक मानसिक रोग में भी तुलसी का प्रयोग लाभ पहुंचाता है।
- तुलसी को जिन्सेंग के साथ सेवन करने से तनाव दूर होता है।
- तुलसी को वेलेरियन की जड़ों के साथ सेवन करने से अनिद्रा की समस्या दूर होती है।

कैंसर का उपचार

- ब्रेस्ट कैंसर में तुलसी को हल्दी के साथ सेवन कराके आयुर्वेदिक उपचार किया जाता है।
- फेफड़े के कैंसर में तुलसी को अश्वगंधा के साथ सेवन कराके उपचार किया जाता है।
- त्वचा कैंसर में तुलसी को एलोवेरा के साथ सेवन कराके उपचार किया जाता है।
- लिवर कैंसर में तुलसी को त्रिफला के साथ सेवन कराके उपचार किया जाता है।

बांझपन का उपचार

- पुरुष बांझपन में तुलसी के साथ अश्वगंधा के सेवन से पुरुष बांझपन दूर होता है।
- तुलसी के साथ शतावरी के सेवन से महिलाओं के बांझपन का उपचार किया जाता है।
- तुलसी के साथ कोंच के बीज के सेवन से पुरुषों के वीर्य में लो स्पर्म काउंट का इलाज किया जाता है।
- तुलसी तथा दशमूल के सेवन से हार्मोनल असंतुलन का उपचार किया जाता है।

कार्डियोवैस्कुलर रोगों का उपचार

- उच्च रक्तचाप में तुलसी को अर्जुन के साथ सेवन कराके उपचार किया जाता है।
- तुलसी को अदरक के साथ प्रयोग करने पर उच्च रक्तचाप नियंत्रित रहता है।
- रक्त में कोलेस्टेरोल की मात्रा बढ़ जाने पर तुलसी को त्रिफला के शाथ उपचार किया जाता है।
- एथेरोस्क्लेरोसिस में तुलसी तथा हल्दी के साथ उपचार किया जाता है।
- कार्डिएक एरीथ्मियास में तुलसी को अश्वगंधा के साथ मिलाकर सेवन कराके उपचार किया जाता है।

अन्य रोगों का उपचार

- तुलसी को हल्दी के साथ प्रयोग करने से मधुमेह रोग में लाभ मिलता है।
- तुलसी को त्रिफला के साथ सेवन करने से पाचन संबंधी समस्याओं में राहत मिलती है।

तुलसी आधारित उत्पाद

- एसेंशियल ऑइलः इस प्रकार के तेल का प्रयोग एरोमा चिकित्सा में किया जाता है।
- सप्लीमेंट्सः कैप्सूल, टेबलेट्स अथवा चूर्ण
- स्किन केयरः क्रीम, लोशन, फेस मास्क्स
- हैयर केयरः शैंपू, कंडीशनर्स, तेल
- टी ब्लेण्ड्सः तुलसी को अन्य जड़ी बूटियों के साथ मिलकर बनाए जाते हैं।

अन्य उपयोग

- **विभिन्न व्यंजनों को बनाने में प्रयोगः** विभिन्न आयुर्वेदिक, भारतीय एवं थाईलैंड के व्यंजनों, चटनी तथा सौस बनाने में तुलसी को भोजन को पकाने में प्रयोग किया जाता है।
- **सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री के रूप में प्रयोगः** तुलसी के सत्त को विभिन्न स्किनकेयर तथा हेल्थकेयर उत्पादों जैसी सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री के रूप में भी प्रयोग में लाया जाता है। तुलसी त्वचा के टोनर की तरह कार्य करती है तथा मुहांसों के उपचार में भी काम आती है। यह बालों को बढ़ाने में मदद करती है तथा तनाव संबन्धित समस्या होने के कारण बालों के झड़ने को रोकती है। तुलसी प्राकृतिक *माउथवाश* की भांति कार्य करके मुंह की भीतर से सफाई रखती है। तुलसी में एंटी–एजिंग गुण भी होते हैं। यह चेहरे के रंग तथा चमक में भी सुधार करती है।
- **चायः** तुलसी की चाय एक अत्यंत लोकप्रिय हर्बल पेय पदार्थ है।

तुलसी को प्रयोग करते समय ध्यान में रखने वाली सावधानियाँ

तुलसी का पौधा हमारे लिए अत्यंत लाभदायक पौधा है। तुलसी मानव जीवन के लिए प्रकृति का अनमोल उपहार है। परंतु इसका प्रयोग करते समय हमें निम्नलिखित सावधानियाँ भी रखनी चाहिएः

- तुलसी को बहुत अधिक मात्रा में उपभोग में नहीं लाना चाहिए। क्योंकि यह अन्य दवाइयों के साथ परस्पर क्रिया कर सकती है।
- तुलसी को औषधि के रूप में प्रयोग करने से पूर्व चिकित्सक की सलाह अवश्य लेनी चाहिए।
- गर्भवती स्त्रियाँ एवं दुग्धपान करने वाली माताओं को तुलसी का प्रयोग योग्य चिकित्सक की सलाह के पश्चात ही करना चाहिए।
- तुलसी के सेवन से रक्त शर्करा काफी कम भी हो सकती है। अतः इसका सेवन करते समय अपनी रक्त शर्करा की भी निगरानी करते रहना चाहिए।

तुलसी की उन्नत खेती

तुलसी की खेती के लिए उष्ण कटिबंधीय तथा उपोष्ण क्षेत्रों की जलवायु उपयुक्त होती है। इसकी खेती के लिए अच्छी उर्वरा शक्ति वाली मृदा उपयुक्त होती है जिसमें जल निकास की उचित सुविधा होनी चाहिए। इसके पौधों को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता होती है, परंतु अधिक पानी देने से बचना चाहिए। इसके पौधों को सूरज के सीधे नीचे उगाने से लेकर आंशिक छाएदार वाले स्थानों पर उगाया जा सकता है। तुलसी की खेती के लिए 20–30 डिग्री सेन्टीग्रेड अथवा 68–86 डिग्री फारेनहाइट का तापमान उचित होता है। सीआईएम सौम्या, सीआईएम शारदा, सीआईएम सुरभि तथा सीआईएम स्निग्धा इसकी प्रमुख किस्में हैं। उत्तर एवं दक्षिण भारत में इसकी बुवाई फरवरी के मध्य से सितंबर के अंत तक तथा उत्तर भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में इसको खरीफ मौसम में की जा सकती है। व्यावसायिक खेती के लिए पहले इसकी नर्सरी लगाकर 6 सप्ताह बाद में 10–15 सें.मी. की पौध को मुख्य खेत में रोपित करना चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए नर्सरी लगाने के लिए 500 ग्राम बीज पर्याप्त होता है। खेत की

तैयारी करते समय 2–3 जुताई पर्याप्त होती हैं। दूसरी तथा तीसरी जुताई से पूर्व खेत में 10–15 टन गोबर की सदी खाद प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग कर लेना चाहिए। इसकी कटाई छटाई नियमित रूप से करते रहने से इसकी वृद्धि झाड़ी के रूप में हो जाती हैं। तुलसी को 120–60–40 कि.ग्रा./हे. नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की आधी तथा फास्फोरस व पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा को बुवाई से पूर्व तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा को दो भागों में प्रथम एवं द्वितीय कटाई के बाद प्रयोग करना चाहिए। तुलसी–आलू–मेंथा, तुलसी–आलू, तुलसी–मेंथा, तुलसी–सरसों–मेंथा, तुलसी–मटर–मेंथा, तुलसी–गेहू–मेंथा, तुलसी–कैमोमाइल–मेंथा जैसी फसल प्रणालियाँ तुलसी की खेती के लिए संस्तुत की गई हैं। रोपाई के एक महीने बाद पहली तथा उसके एक माह बाद दूसरी निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। पहली कटाई रोपाई के 90–95 दिन बाद तथा उसके बाद की कटाई 65–75 दिनों बाद की जानी चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्र में औसतन 200 क्विंटल उपज प्राप्त हो जाती है। इस उपज से 90–100 कि.ग्रा./हे. एसेंशियल ऑइल प्राप्त हो जाता है। तुलसी की खेती में 40,000–60,000 रुपए प्रति हेक्टेयर की लागत आती है तथा इससे 40,000–60,000 रुपए प्रति हेक्टेयर का शुद्ध लाभ प्राप्त हो जाता है।

तुलसी के बाजार की प्रवृत्ति

आज घरेलू तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजार में तुलसी तथा इसके उत्पादों की बहुत मांग है तथा समय के साथ दिन–प्रतिदिन यह और बढ़ती जा रही है। वर्तमान में तुलसी का बाजार 1.2 बिलियन अमेरिकन डॉलर का है। जो प्रतिवर्ष 12.4 प्रतिशत की वार्षिक चक्रवृद्धि दर से बढ़ रहा है। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2025 तक तुलसी के बाजार का आकार डेढ़ बिलियन डॉलर तक पहुँचने की आशा है। भारत में उत्तर प्रदेश में पतंजलि आयुर्वेद, हिमालया ड्रग कंपनी, डाबर इंडिया तथा इमामी लिमिटेड; पंजाब में पंजाब एग्रो इंडस्ट्रीज तथा पंजाब हर्बल्स तथा हरियाणा में हरियाणा एग्रो इंडस्ट्रीज कार्पोरेशन तथा श्री कृष्णा हर्बल तुलसी के बाजार के प्रमुख खिलाड़ी हैं।

- जड़ी बूटियों द्वारा विभिन्न रोगों के उपचार की घरेलू तथा परंपरागत चिकित्सा पद्धति में तुलसी का बहुत अधिक महत्व है।
- बगैर किसी विशेष साइड एफेक्ट के कारण जड़ी–बूटियों वाली औषधियाँ आज सम्पूर्ण विश्व में अत्यंत लोकप्रिय हो रही हैं।
- आज भारत में ही नहीं, विश्व के अनेक देशों में आयुर्वेद की लोकप्रियता बढ़ रही है।
- आज सम्पूर्ण विश्व के लोग अपने स्वास्थ्य के प्रति पहले की अपेक्षा अधिक जागरूक हैं।
- ऑन–लाइन मार्केटिंग तथा ई–कॉमर्स की लोकप्रियता बढ़ने से भी बाजार में तुलसी तथा इसके उत्पादों की मांग बढ़ रही है।

अंतर्राष्ट्रीय एवं घरेलू बाजारों में उभरते नए अवसर

- संयुक्त राज्य अमेरिका तथा चीन जैसे देशों में तुलसी की बहुत मांग होने के कारण इन देशों में तुलसी के निर्यात के बहुत से अवसर हैं।
- कई फार्मास्युटिकल्स कंपनियों के साथ सहयोग की अपार संभावनाएं हैं।
- तुलसी आधारित नए उत्पादों के विकास की भी अनगिनत संभावनाएं हैं।
- विभिन्न संस्थानों में तुलसी के नए उत्पादों पर क्लीनिकल परीक्षण किए जा रहे हैं।
- आजकल तुलसी के उत्पादों के मानकीकरण पर नए शोध हो रहे हैं।
- तुलसी के बायोएक्टिव यौगिकों पर नए अध्ययन किए जा रहे हैं।
- तुलसी आधारित नैनोटेक्नोलौजी का विकास भी किया जा रहा है।
- भारत में तुलसी पर भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर), वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर), आयुर्वेदिक राष्ट्रीय संस्थान (एनआईए) तथा आयुर्वेद तथा केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद जैसी अग्रणी शोध संस्थाएं कार्य कर रही हैं।

इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि विश्व भर में तुलसी के बढ़ते महत्व को देखते हुए, तुलसी की खेती को और भी लोकप्रिय करने की आवश्यकता है। किसान भाई तुलसी की खेती करके भरपूर मुनाफा कमा सकते हैं।

राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं कोष

रजनी चन्द्रन, उत्तम कुमार सरकार, राजीव कुमार सिंह एवं अमित सिंह बिष्ट
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ को राष्ट्रीय जैव विविधता प्राधिकरण (एनबीए), भारत सरकार द्वारा जैव विविधता अधिनियम, 2002 की धारा 39 के तहत मछली संसाधनों के हस्तांतरण के लिए नोडल रिपॉजिटरी के रूप में नामित किया गया है। संस्थान द्वारा इस अधिदेश को कार्यान्वित करने के लिए राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं कोष की स्थापना की गयी। इस उल्लेखनीय सुविधा की आधारशिला 12 अगस्त, 2012 को डॉ. एस. अय्यप्पन, तत्कालीन सचिव, डेयर और भाकृअनुप के महानिदेशक के द्वारा डॉ. बी. मीनाकुमारी, तत्कालीन उप महानिदेशक (मात्स्यिकी विज्ञान) की उपस्थिति में रखी गई थी। अपनी स्थापना के बाद से, भाकृअनुप–रा.म.आनु. सं. ब्यूरो ने वाउचर, ऊतक, डीएनए, बैक्टीरिया, सेल लाइन और मछली के मिल्ट सहित विविध संग्रहों को समेकित करने का काम किया है, जिससे शोधकर्ताओं को बहुमूल्य संसाधन उपलब्ध हुए हैं और हितधारकों के लिए व्यापक पहुँच सुनिश्चित हुई है। संग्रहालय में मीठे पानी, समुद्री और खारे वातावरण से फिनफिश और शेलफिश वाउचर नमूने हैं, जो छात्रों, शिक्षकों, वैज्ञानिकों और आम जनता के लिए एक शैक्षिक और शोध संसाधन के रूप में काम करते हैं। इसमें मछली के कशेरुकाओं की संख्या, फिन किरणों और अन्य अस्थि संबंधी विशेषताओं के विस्तृत अध्ययन के लिए रेडियोग्राफिक सुविधा भी है। इस प्रतिष्ठित भवन का उद्घाटन 14 अप्रैल, 2023 को डॉ. हिमांशु पाठक, सचिव, डेयर व महानिदेशक, भाकृअनुप ने डॉ. जे. के. जेना, उप महानिदेशक (मात्स्यिकी विज्ञान) और डॉ. उत्तम कुमार सरकार, निदेशक, भाकृअनुप–रा.म.आनु.सं. ब्यूरो की उपस्थिति में किया।

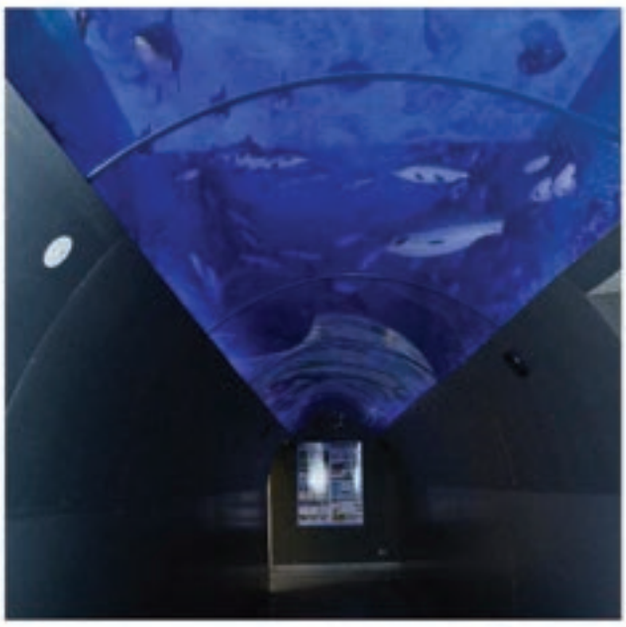

जलीय जीवन व्याख्या केंद्र

जलीय जीवन व्याख्या केंद्र भारत की नदियों और जलधाराओं सहित मछली प्रजातियों और जलीय संसाधनों की समृद्ध विविधता के बारे में जनता को शिक्षित करने के लिए समर्पित है। मुख्य आकर्षणों में मत्स्यावतार की एक मूर्ति, एक कृत्रिम सुरंग, व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण मछली प्रजातियों के पैमाने के मॉडल और देश भर के 21 राज्यों की राज्य मछलियों की प्रतिकृतियां शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, संधारणीय मछली पकड़ने की प्रथाओं पर शैक्षिक वीडियो की विशेषता वाले इंटरैक्टिव डिस्प्ले पैनल आगंतुकों के लिए एक आकर्षक और जानकारीपूर्ण अनुभव प्रदान करते हैं।

सुविधाएँ

राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं कोष वाउचर, ऊतक, डीएनए नमूने, बैक्टीरिया, सेल लाइन और मछली के मिल्ट सहित विविध संग्रहों को एक साथ लाता है, जो शोधकर्ताओं के लिए मूल्यवान संसाधन प्रदान करता है और हितधारकों के लाभ के लिए उनकी व्यापक पहुँच सुनिश्चित करता है। संग्रहालय मीठे पानी, समुद्री और खारे पानी के वातावरण से फिनफिश और शेलफिश वाउचर नमूनों को प्रदर्शित करता है, जो छात्रों, शिक्षकों, वैज्ञानिकों और आम जनता के लिए अनुसंधान और शिक्षा के लिए एक संसाधन के रूप में कार्य करता है। इसके अतिरिक्त, यह मछली के कशेरुकाओं की संख्या, फिन किरणों और अन्य अस्थि संबंधी विशेषताओं का विस्तृत अध्ययन करने में सक्षम बनाने के लिए रेडियोग्राफ़िक सुविधा से सुसज्जित है।

यह सुविधा मछली के वैज्ञानिक अध्ययन में अनुसंधान करने और हर पहलू का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने में मदद करेगी। इस सुविधा से अनुसंधान विद्वानों, छात्रों और आम जनता को लाभ होगा क्योंकि मछली के अवलोकन से मछली की आकृति विज्ञान और जैव विविधता को समझने में सुविधा होगी। रखे गए नमूनों का उपयोग शैक्षिक और अनुसंधान उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है। आईसीएआर–एनबीफजीआर का उद्देश्य भारत के सभी फिनफिश और शेलफिश संसाधनों के वाउचर नमूने रखना है, जिसके लिए हम संकाय, छात्रों और अन्य शोधकर्ताओं को अपना वाउचर जमा करने के लिए आमंत्रित करते हैं।

राष्ट्रीय मत्स्य संग्रहालय एवं कोष को शोध विद्वानों, छात्रों और आम जनता को मछलियों को देखने और मछली की आकृति विज्ञान और जैव विविधता के बारे में उनकी जानकारी में वृद्धि के अवसर प्रदान करके लाभ पहुँचाने के लिए डिजाइन किया गया है। संरक्षित नमूने शैक्षिक और शोध दोनों उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं। भाकृअनुप–रा.म.आनु. सं. ब्यूरो का लक्ष्य भारत में सभी फिनफिश और शेलफिश संसाधनों के वाउचर नमूनों को क्यूरेट करना है। संकाय, छात्रों और शोधकर्ताओं को इस पहल में अपने वाउचर नमूनों का योगदान करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रयास के माध्यम से, भाकृअनुप–रा.म.आनु.सं. ब्यूरो भारत के मत्स्य अनुसंधान को वैश्विक मंच पर स्थापित करने के लिए तत्पर है और सार्वजनिक जागरूकता को बढ़ावा देकर प्राथमिकता वाली प्रजातियों के सतत संरक्षण और उपयोग को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है।

गंगा एक्वेरियम

मोनिका गुप्ता, राघवेंद्र सिंह, राजीव कुमार सिंह, देवनारायण एवं उत्तम कुमार सरकार

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

सार्वजनिक एक्वेरियम एक ऐसी इमारत है जहाँ जलीय जीव, मछलियाँ अथवा जलीय पौधो का प्रदर्शन, अध्ययन तथा संरक्षण किया जाता है। सार्वजनिक एक्वेरियम को आम जनता से जोड़ने तथा जनमानस को आकर्षित करने के लिए एक्वेरियम में विभिन्न प्रकार की सजावटी मछलियों के साथ उनके वास्तविक पर्यावरण के अनुरूप सुंदर रूप दिया जाता है। आधुनिक तकनीकी के दौर में लोगों को पर्यावरण और मछली की दुनिया से जोड़ने के लिए सार्वजनिक एक्वेरियम या सजावटी मछली पालन एक बहुत अच्छा विकल्प है जिसका आकर्षक स्वरूप लोगों को पर्यावरण से जोड़ने की क्षमता रखता है। उत्तर भारत में स्थित उत्तर प्रदेश की राजधानी, नवाबों के शहर लखनऊ में एक सार्वजनिक एक्वेरियम जो भारत के सबसे खूबसूरत सार्वजनिक एक्वेरियम गैलरियों में से एक है जिसकी स्थापना भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ में 19 नवंबर 2010 को डॉ. एस. अय्यप्पन, सचिव, डेयर, भारत सरकार और महानिदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा की गयी। वातानुकूलित गैलरी में 800–1600 लीटर क्षमता के कुल 48 एक्वेरिया रखे गए हैं एक्वेरियम के प्रवेश द्वार पर स्थित जलपरियों की थीम पर आधारित एक गोल आकृति का फाउंटेनयुक्त आरएऐस टँक आगंतुकों के लिए विशेष आकर्षण का केंद्र है इसमें जापानी कोई कार्प, मीठे पानी की शार्क तथा कछुए की विभिन्न प्रजातियाँ पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करती है।

गंगा एक्वेरियम का उद्देश्य

मनोरंजनः मनोरंजन के साथ–साथ जलीय जीवन और पर्यावरण के बारे में लोगों में रुचि पैदा करने के लिए।

संरक्षणः जलीय जैवसंसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता को पूरा करता है।

मछली विविधता और जागरूकता के बारे में ज्ञान वृद्धिः लोगों के बीच जलीय जीवन और पर्यावरण की समझ में वृद्धि और देश के जलीय आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता के लिए व्यापक जागरूकता पैदा करना।

गंगा एक्वेरियम में मत्स्य विविधता

गंगा एक्वेरियम में भारतीय तथा अन्य देशों की मछलियों सहित 100 से अधिक अद्भुत मछली प्रजातियों के साथ प्रदर्शित किया गया है। मछलियों के एक्वेरियम के साथ में लगे डिस्प्ले में सभी मछलियों से संबन्धित जानकारी भी प्रदर्शित की गयी है। जिससे प्रत्येक मछली के जीव विज्ञान, प्रजनन उसके वातावरण के बारे में आगंतुक जानकारी प्राप्त कर सकें।

सजावटी विदेशी मछलियाँ: चिचलिड, फ्लावर हॉर्न (फेंगसुई), पाकु, एन्जिल्स, डॉलर फिश, घोस्टफिश, पैरट फिश, गौरामी, सिल्वर शार्क, टिनफ़ोइल बार्ब्स, टाइगर बार्ब्स, रेडटेल शार्क, रेडफ़िन शार्क, ऑस्कर, डिस्कस, सेवरम, विभिन्न प्रकार की जापानी कोई कार्प तथा गोल्ड फिश आदि।

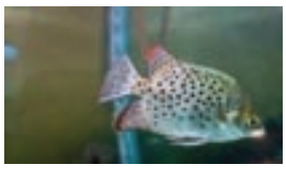

भारतीय आलंकारिक मछलियाँ: *पुंटियस डेनिसोनी, इट्रोप्लस सुराटेन्सिस, ओस्टिओब्रामा ब्लेंगरी, टोर पुटिटोरा, क्लैरियस मांगुर, चन्ना, चिताला, कालबासु, पाबदा,* प्रमुख स्वदेशी मछली खाने वाली प्रमुख कार्प्स (कतला, रोहू, मृगल), सौल, कैटफिश (बटरफ़िश, रीटा, मागुर, सिंघी), मीठे पानी की ईल, हिमालय तथा ठंडे प्रदेशों में मिलने वाली माहसीर तथा मीठे पानी में रहने वाली स्थानीय झींगा मछली आदि।

समुद्री मछलियाँ: क्लाउनफ़िश (जिसे बच्चे फ़ाइंडिंग निम्मो के नाम से पहचानते हैं), एनीमोन, स्टारफ़िश, लायन फिश, विभिन्न प्रकार की डैमसेल और रेशेस फिश प्रमुख हैं।

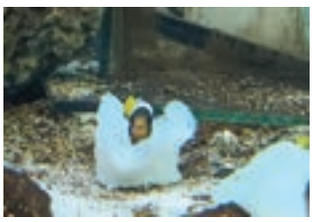
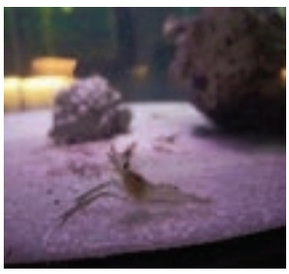

अभी तक स्कूली बच्चों, विश्वविद्यालय के छात्रों और अन्य पर्यटकों सहित लगभग 95000 आगंतुकों ने गंगा एक्वेरियम का दौरा किया और पानी के भीतर जीवन और उनके पारिस्थितिक तंत्र के बारे में जानकारी प्राप्त की। कृषि जगत और मात्स्यिकी जगत के कई गणमान्य व्यक्तियों ने गंगा एक्वेरियम का दौरा किया।

संस्थान द्वारा प्रकाशित महत्वपूर्ण हिंदी प्रकाशन

मत्स्य संरक्षण विज्ञान में नई दिशाएँ

उत्तम कुमार सरकार, राजीव कुमार सिंह, ललित कुमार त्यागी, ताराचन्द कुमावत, सुभाष चन्द्र एवं अखिलेश कुमार मिश्र

भारत के जलीय आनुवंशिक संसाधनों का सतत संरक्षण और प्रबंधनः नवीन दृष्टिकोण

उत्तम कुमार सरकार, ललित कुमार त्यागी, ताराचन्द कुमावत एवं सुभाष चन्द्र

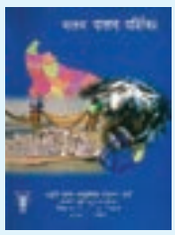

मत्स्य पालन दर्शिका

वजीर एस. लाकड़ा एवं ए.के. सिंह

उत्तर पर्वतीय राज्यों की मत्स्य विविधताः संरक्षण एवं प्रबंधन

वजीर एस. लाकड़ा एवं एल. के. त्यागी

विदेशी खाद्य मछलियाँः अभिशाप या वरदान

ए. के. सिंह

आधुनिक जलकृषि एवं मत्स्य संरक्षण

प्रमोद कुमार वार्ष्णेय, कुलदीप के. लाल, एस. रायजादा, अखिलेश कुमार यादव एवं जे. के. जेना

मीठाजल मत्स्य विविधताः उत्तरी भारत के पर्वतीय राज्यों में टिकाऊ मात्स्यिकी हेतु संरक्षण एवं प्रबंधन

ललित कुमार त्यागी

प्रजनकों के आनुवंशिक उन्नयन हेतु मत्स्य मिल्ट हिम परिरक्षण

सुल्लिप कुमार माझी एवं संतोष कुमार

जलकृषि, मत्स्य संसाधन प्रबंधन एवं संरक्षण

ललित कुमार त्यागी, शरद कुमार सिंह, अखिलेश कुमार यादव, अमित सिंह बिष्ट एवं संजय कुमार सिंह

मत्स्य संरक्षण तथा आय सृजन हेतु उन्नत मत्स्य पालन तकनीकियाँः एक मार्गदर्शिका

ललित कुमार त्यागी, उत्तम कुमार सरकार, मोनिका गुप्ता, राघवेन्द्र सिंह, आदित्य कुमार एवं ताराचन्द कुमावत

अनुसूचित जाति कृषकों हेतु मात्स्यिकी संरक्षण एवं बढ़ोत्तरी में प्रगति पर क्षमता विकास

शरद कुमार सिंह, ललित कुमार त्यागी, ताराचन्द कुमावत एवं संजय कुमार सिंह

भाकृअनुप–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो
कैनाल रिंग रोड, डाकघर–दिलकुशा, लखनऊ–226 002, उत्तर प्रदेश, भारत
फोनः 0522-2441735, 2440145
ईमेलः director.nbfgr@icar.gov.in
वैबसाइटः https://www.nbfgr.res.in/

army printing press
www.armyprintingpress.com
Lucknow (0522) 6565333